गुप्तावतार दुर्लभ तन्त्रमाला

गुप्तावतार बाबा श्री

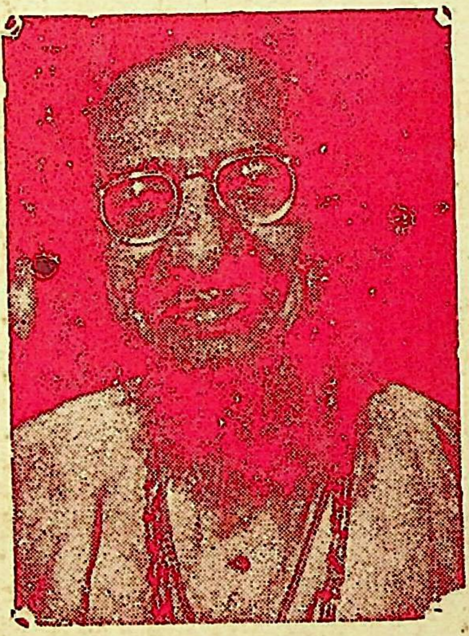

[२]

संक्षिप्तं तान्त्रिकमाह्निकम्

(काली-तारा-भुवनेश्वरी-त्रिपुरसुन्दरी-पूजनपद्धतयः)

सम्पादक

श्री भद्रशील शर्मा

संक्षिप्तं तान्त्रिकमाह्निकम्

(काली-तारा-भुवनेश्वरी-त्रिपुरसुन्दरी-पूजनपद्धतयः)

सम्पादक

श्री भद्रशील शर्मा

प्रकाशक

कल्याण मन्दिर, अलोपीबाग मार्ग, प्रयाग—६

[मूल्य रु० ८=५०

श्रावण शुक्लाष्टमी सं० २०२३

प्रथम संस्करण ३००]

विषय प्रवेश

साधारण विधि ...	१-१७	विशेषार्घादि-स्थापन	२१
प्रातः श्रीगुरुध्यानादि	१	अन्तर्यजन	२२
स्नान	५	ध्यान-आवाहनादि	२५
तान्त्रिक सन्ध्यावन्दन	५	महाकाल भैरवध्यानादि	२७
द्वारपूजा	६	आवरण-पूजन	३२
भूतशुद्धि	१२	स्तुति-प्रणामादि	३६
तत्वशुद्धि	१३	मालापूजन, जपादि	३८
अन्तर्मातृकान्यास	१४	होम-विधि	३६
बाह्य मातृकान्यास	१६	न्यास	४०
श्यामार्चन-चन्द्रिका ...	१८-४७	तारार्चन-चन्द्रिका ...	४८-७४
काम्याचमनादि	१८	भूतशुद्धि	४८
पीठपूजा	२०	काम्याचमनादि	४८

पीठपूजा ... ५०

विशेषार्घादि-स्थापन ... ५२

ध्यानावाहनादि ... ५३

आवरण-पूजन ... ५६

माला-पूजन, जपादि ... ६३

होम-विधि ... ६४

न्यास ... ६६

भुवनेश्वरी-सपर्या-विधि ... ७५-९२

विनियोगादि ... ७५

विशेषार्घादि-स्थापन ... ७६

पीठपूजा ... ७७

ध्यान-पूजादि ... ७८

आवरण-पूजा ... ८३

माला-पूजनादि ... ८६

होम-विधि ... ८७

ऐं ह्रीं श्रीं' विधान ... ८९

'ऐं ह्रीं ऐं' विधान ...

'आं ह्रीं क्रों' विधान ... ९१

पञ्चशुद्धि-निर्देश ... ९१

त्रिपुरसुन्दरी-सपर्या-विधि ... ९३-१३४

द्वारपूजा ... ९३

विनियोग ... ९४

ऋष्यादि न्यास ... ९४

वशिन्यादि न्यास ... ९४

करन्यास, अङ्गन्यास ... ९४

श्रीयन्त्र-निर्माण ... ९५

ध्यान-पूजादि ... ९६

पात्र-स्थापन ... ९९

पीठपूजा ... १००

प्राणप्रतिष्ठा ... १०१

षोडशोपचार-पूजनादि ... १०१९

आवरणपूजा ... ४०१

कवच-पाठ, जपादि ११३
होमविधि ११४
बलि-विधान ११६
विसर्जन ... ११७
निवृत्यादि-न्यास, आसन-न्यास ११८
मुद्रा-लक्षण १२९
नवयोनि-न्यास, गोलक-न्यास ११९
पीठ-न्यास ११९, १२४
तत्त्वन्यास, पञ्चदशी-न्यास, षोडशी-न्यास १२०
षोढा न्यास १२१
त्रिपुरा न्यास, कामरति न्यास १२६
षोडशनित्या न्यास १२७
प्रकटयोगिनी न्यास १२८
आयुधन्यास १२९

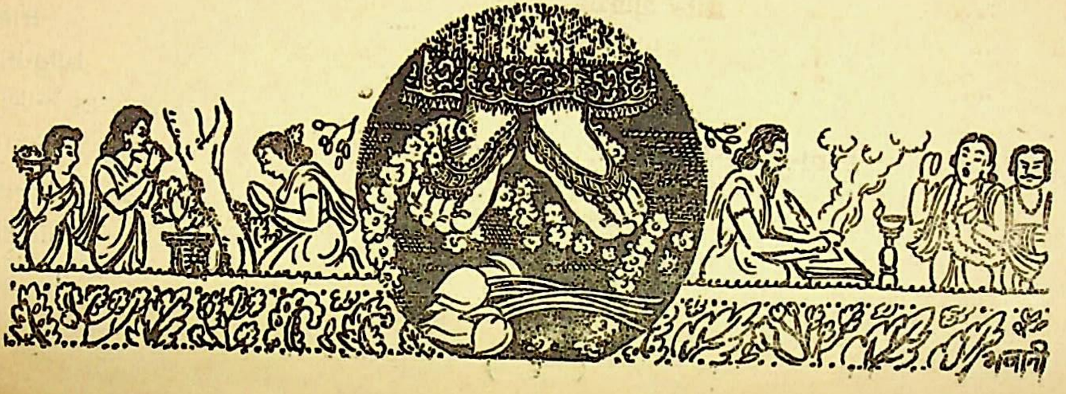

परिचय

प्रस्तुत पुस्तक का सङ्कलन स्वर्गीय दरभंगा-नरेश (श्रीमन्महाराजाधिराज श्रोत्रिय-द्विजराज मिथिलालङ्कार निःशङ्कशङ्कर शतशील श्री डा० रमेश्वरसिंह शर्म बहादुर) के निर्देशानुसार पण्डितवर महामहोपाध्याय राजनाथ मिश्र द्वारा किया गया था। इस पुस्तक में दश महाविद्याओं में से भगवती काली, तारा, भुवनेश्वरी और त्रिपुरसुन्दरी की संक्षिप्त पूजन-पद्धतियाँ संग्रहीत हैं। इन पद्धतियों के सहारे साधारण संस्कृत जाननेवाले उपासक अपने इष्टदेवता का नित्यार्चन सहज ही सम्पन्न कर सकते हैं। आशा है कि इस पुस्तक के पुनः प्रकाशन से उक्त महाविद्याओं के साधक लाभान्वित होंगे। यही हमारी हार्दिक कामना है।

पुस्तक के प्रारम्भ में सत्रह पृष्ठों में 'साधारण विधि' दी गई है, जिसमें प्रातःकृत्य, स्नान, तान्त्रिक सन्ध्यावन्दन, तर्पण, द्वारपूजा, भूतशुद्धि, प्राणप्रतिष्ठा, तत्त्वशुद्धि, अन्तर्मातृकान्यास, बाह्य मातृकान्यास आदि वे प्रमुख क्रियायें सङ्कलित हैं, जो सभी साधकों के लिए अनिवार्य हैं।

'साधारण विधि' के बाद लगभग तीस पृष्ठों में 'श्यामार्चन चन्द्रिका' (भगवती श्यामा या काली की अर्चन-विधि) दी गई है। इसमें द्वारपूजा तक का अर्चन पूर्वोक्त साधारण विधि के अनुसार करने का निर्देश देकर पूजा-गृह में प्रवेश के समय भैरव से अनुमति लेने का जो विधान है, उसे बताया गया है।

तदनन्तर काम्य आचमन, दक्षिण काली के मन्त्र के विनियोग, ऋष्यादिन्यास, षडङ्गन्यास, करन्यास, पीठपूजा, विशेषार्घ-स्थापन, अन्य पात्र-स्थापन, अन्तर्यजन, ध्यान, बाह्यपूजन, महाकालभैरव का ध्यान-पूजनादि, आवरण-पूजन, स्तुति-प्रणामादि, जप, होम, न्यास (श्रीकण्ठमातृका, षोढा, गुह्यषोढा, तत्व, बीज, वज्रपञ्जर) आदि विषय दिये गये हैं।

'श्यामार्चन चन्द्रिका' के बाद 'तारार्चन चन्द्रिका' लगभग सत्ताइस पृष्ठों में संगृहीत है। इसके प्रारम्भ में भूतशुद्धि का विशेष प्रकार बताया गया है। तदनन्तर तारा का काम्य आचमन, विनियोग, ऋष्यादिन्यास, करन्यास, षडङ्गन्यास, पीठपूजा, विशेषार्घ्य-स्थापन, अन्य पात्र-स्थापन, ध्यान, प्राणप्रतिष्ठा, आवाहनादि पूजन, आवरण-पूजन, माला-पूजन, जपादि-विधान, होम-विधि, न्यास आदि विषय लिखे गये हैं।

'तारार्चन चन्द्रिका' के अनन्तर लगभग अठारह पृष्ठों में 'श्रीभुवनेश्वरी सपर्या-विधिः' दी गई है।- विनियोगादि से इसका प्रारम्भ हुआ है और विशेषार्घ्य-स्थापन, पीठपूजा, ध्यान, पूजा, माला-पूजनादि, होमा विधि आदि विषय देकर भगवती श्रीभुवनेश्वरी के तीन त्र्यक्षर मन्त्रों (ऐं ह्रीं श्रीं, ऐं ह्रीं ऐं, आं ह्रीं क्रों) क विधान दिया गया है। अन्त में पञ्चशुद्धियों का निर्देश किया गया है।

शाक्तों का अर्चन पञ्चशुद्धयात्मक है। यह उसकी एक प्रमुख विशेषता है। किन्तु ये पाँच शुद्धियाँ कौन-कौन सी हैं, इसका ज्ञान बहुतों को नहीं है। १ आत्मशुद्धि, २ स्थानशुद्धि, ३ द्रव्यशुद्धि, ४ मन्त्रशुद्धि, और ५ देवशुद्धि—ये ही उक्त पाँच शुद्धियाँ हैं। इन्हें सम्पादित किये बिना जो देवार्चन किया जाता है, वह विधिवत् नहीं माना गया है।

अच्छी तरह स्नान, भूतशुद्धि, प्राणायाम और षडङ्गादि न्यासों के करने से 'आत्मशुद्धि' होती है।

सम्मार्जन, अनुलेपन, मण्डप, धूप-दीप-पुष्पमाला, पञ्चवर्णों की मिट्टी से सजावट आदि के द्वारा 'स्थानशुद्धि' होती है।

मूलमन्त्र, अस्त्रमन्त्र आदि से सविधि प्रोक्षण और धेनुमुद्रादि के दिखाने से 'द्रव्यशुद्धि' होती है।

मातृकावर्णों से मूलमन्त्र के अक्षरों को सम्पुटित कर क्रमशः उनकी द्विरावृत्ति करने से 'मन्त्रशुद्धि' होती है।

पीठ में प्रतिष्ठा कर सकलीकरण कर मूलमन्त्र से धूप, दीप, माला आदि प्रदान कर तीन बार प्रोक्षण करने से 'देवशुद्धि' होती है।

'भुवनेश्वरी सपर्या विधि' के बाद लगभग बयालिस पृष्ठों में 'त्रिपुरसुन्दरी सपर्या विधि' सङ्कलित की गई है। इस पूजा-विधि में द्वारपूजा से लेकर विसर्जन तक के सभी प्रमुख कर्मों का वर्णन किया गया है अन्त में मुख्य-मुख्य न्यास देकर मुद्राओं के लक्षण दिये गये हैं।

सबसे पहले १ सर्वसंक्षोभिणी, २ सर्वद्राविणी, ३ आकर्षिणी, ४ सर्वावेशिनी, ५ सर्वोन्मादिनी, ६ महाङ्कुशा, ७ खेचरी, ८ वीज और ९ योनि इन नौ मुद्राओं के लक्षण इनके वीजाक्षरों सहित उल्लिखित हैं।

इसके बाद पूजोपयोगी निम्न तीन मुद्राओं का वर्णन किया गया है—१ अंकुश, २ कुम्भ, ३ धेनु।

तदनन्तर उपचार-मुद्राएँ वर्णित हुई हैं, जो साधकों के लिए अत्युपयोगी हैं।

इस प्रकार 'संक्षिप्त तान्त्रिकमाह्निकम्' में नित्यार्चन की सभी महत्त्वपूर्ण बातों का समावेश किया गया है और इसके लिये सारा साधक-समाज इसके पूर्वोक्त सङ्कलन-कर्ता तथा प्रकाशक-वितरक महानुभावों का चिरकृतज्ञ रहेगा, इसमें सन्देह नहीं।

अन्त में हम यहाँ पटना के श्री श्यामाश्रम की संस्थापिका प्रातःस्मरणीया परम पूजनीया श्री १००८ श्री माई जी के श्रीचरणों का सभक्ति अभिनन्दन करते हैं, जिनके शुभाशीर्वाद से इस महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ का पुनरुद्धार सम्भव हो सका। बन्धुवर श्री गोविन्दशरणजी उपाध्याय 'मञ्जुल', एम० ए० के भी हम हृदय से आभारी हैं, जिनके कृपालु सहयोग से ही यह पुस्तक हमें सुलभ हो सकी। उपाध्यायजी को यह पुस्तक दरभङ्गा राज्य के स्वर्गीय राजगुरु पण्डित बलदेव मिश्र से प्राप्त हुई थी। अतः उन्हें भी हम यहाँ अपनी हार्दिक श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हैं।

मूल पुस्तक में पूजा-पद्धतियों के साथ ही तत्तद् देवताओं के कवच, सहस्रनाम आदि स्तोत्र भी यथास्थान सङ्कलित किये गये हैं। इस संस्करण में हमने उन्हें उद्धृत नहीं किया है, क्योंकि वे अन्य प्रकाशित पुस्तकों (श्रीकाली-स्तव-मञ्जरी, श्रीतारा-स्तव-मञ्जरी, श्रीभुवनेश्वरी-स्तव-मञ्जरी) से सुलभ हैं। हमें विश्वास है कि इस प्रकाशन से साधक-वर्ग को बहुत कुछ लाभ पहुँचेगा और इसी में हमारे प्रयास की सार्थकता है।

—भद्रशील शर्मा

श्रीः पातु

श्री गणेशाय नमः

संक्षिप्तं तान्त्रिकमाह्निकम्

साधारण विधिः

यस्या निदिध्यास-वशान्मुमुक्षोर्हरस्य वामार्द्धमभूत्सुयोषित् ।
कीटोऽपि भृङ्गाध्यसनेन भृङ्गो यथा तथा तामनिशं स्मरामि ॥१॥

अथ संक्षिप्तं तान्त्रिकमाह्निकम्। तत्र साधको ब्राह्मे मुहुर्ते उत्थाय रात्रिवासस्त्यक्त्वा शुचिवस्त्रं परिधाय बद्ध-स्वस्तिकासनः, शिरस्थ-सहस्रदलकमल-कर्णिकायां परमशिवरूपं श्री गुरुं ध्यायेद्यथा—

स्वमूर्द्धनि सहस्रार-पङ्कजासीनमव्ययम् ।
शुद्धस्फटिक-सङ्काशं शरच्चन्द्रनिभाननम् ॥
प्रफुल्लेन्दीवराकार - नेत्रद्वय-विराजितम् ।
शुक्लाम्बरधरं शुक्लगन्धमाल्यानुलेपनम् ॥

विभूषितं श्वेतमाल्यैर्वराभयकरद्वयम् ।
वामाङ्गतया शक्त्या सहितं स्वप्रकाशया ॥
सुरक्तोत्पलधारिण्या ज्ञानैर्मुदित-मानसम् ।
शिवेनैक्यं समुन्नीय ध्यायेत्परगुरुं धिया ॥

श्रीगुरु-पक्षे तु—

सहस्रारे महापद्मे किञ्जल्कगणशोभिते ।
प्रफुल्लपद्म-पत्राक्षीं घनपीन-पयोधराम् ॥
प्रसन्नवदनां क्षीणमध्यां ध्यायेच्छिवां गुरुम् ।
पद्मराग-समाभासां रक्तवस्त्र-सुशोभिताम् ॥
रक्तकङ्कण-पाणिं च रक्तनूपुर-शोभिताम् ।
स्थलपद्म - प्रतीकाश-पादद्वन्द्व - सुशोभिताम् ॥
शरदिन्दु-प्रतीकाश - रत्नोद्भासित - कुण्डलाम् ।
स्वनाथ-वामभागस्थां वराभय-कराम्बुजाम् ॥

इति ध्यात्वा—

लं पृथ्वीतत्त्वात्मकं गन्धं गुरवे समर्पयामि नमः ।
इति हस्तद्वय-कनिष्ठाङ्गुष्ठ-संयोगात्मक-मुद्रयार्पयेत् ॥१॥
हं आकाशतत्त्वात्मकं पुष्पं गुरवे समर्पयामि नमः ।
इति हस्तद्वयाङ्गुष्ठ-तर्जनी-संयोगात्मक-मुद्रयार्पयेत् ॥२॥
यं वायुतत्त्वात्मकं धूपं गुरवे समर्पयामि नमः ।
इति हस्तद्वयोर्ध्वमुखाङ्गुष्ठ-तर्जनी-संयोगात्मक-मुद्रयार्पयेत्
रं वह्नितत्त्वात्मकं दीपं गुरवे समर्पयामि नमः ।
इति हस्तद्वयाङ्गुष्ठ-मध्यमा-संयोगात्मक-मुद्रयार्पयेत् ॥४॥
वं अमृततत्त्वात्मकं नैवेद्यं श्रीगुरवे समर्पयामि नमः ।
हस्तद्वयानामिकाङ्गुष्ठ - संयोगात्मक - मुद्रयार्पयेत् ॥५॥

ततः 'ऐं' इति गुरुमन्त्रमष्टोत्तरशतं प्रजप्य—

ॐ गुह्यातिगुह्यगोप्ता त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम् ।
सिद्धिर्भवतु मे देव त्वत्प्रसादान्महेश्वर ॥

इति दक्षकरे समर्पयेत् । श्रीगुरु-पक्षे तु—

गुह्यातिगुह्यगोप्त्री त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम् ।
सिद्धिर्भवतु मे देवि त्वत्प्रसादान्महेश्वरि ॥

इति वामकरे समर्पयेत् ।

अखण्डमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम् ।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥
अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जन - शलाकया ।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥

श्रीगुरु-पत्नी तु—

नमस्ते देवदेवेशि नमस्ते हर - पूजिते ।
ब्रह्मविद्या-स्वरूपायै तस्यै नित्यं नमो नमः ॥
अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जनशलाकया ।
यया चक्षुरुन्मीलितं तस्यै नित्यं नमो नमः ॥

इत्यादिना साष्टाङ्गं प्रणमेत् । तदनुज्ञां गृहीत्वा मूलाधारे कुण्डलिनी-रूपां स्वेष्टदेवतां तडित्कोटि-प्रभां विसतन्तु-तनीयसीं प्रसुप्त-भुजगाकार-सार्द्ध-त्रिवलयोपेतां ध्यात्वा 'हूँ' इति चैतन्यं विधाय 'हंसः' इति बीजेनोत्थाप्य सुषुम्नानाडी यथा षट्चक्राणि भेद-यित्वा सहस्रदलकमल-स्थित परमशिवे संयोज्य स्वेष्ट-देवतारूपेण परिणतां परशिवेन सङ्गमय्य ध्यायन् यथाशक्ति प्रजप्य समर्प्य प्रणम्य पुनः कुण्डलिनी-रूपेण परिणतां परशिवान्निःसार्य-तत्सङ्गमामृत-लोली-भूतां सोऽहमिति मूलाधारे समानयेत् ।

प्रकाशमानां प्रथमे प्रयाणे प्रतिप्रयाणेऽप्यमृतायमानां ।
अन्तः पदव्यामनुसञ्चरन्तीमानन्दरूपामबलां प्रपद्ये ॥

इति ध्यात्वा तत्तेजसा परिपूर्णं स्वशरीरं विभाव-येत् । हंसात्मिकां भगवतीं जीवो जपति सर्वदा । हकारेण बहिर्याति सकारेण विशेत्पुनः ॥ अस्याः सम्बोध-मात्रेण जीवन्मुक्तो भवेन्नरः । एकविंशतिसाहस्रं षट्शताधिकमेव च ॥ प्रजपेत्प्रत्यहं धीरो ब्रह्मानन्द-

मयीं पराम् । उत्पत्तिर्जप आरम्भो मृतिरस्य निवेदनमित्यादि सुरेन्द्रसंहितायाम् ।। षट्शतानि गणेशस्य षट्सहस्रं प्रजापतेः । षट्सहस्रं गदापाणेः षट् सहस्रं पिनाकिनः ।। सहस्रमात्मने चैव सहस्रं परमात्मने । सहस्रं गुरवे चैव सङ्कल्पोऽयं यथाविधीति वीरचूडामणौ चोक्तोऽजपाजप उपासनाङ्गतयाऽत्र नित्येषु न पल्लवितः । ततः—

त्रैलोक्यचैतन्यमयीश्वरेशि श्रीपार्वति !
त्वच्चरणाज्ञयैव । प्रातः समुत्थाय तव प्रियार्थं
संसार - यात्रामनुवर्तयिष्ये ।। प्रातः प्रभृति
सायान्तं सायादि प्रातरन्ततः ।। यत्करोमि
जगन्मातस्तदस्तु तव पूजनम् ।।

इति सम्प्रार्थ्य अनुज्ञा जातेति मनसि विभाव्य—

समुद्रमेखले देवि पर्वतस्तनमण्डले ।
विष्णुपत्नि नमस्तुभ्यं पादस्पर्शं क्षमस्व मे ।।

इति क्षमापयित्वा—

जानामि धर्मं न च मे प्रवृत्तिर्जानाम्यधर्मं न च मे निवृत्तिः । कयापि देव्या च हृदिस्थयाऽहं, यथा नियुक्तोस्मि तथा करोमि ।

इति स्मरन् दक्षिणपाद-पुरस्सरमात्मश्वासानुसारतो वा बहिर्महीं नैर्ऋत्यां प्रतीच्यां वा दिशि गत्वा मैत्रप्रसाधनाद्यावश्यकं कृत्वा मृज्जलाभ्यां शौचं विधाय गण्डूषद्वादशकेन मुखशुद्धिं विधाय—

'क्लीं कामदेव सर्वजन-प्रियाय नमः'

इति मन्त्रेण दशधाभिमन्त्रित दन्तधावनेन दन्तान् जिह्वाञ्च संशोध्य गण्डूषादिभिर्मुखं प्रक्षालयेत् ।।

अथ स्नानम् । तच्च निमित्तविशेषाभावे सूर्ये उदिते वैदिकस्नानानन्तरं देवीरूपमात्मानं विभावयन् मूलाभिमन्त्रित-मृत्तिकया अङ्गं विलिप्य सुवर्णरजत-कुशादीन् गृहीत्वा—

ॐ आत्मतत्वाय स्वाहा

इति त्रिराचम्य—

ॐ अद्येत्यादि श्रीअमुकदेवता-प्रीतये स्नानमहङ्करिष्ये।

इति सङ्कल्प्य प्राणायाम-षडङ्गन्यासौ विधाय जले त्रिकोणचक्रं विलिख्य—

ॐ गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति।
नर्मदे सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु॥

इत्यङ्कुशमुद्रया सूर्यमण्डलात्तीर्थमावाह्य 'वं' इति धेनुमुद्रया अमृतीकृत्य 'हूँ' इत्यवगुण्ठ्य 'फट्' इति संरक्ष्य मूलेनैकादशधाभिमन्त्र्य सूर्याभिमुखं द्वादशधा जलं निःक्षिप्य अङ्गुलीभिः सप्त छिद्राण्यवरुध्य तस्मिन्निष्टदेवता-चरणारविन्द-निस्सृतमिति विभाविते जले मूलमुच्चरमाणस्त्रिर्निमज्य देवतां ध्यायन् मूलं यथाशक्ति जपन् उन्मज्य मूलेन त्रिवारं कलशमुद्रयाऽऽत्मानमभिषिञ्चेदिति जल-स्नानम्॥ स्वोपास्य-देवतामाकाशमण्डले ध्यात्वा तत्पाद-पङ्कजान्निर्गत-जलधारया दिव्यया ब्रह्मरन्ध्र-मार्गेण प्रविष्टया प्रक्षालनाद्देहं निष्कलुषं भावयेदिति ध्यानस्नानम्॥ एतच्च जलस्नानाक्षमानाम्। तोयाभावेऽपि असह्यशीतदेशं, तथाकाले च, बन्धने, पलायने, रोगग्रस्तशरीरे चानुष्ठेयम्॥ ततो जलादवतीर्य रक्ते शुक्ले* वा वस्त्रे परिधाय शुचिदेशे समासीनः कृत-वैदिक-सन्ध्यावन्दनस्तान्त्रिक - सन्ध्यावन्दनं कुर्यात्। तद्यथा—

ॐ मणिधरिणि वज्रिणि रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा।

इति शिखां बध्वा पुनस्त्रिराचम्य तिलकं† कृत्वा

---

* मोक्षार्थी रक्तवस्त्रे द्वे, भोगार्थी श्वेतवाससी।

† ब्राह्मणस्योर्ध्वपुण्ड्रं स्यात् क्षत्रियस्य त्रिपुण्ड्रकम्।
वैश्यानामार्द्धचन्द्रं स्याच्छूद्रस्य वर्तुलाकृतीति॥
तिलकं रक्तगन्धेन गोपीचन्दनकेन वा।
देव्यस्त्रं विलिखेद्भाले तारं बीजं ततो हृदि।
शक्तिं मध्यगतां कुर्यात् साधको नरपुङ्गवः॥

षडङ्गानि विन्यस्य पुर-स्थितं जलं धेनुमुद्रया 'वं' इत्यमृतीकृत्य दक्षहस्तेनाच्छाद्य वामकरे कृत्वा दक्षिण-हस्तेनाच्छाद्य 'हं यं वं लं रं' इति शिव-वायु-जल-पृथ्व्यग्निमन्त्रैस्त्रिरभिमन्त्र्य मूलमुच्चरमाणो वाम-हस्ताङ्गुलि-विवर-गलितोद-विन्दुभिस्तत्व-मुद्रया सप्त-कृत्वः शिरोऽभिषिञ्च्य अवशिष्टं जलं दक्षहस्ते कृत्वा तेजोरूपं ध्यात्वा इडयाकृष्य देहान्तः पापं प्रक्षाल्य कृष्णवर्णं तज्जलं पापमयं विभाव्य पिङ्गलया विरेच्य पुरः कल्पित-वज्रशिलायां 'फट्' इति मन्त्रेण ताडये-दित्यघमर्षणम् ॥ ततो हस्तं प्रक्षाल्याचम्य—

ह्रीं हंसः घृणिः सूर्य आदित्य इदमर्घ्यं सूर्याय स्वाहा ।

इति सूर्यायार्घ्यं दत्वा—

ॐ सूर्यमण्डल-मध्यस्थायै अमुकदेवतायै नमः ।

इतीष्टदेवतायै अर्घ्यं दद्यात । श्रीविद्या-विषये तु—

ऐं ह्रीं श्रीं ह्रीं ह्रीं सः मार्तण्डभैरवाय प्रकाश-शक्ति-सहिताय ग्रह-राशि-नक्षत्र-तिथि-योग-करण-परि-वार-सहिताय इदमर्घ्यं स्वाहा ।

तारादौ—

ह्रीं हंसः मार्तण्डभैरवाय प्रकाशशक्ति-सहितायेद-मर्घ्यं स्वाहा ।

इति सूर्यायार्घ्यं दत्वा ताम्रादि-पात्रे रक्तचन्द-नार्कापराजिता-पुष्पादीनि निःक्षिप्य—

मूलं उद्यदादित्य-मण्डल-मध्यवर्तिन्यै नित्यचैतन्यो-दितायै श्रीमदेकजटायै इदमर्घ्यं स्वाहा ।

इति मन्त्रेण । अन्यत्र 'श्रीमदेकजटायै' इत्यस्य स्थाने 'श्रीदक्षिणकालिकायै' इति स्वेष्टदेवतानाम-प्रक्षेपेण तत्तद्देवता-गायत्र्या वा त्रिः सूर्याभिमुखं अर्घ्य-विधिना क्षिपेत । तत्तद्देवता - गायत्रीमष्टोत्तरशतम-शक्तो दशवारमपि प्रजप्य 'गुह्यातिगुह्ये'त्यादिना सम-र्पयेत् । अत्यन्ताशक्ति-दशायां सन्ध्यात्रये इष्टदेवता-ध्यानपुरःसरं यथाशक्तीष्टमन्त्रमपि जपेत् । तत्र कालिका-गायत्री यथा—

कालिकायै विद्महे श्मशानवासिन्यै धीमहि तन्नो घोरे प्रचोदयात ।

इति कुमारीतन्त्रे ॥ भैरवतन्त्रे तु—

क्रीं दक्षिणायै विद्महे हूं चामुण्डायै धीमहि तन्नः काली प्रचोदयात ।

इति । तारागायत्री मालिनी-तन्त्रे—

महोग्रायै विद्महे तारायै धीमहि तन्नो देवी धियो या नः प्रचोदयात् ।

इति ॥ कालिकार्णवे—

ऐं भगवत्येकजटे विद्महे विकटदंष्ट्रे धीमहि तन्नस्तारे प्रचोदयात ।

इति ॥ वीरचूडामणौ—

ऐं एकजटायै विद्महे स्त्रीं नीलसरस्वत्यै धीमहि ह्रीं तारे प्रचोदयात ।

इति ॥ अत्रैच्छिको विकल्प इति निबन्धृणां स्वरसः । मम तु वीरचूडामणिर्नीलसरस्वती-विषयः । कालिकार्णव एकजटा-विषय मालिनीतन्त्रं सर्वासां विषय इति प्रतिभाति । त्रिपुरसुन्दरी-गायत्री यथा—

ऐं त्रिपुरादेव्यै विद्महे क्लीं कामेश्वर्यै धीमहि सौस्तन्नः क्लिन्ना प्रचोदयात ।

इति । भुवनेश्वरी-गायत्री—

ऐं भुवनेश्वरि विद्महे विप्रकर्णायै धीमहि तन्नो देवी प्रचोदयात ।

नारायण्यै विद्महे भुवनेश्वर्यै धीमहि तन्नो देवी प्रचोदयात् ।

इति तन्त्रसारे ।

ह्रीं भुवनेश्वर्यै विद्महे आद्यायै धीमहि तन्नो देवी प्रचोदयात् ।

इति पुरश्चरणार्णवे । अन्या सामप्येवमन्वेष्टव्याः । गायत्री-ध्यानं प्रातः—

उदयादित्यसङ्काशां पुस्तकाक्षकरां स्मरेत् ।
कृष्णाजिनाम्बरां ब्राह्मीं ध्यायेत्तारकिताम्बरे ॥

मध्याह्ने—

श्यामवर्णां चतुर्बाहुं शङ्ख-चक्र-लसत्कराम् ॥
गदापद्मधरां देवीं सूर्यासन - कृताश्रयाम् ॥

सायाह्ने—

वरदां देवीं गायत्रीं संस्मरेद्व बुधः ।
शुक्लां शुक्लाम्बरधरां वृषासन-कृताश्रयाम् ॥
त्रिनेत्रां च वरं पाशं शूलं च नृकरोटिकाम् ।
सूर्यमण्डल-मध्यस्थां ध्यायन् देवीं समभ्यसेत् ॥

इति । त्रिपुरादौ गायत्री - ध्याने विशेषोऽपीति ध्येयम् । अथ तर्पणम् । पूर्वाभिमुखः—

ॐ देवांस्तर्पयामि

उत्तराभिमुखः कण्ठालम्बित-यज्ञोपवीती—

ॐ ऋषींस्तर्पयामि

दक्षिणाभिमुखेऽपसव्यो मोटकादिना—

ॐ पितॄंस्तर्पयामि, ॐ त्रिविधगुरूंस्तर्पयामि, ॐ गुरुं तर्पयामि, ॐ परमगुरुं तर्पयामि, ॐ परापरगुरुं तर्पयामि, ॐ परमेष्ठिगुरुं तर्पयामि ।

मूलमुच्चार्य 'अमुकदेवीं तर्पयामि स्वाहा' इति पञ्चविंशतिधा दशधा त्रिधा वा तर्पयेत् ।

आवरणदेवता वक्ष्यमाणाः प्रत्येकमेकैकाञ्जलिना तर्पयेत् । अशक्तपक्षे—

साङ्ग-सायुध-सवाहन-सपरिवारां मूलं श्रीअमुकदेवीं तर्पयामि स्वाहा।

इति सहैव पूर्वोक्तसंख्यया तर्पयेत् । पुनः पूर्ववत् सूर्याय स्वेष्टदेवतायै चार्घ्यं निवेद्य सूर्यमण्डले देवतां विभाव्य यथाशक्ति मन्त्रं जप्त्वा समर्प्य संहारमुद्रया सूर्यमण्डलाद्देवतां हृदयमानीय तीर्थं नमस्कृत्य पूजासाधन-जलं गृहीत्वा देवतां कीर्तयन् पूजास्थानमागच्छेदिति ।

पूजा चोत्तममध्यमाधम-भेदात् त्रिविधा यदाह फेत्कारिणी तन्त्रे । ॐ शक्तिभिर्मूर्तिभिश्चैव लोकपालैश्च

संयुतः । पीठमन्त्र-क्रमाद्यागो नित्ययागः स उत्तमः । पीठेनैव समस्तेन बहिरावरणान्वितः । मन्त्रपूर्वः कृतो यागो नित्ययागः स मध्यमः । द्रव्यशुद्धिसमायुक्तं तत्तत्सम्पूजनं तथा । वस्त्रालङ्कार-वस्तूनि वर्जयित्वा पृथग्विधम् । अग्निकार्य-विहीनं च कालदेशानुसारतः । उपचारैर्युतं द्रव्यैरधमं पूजनं मतमिति ।

तत्र साधकः पूजागृहद्वारि समागत्य—

ॐ वज्रोदके हूँ फट् स्वाहा

इति मन्त्रेण जलपात्रं वामभागे स्थापयेत् । जलान्तरेण—

ह्रीं फट् स्वाहा

इति मन्त्रेण पादौ प्रक्षाल्य—

ह्रीं विशुद्ध-धर्म-गात्रि सर्वपापानि शमयाशेष-विकल्पमपनय हूँ फट् स्वाहा

इति द्विराचम्य 'ॐ मणिधरिणी'त्यादि मन्त्रेण शिखा मुक्ता चेत् तां बध्वा—

ॐ गुरुभ्यो नमः, मूलं अमुकदेव्यै नमः, ॐ इन्द्रादिलोकपालेभ्यो नमः, ॐ ब्रह्मणे नमः, ॐ वास्त्वीशाय नमः, ॐ क्षेत्रपालाय नमः, ॐ गणेशाय नमः, ॐ वटुकभैरवाय नमः, ॐ योगिनीभ्यो नमः ।

इति मण्डपदेवताः प्रणमेत् । ततो दिने दिनान्तरे वार्जितं कृत प्रायश्चित्तैरप्यनवहृतं पापं स्वात्मन्यत्रशिष्टधिया विमृष्य—

ॐ देवि त्वत्पदगं चित्तं पापाक्रान्तमभून्मम ।
तन्निःसारय चित्तान्मे पापं फट् फट् ते नमः ॥
सूर्यः सोमो यमः कालो महाभूतानि पञ्च च ।
एते शुभाशुभस्येह कर्मणो नव साक्षिणः ॥

इति पठित्वा 'हुँ फट्' इति जपन् क्रोधदृष्ट्या स्वस्यपार्श्वद्वयमूर्ध्वमधश्च विलोक्य स्वान्तर्देहगतानि दृढपापानि देहान्निर्गतानि विभाव्य सुमना भूत्वा—

ॐ अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भुवि संस्थिताः ।
ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया ॥

इति पठन् सर्वतस्तिलसर्षपाक्षतान्विकीर्य पार्ष्णि-घातत्रयेण तर्जनी-मध्यमाभ्यामूर्ध्वोर्ध्वं तालत्रयेण दिव्यदृष्ट्या च स्वर्व्योमभूमिवर्त्तिनां विघ्नानामपसारणं विभाव्य। मूलेनाचम्य काम्याचमनं वक्ष्यमाणं च कृत्वा रक्तचन्दनादिना त्रिकोण-वृत्त-चतुरस्रात्मकं मण्डलं विधाय—

ॐ आधारशक्तये नमः

इति गन्ध-पुष्पाक्षत-जलैः सम्पूज्याधारं निधाय अर्घ्यपात्रं फडिति प्रक्षाल्याधारे निधाय 'नमः' इति मन्त्रेण जलैः सम्पूर्य तत्र 'गङ्गे चे'त्यादिना तीर्थान्यावाह्य प्रणवेन गन्ध-पुष्पाक्षतादि निःक्षिप्य धेनुमुद्रां दर्शयेत् प्रजपेच्चाष्टकृत्वः प्रणवमिति सामान्यार्घ्य-स्थापनं कृत्वा। ततस्तज्जलेन 'फट्' इति द्वारमभ्युक्ष्य पूजयेत्। ऊर्ध्वे—

ॐ विघ्नाय नमः, ॐ महालक्ष्म्यै नमः, ॐ सरस्वत्यै नमः।

दक्षिणशाखायां—ॐ विघ्नाय नमः,
वामशाखायां—ॐ क्षेत्रपालाय नमः,
तयोः पार्श्वे—ॐ गङ्गायै नमः, ॐ यमुनायै नमः,
देहल्यां—ॐ अस्त्राय नमः।

तत्राशक्तः 'ॐ द्वारदेवताभ्यो नमः' इत्येतावन्मात्रं पूजयेत्।

ॐ सर्वविघ्नानुत्सारयेत् हुँ फट् स्वाहा

इति मन्त्रेण दूर्वाक्षतान् परितो विकीर्य विघ्नान् देवगृहादपसृतान् विचिन्त्य, सामान्यार्घ्यपात्रमादाय वामाङ्गं सङ्कोचयन् पूजास्थानं प्रविशेत्। तत्र—

ॐ रक्ष रक्ष हुँ फट् स्वाहा

इति कुशैर्जलसेकरूपं भूमिशोधनं विधाय, भूमिं स्पृष्ट्वा—

ॐ पवित्र वज्र रक्ष रक्ष फट् स्वाहा

इत्यभिमन्त्र्य अभिमन्त्रितायां भूमौ रक्तचन्दनेन त्रिकोणं विलिख्य तत्र—

ॐ आधारशक्तये नमः

इति सम्पूज्य श्वेतकम्बलाद्यासनं गृहीत्वा—

ॐ पृथ्वि त्वयेति मन्त्रस्य मेरुपृष्ठऋषिः सुतलं छन्दः कूर्मो देवता आसनोपवेशने विनियोगः।

ॐ पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता। त्वं च धारय मां नित्यं पवित्रं कुरु चासनम् ॥

इति पठन्नासनं प्रसार्य तदुपरि पञ्चाशतं पञ्चविंशतिं वा कुशानास्तीर्य—

ह्रीं आधारशक्तये कमलासनाय नमः

इति सम्पूज्य तत्र पादतलेनास्पृशन् स्वस्तिकासनेनोदङ्मुख उपविश्यात्मशोधनं कुर्यात। तच्च स्वनामाद्यक्षरस्य सानुस्वारस्य नाभौ हृदि ललाटे त्रिर्जपेन भवति। ततो बद्धाञ्जलिः—

वामे—गुं गुरुभ्यो नमः

दक्षिणे—गं गणपतये नमः

अग्रे—मूलं अमुकदेवतायै नमः

इति प्रणम्य 'हूँ' इति मन्त्रेण सचन्दनानि त्रीणि पुष्पाणि आदाय 'ह्रौं' इति सम्पुटित-करतलाभ्यां मृदु यथा स्यात्तथा मर्दयित्वा करौ सुरभीकृत्य तानि वामकरतले संस्थाप्य 'क्लीं' इति जपन् 'ॐ तत्सद्' इति मन्त्रेणाघ्राय—

ह्रौं ते सर्वे विलयं यान्तु ये मां हिंसन्ति हिंसकाः। मृत्युरोगभयक्लेशाः पतन्तु रिपु - मस्तके ॥

इति पठन्नाराच-मुद्रया ऐशान्यां क्षिपेदिति कर-शुद्धिं विधाय ऊर्ध्वोर्ध्व-तालत्रयं दत्वा मूलेन दिग्बन्धनं कुर्यात्। ततः स्वेष्टदेवता-कुल्लुका-मन्त्रं गोरोचनया भूर्जपत्रे विलिखितं पट्टसूत्र-वेष्ठितं ताम्रादि-धातु-वेष्ठितं वा शिरसि बध्वा अथवा कुल्लुकाक्षराणि केशान्ते पंक्त्याकारेण लिखितानि विभाव्य शाल-ग्रामादौ विष्णु-पूजनं कुर्यात। ततः प्राणायामस्तत्र मूलाधारे मनः संयोज्य दक्षांगुष्ठेन दक्षनासापुटं रुध्वा मूलं प्रणवं वा षोडशवारं जपन् वामनासया

वायुमापूर्य कनिष्ठानामिकांगुष्ठैर्नासापुटे निरुध्य मूलं प्रणवं वा चतुष्षष्ठिवारं जपन् वायुं कुम्भयित्वा द्वात्रिंशद्वारजपेन दक्षनासया वायुं रेचयेदित्येकः। पुनस्तथैव षोडशवारजपेन दक्षनासया वायुमापूर्य चतुष्षष्ट्या कुम्भयित्वा द्वात्रिंशद्वारजपेन वामनासया रेचयेदिति द्वितीयः। पुनर्वामनासिकया तथैवापूर्य कुम्भयित्वा दक्षनासिकया रेचयेदिति तृतीयः प्राणायामः। अत्राशक्तश्चतुर्भिरापूर्य षोडशभिः कुम्भयित्वा अष्टाभीरेचयेत्। पुनः पुनरेवं पूर्ववद् विधाय प्राणायामत्रयं सम्पादयेत्।

ततो भूतशुद्धिः। स्वाङ्के उत्तानौ करौ निधाय मूलाधारे कुण्डलिनीं स्वेष्टदेवतात्मिकां प्रसुप्तभुजगाकार-सार्द्धत्रिवलयोपेतां तडित्कोटिप्रभां नीवारशूकवत्तन्वीं विचिन्त्य 'हंसः' इति जपेनोत्थाय मूलाधार-स्वाधिष्ठान - मणिपूरानाहत इति चतुश्चक्राणि सुषुम्ना-वर्त्मना भेदयित्वा तत्र प्रदीपकलिकाकारजीवात्मना सह 'सोहं' इति प्रबोधमापन्नां विशुद्धाज्ञाचक्रे भेदयित्वा शिरःस्थिताधोमुखसहस्रदलकमलकर्णिकान्तर्गत-परमात्मनि संयोज्य तेषामैक्यं विभाव्य तत्रैव पृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाश - गन्धरसरूपस्पर्शशब्द-नासिकाजिह्वाचक्षुस्त्वक्श्रोत्रवाक्पाणिपादपायूपस्थप्रकृतिमनोबुद्ध्यहङ्कार-चतुर्विंशतितत्त्वानि लीनानि विभाव्य निष्प्रपञ्चः परब्रह्मस्वरूपः कियत्क्षणं स्थित्वा, वामकुक्षौ पापपुरुषं ध्यायेत्—

वामपार्श्वे स्थितं पापपुरुषं कज्जलप्रभं।
ब्रह्महत्याशिरस्कञ्च स्वर्णस्तेयभुजद्वयम्॥
सुरापानहृदायुक्तं गुरुतल्पकटिद्वयम्।
तत्संसर्गपदद्वन्द्वमङ्गप्रत्यङ्गपातकम्।
उपपातक-रोमाणं रक्तश्मश्रु-विलोचनम्।
खड्गचर्मधरं क्रुद्धमेवं कुक्षौ विचिन्तयेत्॥

ततो 'यं' इति वायुबीजं नाभि-स्थितं वामनासापुटे विचिन्त्य तस्य षोडशवार-जपेन वायुना देहमापूर्य

तदनु नासापुटे धृत्वा चतुष्षष्टिवारजपेन कुम्भकं कृत्वा पापेन सह देहं संशोष्य द्वात्रिंशद्वारजपेन दक्षनासया वायुं रेचयेत्। तदनु 'रं' इति वह्निबीजं रक्तवर्णं वामकुक्षि-स्थितं ध्यात्वा तस्य षोडशवार-जपेन दक्षनासिकया वायुमापूर्य तदनु नासापुटे धृत्वा चतुष्षष्टिवार-जपेन कुम्भकं कृत्वा पापेन सह देहं दाहयित्वा तस्य द्वात्रिंशद्वारजपेन वामनासापुटेन पाप-भस्मना सह वायुं रेचयेत्। तदनु 'ठं' इति चन्द्रबीजं शुक्लवर्णं ललाटस्थं वामनासापुटे ध्यात्वा तस्य षोड-शवारजपेन ललाटे चन्द्रं नीत्वा तदनु नासापुटे धृत्वा 'वं' इतिवरुणबीजस्य चतुष्षष्टिवारजपेन कुम्भकं कृत्वा तस्माल्ललाटचन्द्राद् गलित-सुधया मातृकावर्णात्मि-कया समस्तं देहं विरचय्य 'लं' इति पृथ्वीबीजस्य द्वात्रिंशद्वार-जपेन देहं सुदृढं विचिन्त्य दक्षिणेन रेचयेत्। ततो 'हंसः' इति मन्त्रेण कश्चित् 'सोहं' इति मन्त्रेण परमात्मनः सकाशान्निःकाश्य जीवात्मानं हृदि कुण्डलिनीं मूलाधारे पृथिव्यादि चतुर्विंशति-तत्त्वानि स्व-स्वस्थाने समानयेदिति भूतशुद्धिः।

अशक्तानां तु मूलाधारोत्थित-कुण्डलिन्या हृद्वर्ति-जीवात्मानं 'हंस' इति मन्त्रेण ब्रह्मरन्ध्रस्थ-परमशिवे संयोज्य 'सोहं' इति मन्त्रेण जीवात्मपरमात्मनोरैक्यं विचिन्त्य कियत् क्षणं स्थित्वा तस्माद् ब्रह्मणः प्रादु-र्भूतं नूतनं शरीरं विभाव्य हृदि जीवं मूलाधारे कुण्ड-लिनीं च समानयेदिति लघ्वीभूतशुद्धिः।

ततो लेलिहानमुद्रया हृदये हस्तमारोप्य—

आं ह्रीं क्रों हंसः मम प्राणा इह प्राणाः। आं ह्रीं क्रों हंसः मम जीव इह स्थितः। आं ह्रीं क्रों हंसः मम सर्वेन्द्रियाणि इह स्थितानि। आं ह्रीं क्रों हंसः मम वाङ्-मनश्चक्षुःश्रोत्र-जिह्वाघ्राण-प्राणा इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा।

इति स्वशरीरे प्राणान् संस्थाप्य, तत्त्वशुद्धिं कुर्यात्—

ॐ प्राणापान-व्यानोदान-समाना मे शुद्ध-यन्तां ज्योतिरहं विरजा विपाप्मा भूयासं स्वाहा ॥१॥

ॐ पृथिव्यप्तेजो वाय्वाकाशानि मे शुद्ध्यन्तां ज्योतिरहं विरजा विपाप्मा भूयासं स्वाहा ॥२॥

ॐ प्रकृत्यहङ्कार-बुद्धि-मनःश्रोत्राणि मे शुद्ध्यन्तां ज्योतिरहं विरजा विपाप्मा भूयासं स्वाहा ॥३॥

ॐ त्वक्-चक्षुर्जिह्वा - घ्राण-वचांसि मे शुद्ध्यन्तां ज्योतिरहं विरजा विपाप्मा भूयासं स्वाहा ॥४॥

ॐ वाक्-पाणि-पाद-पायूपस्थ - शब्दा मे शुद्ध्यन्तां ज्योतिरहं विरजा विपाप्मा भूयासं स्वाहा ॥५॥

ॐ स्पर्श - रूप - रस - गन्धाकाशानि मे शुद्ध्यन्तां ज्योतिरहं विरजा विपाप्मा भूयासं स्वाहा ॥६॥

ॐ वायु-तेजः - सलिल - भूम्यात्मानो मे शुद्ध्यन्तां ज्योतिरहं विरजा विपाप्मा भूयासं स्वाहा ॥७॥

इति सप्तभिर्मन्त्रैः प्रत्येकं सर्वाङ्गं मार्जयेदिति तत्त्वशुद्धिः ।

अथ मातृकान्यासः—

अस्य श्रीमातृकामन्त्रस्य ब्रह्मऋषिर्गायत्रीछन्दः, मातृका सरस्वती देवता, हलो बीजानि, स्वराः शक्तयः, अव्यक्तं कीलकं, सर्वपापक्षयार्थे मन्त्रसिद्धौ न्यासे विनियोगः ।

शिरसि ॐ ब्रह्मणे ऋषये नमः । मुखे ॐ गायत्र्यै छन्दसे नमः । हृदि मातृकासरस्वत्यै देवतायै नमः । गुह्ये ॐ हल्भ्यो बीजेभ्यो नमः । पादयोः ॐ स्वरेभ्यः शक्तिभ्यो नमः । सर्वाङ्गे ॐ अव्यक्ताय कीलकाय नमः ।

इति ऋष्यादीन् विन्यस्य—

अं कं खं गं घं ङं आं अंगुष्ठाभ्यां नमः। इं चं छं जं झं ञं ईं तर्जनीभ्यां स्वाहा। उं टं ठं डं ढं णं ऊं मध्यमाभ्यां वषट्। एं तं थं दं धं नं ऐं अनामिकाभ्यां हूँ। ओं पं फं बं भं मं औं कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्। अं यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं अः करतल-कर-पृष्ठाभ्यां फट्।

अं कं खं गं घं ङं आं हृदयाय नमः। इं चं छं जं झं ञं ईं शिरसे स्वाहा। उं टं ठं डं ढं णं ऊं शिखायै वषट्। एं तं थं दं धं नं ऐं कवचाय हुँ। ओं पं फं बं भं मं औं नेत्रत्रयाय वौषट्। अं यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं अः अस्त्राय फट्।

इति कर-षडङ्गन्यासौ कृत्वा ध्यायेत—

पञ्चाशल्लिपिभिर्विभक्तमुखदोः पन्मध्य-वक्षस्थलां, भास्वन्मौलि-निबद्ध-चन्द्र-शकलामा-पीन-तुङ्गस्तनीं। मुद्रामक्षगुणं सुधाढ्यकलशं विद्यां च हस्ताम्बुजैर्विभ्राणां विशदप्रभां त्रिनयनां वागी-श्वरीमाश्रये ॥

एवं ध्यात्वा मनसा न्यसेत्—

१ अं नमः, २ आं नमः, ३ इं नमः, ४ ईं नमः, ५ उं नमः, ६ ऊं नमः, ७ ऋं नमः, ८ ॠं नमः, ९ ऌं नमः, १० ॡं नमः, ११ एं नमः, १२ ऐं नमः, १३ ओं नमः, १४ औं नमः, १५ अं नमः, १६ अः नमः।

इति षोडश-स्वरान् षोडश-दल-कमले कण्ठमूले न्यसेत।

१ कं नमः, २ खं नमः, ३ गं नमः, ४ घं नमः, ५ ङं नमः, ६ चं नमः, ७ छं नमः, ८ जं नमः, ९ झं नमः, १० ञं नमः, ११ टं नमः, १२ ठं नमः।

इति द्वादश-वर्णान् द्वादश-दल-कमले हृदि न्यसेत।

१ डं नमः, २ ढं नमः, ३ णं नमः, ४ तं नमः,

५ थं नमः, ६ दं नमः, ७ धं नमः, ८ नं नमः, ९ पं नमः, १० फं नमः ।

इति दश-वर्णान् दश-दल-कमले नाभौ न्यसेत् ।

१ बं नमः, २ भं नमः, ३ मं नमः, ४ यं नमः, ५ रं नमः, ६ लं नमः ।

इति षड्वर्णान् षड्दल-कमले मेढ्रे न्यसेत् ।

१ वं नमः, २ शं नमः, ३ षं नमः, ४ सं नमः ।

इति चतुरो वर्णांश्चतुर्दल-कमले मूलाधारे न्यसेत् ।

१ हं नमः, २ क्षं नमः ।

इति द्वौ वर्णौ द्विदल-कमले भ्रूमध्ये न्यसेत् । इति अन्तर्मातृकान्यासः । अथ बाह्यमातृकान्यासः—

देवीं पूर्णेन्दुशुभ्रां सकललिपिमयीं लोलवक्त्रां त्रिनेत्रां । शुक्लालङ्कारभूषां शशिमुकुटजटाजूटयुक्तां प्रसन्नां ॥

पुस्त - स्रक्पूर्णकुम्भान् वरमपि दधतीं शुक्लपट्टाम्बराढ्यां । वाग्देवीं पद्मनेत्रां स्तनभरनमितां चिन्तयेत् साधकेन्द्रः ॥

इति ध्यात्वा—

अं नमः ललाटे, आं नमः मुखवृत्ते, इं नमः दक्षनेत्रे, ईं नमः वामनेत्रे, उं नमः दक्षकर्णे, ऊं नमः वामकर्णे, ऋं नमः दक्षनासायां, ॠं नमः वामनासायां, ऌं नमः दक्षकपोले, ॡं नमः वामकपोले, एं नमः ऊर्ध्वोष्ठे, ऐं नमः अधरोष्ठे, ओं नमः ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ, औं नमः अधोदन्तपंक्तौ, अं नमः शिरसि, अः नमः मुखे, कं नमः दक्षबाहुमूले, खं नमः दक्षकूर्परे, गं नमः दक्षमणिबन्धे, घं नमः दक्षकरांगुलिमूलेषु, ङं नमः दक्षकरांगुल्यग्रेषु, चं नमः वामबाहुमूले, छं नमः वामकूर्परे, जं नमः वाम-मणिबन्धे, झं नमः वामकरांगुलिमूलेषु, ञं नमः वामकरांगुल्यग्रेषु, टं नमः दक्षपादमूले, ठं नमः दक्षजानुनि, डं नमः दक्षगुल्फे, ढं नमः दक्षपादांगुलिमूलेषु, णं नमः दक्षपादांगुल्यग्रेषु, तं नमः

वामपादमूले, थं नमः वामजानुनि, दं नमः वामगुल्फे, धं नमः वामपादांगुलिमूलेषु, नं नमः वामपादांगुल्यग्रेषु, पं नमः दक्षपार्श्वे, फं नमः वामपार्श्वे, बं नमः पृष्ठे, भं नमः नाभौ, मं नमः कुक्षौ, यं त्वगात्मने नमः हृदि, रं असृगात्मने नमः दक्षांशे, लं मांसात्मने नमः ककुदि, वं मेदात्मने नमः वामांशे, शं अस्थ्यात्मने नमः हृदादि दक्षपाणौ, षं मज्जात्मने नमः हृदादि-वामपाणौ, सं शुक्रात्मने नमः हृदादिदक्षपादे, हं जीवा-त्मने नमः हृदादिवामपादे, लं प्राणात्मने नमः हृदादि-जठरे, क्षं परमात्मने नमः हृदादिमुखे।

इति सर्वत्र तत्त्वमुद्रया न्यसेत्। तदुक्तं पुष्पैर-नामया वापि मनसा वा न्यसेदसूनिति मन्त्रतन्त्रप्रकाशे। अनामया सांगुष्ठया अंगुष्ठान मिकाभ्यां तन्न्यासः सर्वत्र सम्मत इति पद्मपुराणात। पुष्पैर्देवतामूर्तौ अनामया सांगुष्ठया स्वदेहे। मनसा मूलाधारादिष्व-न्तर्मातृकान्यासादाविति सुधार्णवः। ओमाद्यन्तो नमोऽन्तो वा सबिन्दुर्बिन्दुवर्जितः पञ्चाशद्वर्णविन्यासः क्रमादुक्तो मनीषिभिः। चतुर्द्धा मातृका प्रोक्ता केवला बिन्दु-संयुता। सविसर्गा सोभया च रहस्यं शृणु कथ्यते। विद्याकरी केवला च सोभया भक्तिदायिनी। सविसर्गा पुत्रप्रदा सबिन्दुर्वित्तदायिनीत्यादि तन्त्रसारे। मन्त्रमहोदधौ--सृष्टि-स्थिति-लयात्मक-न्यासान् प्रदर्श्य सृष्टि-स्थित्योरावृत्या पञ्चधा मातृकान्यास उक्तः स च तत एवानुसन्धेयः। स्थानभेदेन मातृकान्यासमुद्रा गुरुत्वादेवोऽपेक्षिताः।

इति श्रीमन्महाराजाधिराज श्रोत्रिय-द्विजराज मिथिलालङ्कार निःशङ्कशङ्कर शतश्रील श्री रमेश्वरसिंह शर्म बहादुर देवदेवानां कारिते धर्मरत्नाकरे आगमकल्लोले पण्डितवर गिरिधारिमिश्रपुत्रेण महामहोपाध्याय (रजे) राजनाथमिश्रेण सङ्कलित सर्वशक्ति-साधारण प्रातःकृत्यादिविधिः प्रथमो वेगः॥

—:❀:—

श्यामार्चन-चन्द्रिका

कामार्तं पतिमाकलय्य गिरिजा लाजान् प्रभूतं पयः ।
क्षिप्त्वान्यत्र जगाम धाम धवलं तत्राप्यधावद्धरः ॥
हस्ताहस्तिमिषात्कपर्दपटलैर्भालं बबन्ध प्रभोः ।
पश्चात् कामकला-कलाप-विदुषी स्मेरोन्मुखी पातु वः ॥

अथ काली सपर्या-विधिः

तत्र प्रातःकृत्यादि - मातृकान्यासान्तं पूर्ववत् इयाँस्तु विशेषः द्वारपूजानन्तरं मण्डप-प्रवेश-समये—

ॐ तीक्ष्णदंष्ट्र महाकाय कल्पान्त-दहनोपम ।
भैरवाय नमस्तुभ्यमनुज्ञां दातुमर्हसि ॥

इति सम्प्रार्थितमाज्ञां गृह्णीयात् । काम्याचमनं यथा 'क्रीं' इति त्रिराचम्य, 'ॐ काल्यै नमः, ॐ कपालिन्यै नमः' इत्यंगुष्ठ-मूलदेशेनाधरोष्ठमुन्मृज्य; 'ॐ कुल्लायै नमः' इति करं प्रक्षाल्य; 'ॐ कुरुकुल्लायै नमः' इति तर्जनी-मध्यमानासाभिमुखं; 'ॐ विरोधिन्यै नमः, ॐ विप्रचित्तायै नमः' इति तर्जन्यगुष्ठ-कोटिभ्यां घ्राणाग्रे; 'ॐ उग्रायै नमः, ॐ उग्र-प्रभायै नमः' इत्यङ्गुष्ठानामिकाभ्यां चक्षुषी, 'ॐ दीप्तायै नमः, ॐ नीलायै नमः' इत्यङ्गुष्ठानामिकाभ्यां श्रोत्रे; 'ॐ घनायै नमः' इति कनिष्ठाङ्गुष्ठयोगेन

नाभि; 'ॐ बलाकायै नमः' इति करतलेन हृदयं; 'ॐ मात्रायै नमः' इति सर्वाङ्गुलीभिश्शिरः; 'ॐ मुद्रायै नमः' 'ॐ मितायै नमः' इत्यङ्गुष्ठाग्रेणांशौ सर्वत्र साम्बु स्पृशेदिति।

पूर्वोक्त-कृत्यानन्तरमात्मानं देवीरूपं विभाव्य योनिमुद्रां बध्वा मूलमुच्चार्य—

अस्य श्रीदक्षिणाकालिका-मन्त्रस्य महाकालभैरव ऋषिः, उष्णिक् छन्दो, दक्षिणाकालिका देवता, ह्रीं बीजं, हूं शक्तिः, क्रीं कीलकं, मम चतुर्वर्गफल-प्राप्तये विनियोगः॥

शिरसि महाकालभैरवाय ऋषये नमः।
मुखे उष्णिक् छन्दसे नमः।
हृदि दक्षिणाकालिकायै देवतायै नमः।
गुह्ये ह्रीं बीजाय नमः।
पादयोः हूं शक्तये नमः।
सर्वाङ्गे क्रीं कीलकाय नमः।
इति ऋष्यादिन्यासः॥

ॐ क्रां हृदयाय नमः इति तर्जनी-मध्यमानामाभिर्हृदि। ॐ क्रीं शिरसे स्वाहा इति तर्जनी-मध्यमाभ्यां शिरसि। ॐ क्रूं शिखायै वषट् इति मुष्टिबद्धाङ्गुष्ठेन शिखायां। ॐ क्रैं कवचाय हुँ इति सर्वाङ्गुलीभिरंशौ। ॐ क्रौं नेत्रत्रयाय वौषट् इति तर्जनी-मध्यमानामाभिर्नेत्रत्रये। ॐ क्रः अस्त्राय फट् इति तर्जनी मध्यमाभ्यामूर्ध्वोर्ध्वं तालत्रयं दत्वा छोटिकाभिर्दिशो दश बध्नीयात्। इति षडङ्गन्यासः॥

अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं ॡं हृदि। एं ऐं ओं औं अं अः कं खं गं घं दक्षांसे। ङं चं छं जं झं ञ टं ठं डं ढं वामांसे। णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं दक्षोरौ। मं यं रं लं वं शं षं सं हं क्षं वामोरौ॥

ॐ क्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः इति तर्जनीभ्यामङ्गुष्ठयोः। ॐ क्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा इत्यङ्गुष्ठाभ्यां तर्जन्योः। ॐ क्रूं मध्यमाभ्यां वषट् इत्यङ्गुष्ठाभ्यां मध्यमयोः। ॐ क्रैं अनामिकाभ्यां हूं इत्यङ्गुष्ठाभ्यामनामिकयोः। ॐ क्रौं कनिष्ठाभ्यां वौषट् इत्यङ्गुष्ठाभ्यां

कनिष्ठयोः। ॐ क्रः करतल-करपृष्ठाभ्यां फट् इति परस्परं करतल-करपृष्ठयोः। इति करन्यासः॥

ततो मूलमन्त्रेण पञ्चधा सप्तधा नवधा वा सर्वाङ्गेषु व्यापकं कुर्यादिति। एवं विन्यस्त-देहः 'हूं हूं ह्रीं अस्त्राय फट्' इति छोटिकादिभिर्दिग्बन्धं कृत्वा स्वर्णादि-पात्रे रक्तचन्दनादिना मध्ये बिन्दुं, ततः स्त्राग्र त्रिकोण-पञ्चकं, ततो वृत्तं, ततोऽष्टदल-कमलं, ततो भूपुरमिति यन्त्रं निर्माय त्रिपदिकाद्याधारोपरि संस्थाप्य तदुपरि जवापुष्पादि दत्त्वा पीठपूजां कुर्यात्—

मं मण्डूकाय नमः। कां कालाग्निरुद्राय नमः। ॐ आधारशक्तये नमः। ॐ प्रकृत्यै नमः। ॐ कूर्माय नमः। ॐ अनन्ताय नमः। ॐ पृथिव्यै नमः। ॐ सुधाम्बुधये नमः। ॐ मणिद्वीपाय नमः। ॐ चिन्तामणिगृहाय नमः। तदन्तः ॐ श्मशानाय नमः। ॐ पारिजाताय नमः। तन्मूले ॐ रत्न-वेदिकायै नमः। परितः ॐ मुनिभ्यो नमः। ॐ देवेभ्यो नमः। ॐ शिवाभ्यो नमः। ॐ शवेभ्यो नमः। ॐ शवमुण्डेभ्यो नमः। दिक्षु ॐ धर्माय नमः। ॐ ज्ञानाय नमः। ॐ वैराग्याय नमः। ॐ ऐश्वर्याय नमः। कोणेषु ॐ अधर्माय नमः। ॐ अज्ञानाय नमः। ॐ अवैराग्याय नमः। ॐ अनैश्वर्याय नमः। मध्ये ॐ रत्नपीठाय नमः। तदुपरि ॐ आनन्दमय कन्दाय नमः। ॐ सर्वतत्त्वात्मक पं पद्माय नमः। ॐ प्रकृत्यात्मकपत्रेभ्यो नमः। ॐ विकारमय केसरेभ्यो नमः। ॐ पञ्चाशद्वर्णाढ्य कर्णिकायै नमः।

अं अर्कमण्डलाय द्वादशकलात्मने नमः। उं सोम-मण्डलाय षोडशकलात्मने नमः। मं वह्निमण्डलाय दशकलात्मने नमः। सं सत्त्वाय नमः। रं रजसे नमः। तं तमसे नमः। आं आत्मने नमः। अं अन्तरात्मने नमः। ॐ जीवात्मने नमः। पं पर-मात्मने नमः। ह्रीं ज्ञानात्मने नमः।

पद्मस्याष्टसु पत्रेषु पूर्वादि-वामावर्ततः—१ ॐ उग्रायै नमः, २ ॐ उग्रचण्डायै नमः, ३ ॐ चामुण्डायै

नमः, ४ ॐ प्रचण्डायै नमः, ५ ॐ विकटायै नमः, ६ ॐ उत्कटायै नमः, ७ ॐ सङ्कटायै नमः, ८ ॐ चण्डोग्रायै नमः, ९ कर्णिकायां ॐ मङ्गलचण्डिकायै नमः ❀, ॐ मणिपीठाय नमः।

पीठपादेषु—ॐ ब्रह्मणे नमः, ॐ विष्णवे नमः, ॐ रुद्राय नमः, ॐ ईश्वराय नमः।

मध्ये—ऐं परायै अपरायै परापरायै ह्सौः सदाशिव-महाप्रेत-पद्मासनाय नमः—इति पीठमन्त्रेणासनं सम्पूजयेदिति।

ततो विशेषार्घ-स्थापनं। स्व-वामभागे त्रिकोण-वृत्त चतुरस्रमण्डलं विधाय, 'ऐं ह्रीं व्यापकमण्डलाय नमः' इति सम्पूज्य, 'फट्' इति मन्त्रेण शङ्खं शङ्खाधारं च प्रक्षाल्य, तन्मण्डले संस्थाप्य, त्रिपदिकायां 'मं वह्निमण्डलाय दशकलात्मने नमः' इति सम्पूज्य, 'अं अर्कमण्डलाय द्वादशकलात्मने नमः', इत्यर्घपात्रं सम्पूज्य, मूलमन्त्रेण विमलजलेन शङ्खमापूर्य 'उं चन्द्रमण्डलाय षोडशकलात्मने नमः' इति जलं सम्पूज्य; तत्र बिल्वपत्र-रक्तचन्दन-जवापुष्प-दूर्वाक्षतानि निःक्षिप्य षडङ्गानि पूजयेत्—

आग्नेये ॐ क्रां हृदयाय नमो नमः, ऐशान्यां ॐ क्रीं शिरसे स्वाहा नमः, नैर्ऋत्यां ॐ क्रूं शिखायै वषट् नमः, वायव्ये ॐ क्रैं कवचाय हूं नमः, मध्ये ॐ क्रौं नेत्रत्रयाय वौषट् नमः, परितः ॐ क्रः अस्त्राय फट् नमः।

ततः शङ्खोपरि मूलं दशधा प्रजप्य—

ॐ गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति।
नर्मदे सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिन्सन्निधिं कुरु॥

इत्यनेनाङ्कुशमुद्रया तीर्थान्यावाह्य तेजोमयं जलं मत्स्यमुद्रयाच्छाद्य अस्त्रेण संरक्ष्य 'हुं' इत्यनेनावगुण्ठ्य धेनुमुद्रया अमृतीकृत्य चक्रमुद्रया बोधयेदिति।

❀ १ इच्छा, २ ज्ञाना, ३ क्रिया, ४ कामिनी, ५ कामदायिनी, ६ रतिः, ७ रतिप्रिया, ८ आनन्दा, ९ मनोन्मनी इत्यप्यन्यत्र।

ततः स्व-दक्षिणे प्रोक्षणीपात्रमद्भिः पूरयित्वा तत्र किञ्चिदर्घाम्बु दत्वा साधारकमन्यत्पात्रं पुरतः स्थापयेत्। तत्पार्श्वे वामक्रमेण त्रिकोण-वृत्त-चतुरस्रात्मकानि षण्मण्डलानि रक्तचन्दनादिना विरचय्य 'ॐ ह्रीं आधारशक्तये नमः' इति सम्पूज्य तदुपरि आधारान्निधाय क्रमेण प्रथमं १ पाद्यपात्रं, २ तद्वामेऽर्घपात्रं, ३ तद्वामे आचमनीयपात्रं, ४ तद्वामे मधुपर्कपात्रं, ५ तद्वामे पुनराचमनीयपात्रं, ६ तद्वामे स्नानीयपात्रं संस्थाप्य पाद्यपात्रे जलं पूरयित्वा श्यामाकदूर्वाब्ज-विष्णुक्रान्ता-द्रव्याणि, तथार्घपात्रे जलं गन्ध-पुष्पाक्षत-यव-कुशाग्र-तिल-सर्षप-दूर्वादलानि, तथाचमनीय-पात्रे जलं जाती-लवङ्ग-कक्कोलानि निःक्षिपेत। मधुपर्कपात्रे मधु-दधि-सर्पिस्सिताः समाः स्वल्पं जलमित्येकीकृत्य धारयेत्। पुनराचमनीयपात्रे शुद्धं जलं। स्नानीयपात्रे गन्धापो निःक्षिपेत। ततः किञ्चिच्छङ्खामृतं पुष्पादिना समुद्धृत्य सर्वेषु पात्रेषु निःक्षिपेत्, सर्वं दिव्यं विचिन्तयेच्च ॥

अथान्तर्यजनं।

तत्र मूलाधारे चतुर्दल-कमले 'मं मण्डूकाय नमः, कां कालाग्निरुद्राय नमः', अथः कूर्माकार-शिला-विशेषमारूढां पङ्कजद्वयधारिणीं ध्यात्वा 'ॐ ह्रीं आधारशक्तये नमः, ॐ प्रकृत्यै नमः,' तन्मूर्ध्नि समासीनं नीलाभं ध्यात्वा 'ॐ कूर्माय नमः', तदुपरि कुन्दपुष्प-सन्निभं मूर्ध्ना वसुमतीं धारयन्तं ध्यात्वा 'ॐ अनन्ताय नमः', तन्मूर्ध्नि तमाल-श्यामलां नीलेन्दीवरधारिणीं स्फुरत् सागर-मेखलां ध्यात्वा 'ॐ वसुमत्यै नमः', तदुपरि षड्दलकमले मेढ्रे 'ॐ सुधाम्बुधये नमः', तदुपरि द्वादशदलहृत्पद्मे 'ॐ चिन्तामणि-गृहाय नमः', तदन्तः 'ॐ श्मशानाय नमः, ॐ पारिजाताय नमः', तन्मूले 'ॐ सर्वतोभद्रादि-मण्डल-सहित-रत्नवेदिकायै नमः', परितः 'ॐ मुनिभ्यो नमः, ॐ देवेभ्यो नमः, ॐ शिवाभ्यो नमः, ॐ शवेभ्यः नमः, ॐ शवमुण्डेभ्यो नमः', दक्षांशे वृषाकारं रक्तं ध्यात्वा 'ॐ धर्माय नमः', दक्षजंघायां श्यामलं

केशरि-रूपं ध्यात्वा 'ॐ ज्ञानाय नमः', वामांशे हरिद्राभं भूताकारं ध्यात्वा 'ॐ वैराग्याय नमः', वामजंघायां इन्द्राकारमिन्द्रनीलाभं ध्यात्वा 'ॐ ऐश्वर्याय नमः', मुखे 'ॐ अधर्माय नमः', दक्षपार्श्वे 'ॐ अज्ञानाय नमः', नाभौ 'ॐ अवैराग्याय नमः', वामपार्श्वे 'ॐ अनैश्वर्याय नमः'।

हृदि न्यस्त-रत्नवेदिकोपरि – ॐ रत्नपीठाय नमः।

तदुपरि—ॐ आनन्दमयकन्दाय नमः, ॐ संविन्नालाय नमः, ॐ सर्वतत्वात्मकपद्माय नमः, ॐ प्रकृत्यात्मकपत्रेभ्यो नमः, ॐ विकारमय-केसरेभ्यो नमः, ॐ पञ्चाशद्वर्णबीजाढ्यकर्णिकायै नमः।

तद्दिक्षु—अं अर्कमण्डलाय द्वादशकलात्मने नमः, उं सोममण्डलाय षोडशकलात्मने नमः, मं वह्निमण्डलाय दशकलात्मने नमः, सं सत्वाय नमः, रं रजसे नमः, तं तमसे नमः, आं आत्मने नमः, अं अन्तरात्मने ॐ जीवात्मने नमः, ॐ परमात्मने नमः, ॐ ज्ञानात्मने नमः।

पद्मस्याष्टसु पत्रेषु पूर्वादि-वामावर्त्ततः— ॐ उग्रायै नमः, २ ॐ उग्रचण्डायै नमः, ३ ॐ चामुण्डायै नमः, ४ ॐ प्रचण्डायै नमः, ५ ॐ त्रिकूटायै नमः, ६ ॐ उत्कटायै नमः, ७ ॐ सङ्कटायै नमः, ८ ॐ चण्डोग्रायै नमः, ९ कर्णिकायां ॐ मङ्गलचण्डिकायै नमः।

इति पीठशक्तीः विन्यस्य—ॐ मणिपीठाय नमः।

पीठ-पादेषु—ॐ ब्रह्मणे नमः, ॐ विष्णवे नमः, ॐ रुद्राय नमः, ॐ ईश्वराय नमः।

मध्ये—ऐं परायै अपरायै परापरायै हसौः सदाशिव-महाप्रेत-पद्मासनाय नमः।

अयं न्यासो मनसैव कार्यः। ततो मूलाधारात् कुण्डलिनीमुत्थाप्य सुषुम्नान्तर्मार्गेण सहस्रदलकमले नीत्वा तत्रेष्टदेवतारूपेण परिणतां परमात्मना सङ्गमय्य तत्रत्यामृत-लोलीभूतां स्वर्णदोलादिना हृदि न्यस्ताष्टदलकमलोपरि रत्नपीठपद्मासनोपरि समानयेत्। गुरुमुखावगत-कामकलाद्यात्मना वा परिणतां

तत्र स्थापयेत्। वक्ष्यमाण-क्रमेण ध्यात्वा प्रतिष्ठापयेच्च तत्प्राणान्। ततः सहस्रदलकमलान्तर्गत-चन्द्र-बिम्ब-स्रवदमृतधाराभिः संस्नाप्य—मूलं अमुक-देवतायै लं पृथ्वीतत्वात्मकं गन्धं समर्पयामि नमः,

इति हस्तद्वय-कनिष्ठाङ्गुष्ठ-संयोगात्मक-गन्ध-मुद्रया मनःकल्पित-श्रीखण्ड-कृष्णागरु-केशरि-कर्पूर-च्छोदं सर्वाङ्गे मनसा समर्पयेत्। ततः—मूलं अमुक-देवतायै हं आकाशतत्वात्मकं पुष्पं समर्पयामि नमः,

इति हस्तद्वय-तर्जन्यङ्गुष्ठ-संयोगात्मक-पुष्प-मुद्रया मनःकल्पित जवा-कमल-चम्पकादि-मालां तत्पुष्पाणि च तत्तदङ्गे हस्ते च मनसा समर्पयेत्। ततो—मूलं अमुकदेवतायै यं वायुतत्वात्मकं धूपं समर्पयामि नमः,

इति हस्तद्वय-तर्जन्यङ्गुष्ठ-योगात्मक-धूपमुद्रया मनःकल्पित रजत-भाजनोपरि निर्धूमाङ्गार-समर्पित-विहितधूपं समर्पयेत्, धूपयेच्च मनसा पादतो नाभि-पर्यन्तं। ततो—मूलं अमुकदेवतायै रं वह्नितत्वात्मकं दीपं समर्पयामि नमः,

इति हस्तद्वय-मध्यमाङ्गुष्ठयोगात्मक-दीपमुद्रया मनःकल्पित-रजत-भाजनस्थाज्य-कर्पूर-गर्भ-पट्टवर्तिका-ज्वलित-प्रदीपं समर्पयेत्, दीपयेच्च मनसा नेत्रान्तम्। ततो—मूलं अमुकदेवतायै वं अमृततत्त्वात्मकं नैवेद्यं समर्पयामि नमः,

इति हस्तद्वयाङ्गुष्ठानामिका-योगात्मक-नैवेद्य-मुद्रया मनःकल्पित-परमान्नादि-मधुर-द्रव्यं समर्पयेत्, प्रदर्शयेच्च वक्ष्यमाण-प्राणादि-पञ्चग्रासमुद्राः।

इति पञ्चोपचारान् समर्प्य उपदेशानुसारेण वं अमृततत्त्वात्मकं पानीयं हं आकाशतत्वात्मक-पुष्पाञ्जलिमित्याद्यपि मनसा समर्पयेत्। ततश्चन्द्रार्कानल-संघट्ट-गलित-परमामृतेन 'मूलं अमुकदेवीं तर्पयामि स्वाहा' इति मनसा त्रिः सन्तर्प्य वर्णमालया करमालया वा मन्त्रं जप्त्वा समर्प्य स्तुत्वा प्रणमेदिति मानस-पूजां कृत्वा करकच्छपिकया पुष्पादिकं गृहीत्वा ध्यायेद्यथा कालिकातन्त्रे—

करालवदनां घोरां मुक्तकेशीं चतुर्भुजां ।
दक्षिणां कालिकां दिव्यां मुण्डमाला-विभूषितां ॥
सद्यश्छिन्नशिरः खड्गवामाधोर्ध्व-कराम्बुजां ।
अभयं वरदं चैव दक्षिणोर्ध्वाधः कराम्बुजे ॥
महामेघप्रभां श्यामां तथा चैव दिगम्बरां ।
कण्ठावसक्त - मुण्डाली - गलद्रुधिर-चर्चितां ॥
कर्णावतंसतानीतशव - युग्म - भयानकां ।
घोरदंष्ट्रां करालास्यां पीनोन्नत-पयोधरां ॥
शवानां कर-संघातैः कृतकाञ्चीं हसन्मुखीं ।
सृक्कद्वय - गलद्रक्तधारा - विस्फुरिताननां ॥
घोररावां महारौद्रीं श्मशानालयवासिनीं ।
बालार्कमण्डलाकार - लोचनत्रितयान्वितां ॥
दन्तुरां दक्षिणव्यापि-मुक्तालम्बि-कचोच्चयां ।
शवरूप - महादेव - हृदयोपरि - संस्थितां ॥
शिवाभिर्घोररावाभिश्चतुर्दिक्षु समन्वितां ।
महाकालेन च समं विपरीत-रतातुरां ॥
सुखप्रसन्नवदनां स्मेरानन - सरोरुहां ।
एवं सञ्चिन्तयेत्कालीं धर्मकामार्थमोक्षदां ॥

एवं रूपामिष्टदेवीं हृत्पद्मोपरि स्थितां 'यं' इति वायुबीजमुच्चरमाणो वामनासिकया रेचन-क्रमेण करस्थपुष्पे समानीय—

ॐ देवेशि भक्तिसुलभे परिवार-समन्विते ।
यावत्त्वां पूजयिष्यामि तावद्देवि स्थिरा भव ॥

इति पठन् यन्त्रादौ कल्पित-मूर्तेश्शिरसि तत्पुष्पं दत्वा देवता-तेजः पुष्पमपहाय तस्या मूर्तेर्ब्रह्मरन्ध्र-द्वारेण हृदयं प्रविश्य स्थिरीभूतं भावयेत । ततोऽञ्जलिं बध्वाऽनामिका-मूल-पर्वद्वयेऽङ्गुष्ठाग्रे निःक्षिप्य—

क्रीं दक्षिणकालिके इहागच्छ इहागच्छ

पूर्वोक्ताञ्जलिमधोमुखं कृत्वा—

क्रीं दक्षिणकालिके इह तिष्ठ इह तिष्ठ

उच्छ्रिताङ्गुष्ठ-मुष्टी संयोज्य—

क्रीं दक्षिणकालिके इह सन्निधेहि इह सन्निधेहि

अन्तः प्रवेशिताङ्गुष्ठे मुष्टी संयोज्य—

क्रीं दक्षिणकालिके इह सन्निरुद्धयस्व इह सन्निरुद्धयस्व

मुष्टि-युगलमुत्तानीकृत्य—

क्रीं दक्षिणकालिके इह सम्मुखी भव इह सम्मुखी भव

शालग्रामादि-भिन्ने यन्त्रादौ प्राणप्रतिष्ठां कुर्यात्। कुण्डलिन्यामपि शालग्रामशिलात्वाविशेषान्न प्राण-प्रतिष्ठेति साम्प्रदायिकाः। मूल-कल्पित-मूर्तेर्हृदये तर्जनी-मध्यमानामाः समा अधोमुखीकृत्य अनामा-मूलेऽङ्गुष्ठाग्रं दत्वा कनिष्ठिकामृजुं कृत्वा हस्त-मारोप्य—

आं ह्रीं क्रों हंसः दक्षिणकालिकायाः प्राणा इह प्राणाः। आं ह्रीं क्रों हंसः दक्षिणकालिकाया जीव इह स्थितः। आं ह्रीं क्रों हंसः दक्षिणकालिकायाः सर्वेन्द्रि-याणि इह स्थितानि। आं ह्रीं क्रों हंसः दक्षिणकालि-कायाः वाङ्मनश्चक्षुःश्रोत्र-घ्राणप्राणा इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा॥

ततो दीर्घाधोमुख-तर्जन्यौ मुष्टी व्यस्त-हस्त-कृते अभितो भ्रामयन्—

क्रीं दक्षिणकालिके इहावगुण्ठिता भव

इत्यवगुण्ठयेत। ततः पुष्पद्वारा उपास्य-मन्त्रस्य षडङ्गन्यासं मूर्तौ विदध्यादिति सकलीकरणं॥ ततो धेनुमुद्रया 'वं' इत्यमृतीकृत्य, 'एं' इति योनिमुद्रां प्रदर्शयेत। सत्यवकाशे 'ह्रीं' भूतिनीं, 'वं' बीजाख्यां, 'क्रीं' असुरनाशिनीं, 'स्त्रीं' दानव-ध्वंसिनीं, 'ॐ' व्याख्यां, 'हूं' लेलिहानां—इति सप्तमुद्राः प्रदर्शये-त्तासु योनिमुद्रात्यावश्यकी॥ ततो विशेषार्घोदकेन मूलमन्त्रेण त्रिः प्रोक्षणेन देवशुद्धिं कुर्यात॥ ततो यथालाभं षोडशोपचारैर्दशोपचारैः पञ्चोपचारैर्वा देवी-दक्षिण-भागे महाकालभैरवं पूजयित्वा पश्चात्तथोप-चारैर्देवीं सम्पूजयेत्। तत्र षोडशोपचारा यथा—

१ पाद्यं, २ अर्घः, ३ आचमनीयं, ४ स्नानं, ५ बसनं, ६ भूषणं, ७ गन्धः, ८ पुष्पं, ९ धूपः, १० दीपः, ११ नैवेद्यं, १२ आचमनं, १३ ताम्बूलं १४ स्तोत्रं, १५ तर्पणं, १६ प्रणामः।

१ आसनं, २ स्वागतं ३ पाद्यं, ४ अर्घ्यं, ५ आचमनीयं, ६ मधुपर्कः, ७ आचमनीयं, ८ स्नानं, ९ वस्त्रं, १० आभरणं, ११ गन्धः, १२ पुष्पं, १३ धूपः, १४ दीपः, १५ नैवेद्यं, १६ वन्दनं।

उभयथा तन्त्रेऽभिधानादैच्छिको विकल्पः। अथ दशोपचाराः—

१ पाद्यं, २ अर्घः, ३ आचमनं, ४ मधुपर्कः, ५ आचमनं, ६ गन्धः, ७ पुष्पं, ८ धूपः, ९ दीपः, १० नैवेद्यं।

अथ पञ्चोपचाराः—

१ गन्धः, २ पुष्पं, ३ धूपः, ४ दीपः, ५ नैवेद्यं।

अथ महाकालभैरवं ध्यायेत्—

महाकालं यजेत्पूर्वं पश्चाद्देवीं प्रपूजयेत्।
महाकालं यजेद्देव्या दक्षिणे धूम्रवर्णकम्॥
बिभ्रतं दण्डखट्वाङ्गं दंष्ट्रा भीममुखं शिवम्।
व्याघ्रचर्मावृतकटिं तुन्दिलं रक्तवाससम्॥
त्रिनेत्रमूर्ध्वकेशं च मुण्डमाला-विभूषितम्।
जटाभीषण - सच्चन्द्रखण्डं तेजो ज्वलन्निव॥

इति ध्यात्वा स्वागतं कुशलमिदमासनमास्यतामित्यभिलप्य—

हूँ स्फ्रौं यां रां लां वां क्रौं महाकाल-भैरव-सर्वविघ्नान्नाशय नाशय ह्रीं श्रीं फट् स्वाहा इदं पाद्यं महाकालभैरवाय नमः।

इति पादयोर्दद्यात्। एवं षोडशोपचारैर्दशोपचारैः पञ्चोपचारैर्वा यथालाभं तर्पणान्तैः समर्चयेत्। ततो हस्तद्वयोर्ध्वमुखात्मिकामधोमुखात्मिकां च मुद्रां प्रदर्शयन्—

मूलं दक्षिणकालिके देवि स्वागतं ते कुशलमिदमासनमास्यताम् ।

ततः पाद्यपात्रस्थ-जलमुद्धृत्य—

मूलं इदं पाद्यं श्रीदक्षिणकालिकायै नमः ।

इति पादयोर्दत्वा पाद्यमुद्रां प्रदर्शयेत् । ततो अर्घपात्रस्थ-जलमुद्धृत्य—

मूलं एषोऽर्घः दक्षिणकालिकायै स्वाहा ।

इति देव्याशिरसि दत्वा अञ्जलिं प्रदर्शयेत् । तत आचमनपात्रस्थ-जलमुद्धृत्य—

मूलं एतदाचमनीयं दक्षिणकालिकायै स्वधा ।

इति देव्या मुखकमले दत्वाचमनमुद्रां प्रदर्शयेत् । ततो मधुपर्कं देव्या मुखकमले दत्वा—

क्रीं एष मधुपर्को दक्षिणकालिकायै स्वधा ।

इत्यर्घोदकेनोत्सृज्य मधुपर्कमुद्रां प्रदर्शयेत् । ततः पुनराचमनीयमाचमनीयवद्दद्यात् । ततः स्नानीयपात्रस्थजलमुद्धृत्य शतकृत्वो दशकृत्वो यथाशक्ति वा देव्याः सर्वाङ्गे दत्वा—

क्रीं एतत् स्नानीयं दक्षिणकालिकायै नमः ।

इत्यर्घोदकेनोत्सृज्य स्नानमुद्रां प्रदर्शयेत् । ततो मूलेनाङ्गप्रोक्षणं विभाव्य, ततो रक्तवर्णमनुपभुक्तं वस्त्रयुगलमादाय 'फट्' इति सम्प्रोक्ष्य 'नमः' इति सम्पूज्य—

मूलं एतद्वस्त्र-युगलं बृहस्पतिदैवतं श्रीदक्षिणकालिकायै नमः ।

इत्युत्सृज्य परिधापयन् वस्त्रमुद्रां प्रदर्शयेत् । पुनराचमनीयं पूर्ववद्दद्यात् । ततः 'फट्' इति सम्पूज्य देव्या वामहस्ते दत्वा—

मूलं एतत्स्वर्णभूषणं वह्निदैवतं राजतभूषणं चन्द्रदैवतं वा श्रीदक्षिण-कालिकायै नमः ।

इत्यर्घोदकेनोत्सृजेत्, अङ्गुष्ठस्पृष्टानामिकोत्तानदक्षिणहस्तं प्रदर्शयेच्च । ततः प्रमाणोक्तमुत्तमगन्धं 'फट्' इति सम्प्रोक्ष्य 'गन्धाय नमः' इति सम्पूज्य वामहस्ताङ्गुष्ठेन कनिष्ठाग्रं स्पृशन् दक्षिणहस्तकनिष्ठया गन्धमादाय देव्याः सर्वाङ्गे दत्वा—

मूलं एष गन्धः गन्धर्वदैवतः दक्षिणकालिकायै नमः ।

इत्यर्घोदकेनोत्सृजेत् । एवं रक्तचन्दनं, सिन्दूरं, अक्षतं च दद्यात् । ततो विहित जवादिपुष्पं 'फट्' इति प्रोक्ष्य 'पुष्पाय नमः' इति सम्पूज्य—

मूलं एतत् पुष्पं वनस्पतिदैवतं श्रीदक्षिणकालिकायै वौषट् ।

इति देव्या वामकरे सर्वाङ्गे तर्जन्यङ्गुष्ठाग्रयुक्ताधोमुख-करेण दद्यात् । एवमेव पुष्पमालां दद्यात् । तत्र—

नाना पुष्प-विचित्राढ्यां पुष्पमालां सुशोभनाम् ।
प्रयच्छामि सदा भद्रे गृहाण परमेश्वरि ॥

इति मन्त्रं पठेत् । एवमेव बिल्वपत्राणि दद्यात् । प्रमाणोक्तपात्रे विहित-धूपद्रव्यं निर्धूमाङ्गारेषु निःक्षिप्य 'फट्' इति सम्प्रोक्ष्य 'धूपाय नमः' इति सम्पूज्य वामहस्त-तर्जन्या धूपपात्रं स्पृशन् देव्याः समीपं नीत्वा—

मूलं एष धूपः विष्णुदैवतः श्री दक्षिणकालिकायै नमः ।

इत्युत्सृज्य संयुक्त-ज्येष्ठातर्जन्यग्रं दर्शयित्वा—

ॐ जयध्वनि मन्त्रमातः स्वाहा ।

इति घण्टां सम्पूज्य वामहस्ते वादयन् दक्ष-मध्यमानामिका-मध्यपर्वणि अङ्गुष्ठाग्रेण धूपपात्रं धृत्वा देव्याः पादादि नभ्यन्तं धूपयेत् । ततः कर्पूर-गर्भिण्या वर्तिकया गव्य-घृतदीपं प्रज्वाल्य धूपवत् प्रोक्षण-पूजने विधाय वामहस्त-मध्यमया दीपपात्रं स्पृशन् देव्याः समीपं नीत्वा—

मूलं एष दीपः श्रीदक्षिणकालिकायै नमः ।

इत्यर्घोदकेनोत्सृज्य ज्येष्ठा-मध्यमयोरग्रे संयोज्य दर्शयन् मूलगायत्र्या मध्यमाङ्गुष्ठाभ्यां दीपपात्रमुत्तोल्य घण्टावादनपूर्वकं देव्याः पादादि-नेत्रान्तं दीपयेत् । ततः प्रमाणोक्त-पायसादि-नैवेद्यं स्वर्णादि-पात्रे कृत्वा तत्पात्रं चतुरस्र-मण्डले साधारं निधाय 'फट्' इति प्रोक्षणीजलेन सम्प्रोक्ष्य चक्रमुद्रया संरक्ष्य 'यं' इति

वायुबीज-जपेन नैवेद्य-दोषान् संशोष्य 'रं' इत्यस्य जपेन तान् सन्दाह्य दक्षकराग्रेण स्पृष्ट्वा 'वं' इति बीजेनामृतीकृत्य कराभ्यां तत्पात्रं स्पृशन् मूलमन्त्रेणाष्टकृत्वोऽभिमन्त्र्य धेनुमुद्रां प्रदर्श्य गन्धपुष्पोदकैः 'ॐ नैवेद्याय नमः' इति सम्पूज्य देव्याः समीपं नीत्वा वामाङ्गुष्ठ-तर्जनीभ्यां स्पृशन्—

मूलं इदममुक-नैवेद्यं विष्णुदैवतं श्रीदक्षिणकालिकायै नमः।

इत्यर्घोदकेनोत्सृज्य तत्त्वमुद्रां प्रदर्श्य—

मूलं अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा।

इति देव्यै जलं दत्वा वामहस्तेन विकचोत्पलसदृशीं ग्रासमुद्रां दर्शयन् दक्षिणहस्तेन संयुक्तैः कनिष्ठानामाङ्गुष्ठैः—

१ ॐ प्राणाय स्वाहा, २ तर्जनी-मध्यमाङ्गुष्ठैः ॐ अपानाय स्वाहा, ३ मध्यमानामाङ्गुष्ठैः ॐ समानाय स्वाहा, ४ तर्जनी-मध्यमानामाङ्गुष्ठैः ॐ उदानाय स्वाहा, ५ सर्वाङ्गुलीभिः ॐ व्यानाय स्वाहा।

इति प्राणादीनां पञ्चमुद्राः प्रदर्श्य—

ॐ नमस्ते देवदेवेशि सर्वतृप्तिकरं परं।
परमानन्दसम्पूर्णं गृहाण जलमुत्तमम्॥

मूलं इदं पानीयं श्रीदक्षिणकालिकायै नमः।

इति दत्वा, घण्टां वादयन, चामरैर्वीजयन् पठेत्—

ॐ ब्रह्मेशाद्यैः सरसमभितस्तूपविष्टैः समेता।
शिञ्जत्ताल-व्यजन-निकरैर्वीज्यमाना सखीभिः॥
नर्मक्रीडा-प्रहसनपरा पंक्तिभोक्त्रींल्लसन्ती।
भुंक्ते पात्रे कनकघटिते षड्रसांश्चिद्विलासा॥

इति ततस्तृप्तिमाकांक्षमाणः क्षणं स्थित्वा, तृप्तिं विभाव्य, 'ॐ अमृतापिधानमसि स्वाहा' इति जलं दत्वा आचमनीयवत पुनराचमनीयं दद्यात्। ततस्ताम्बूलं 'फट्' इति सम्प्रोक्ष्य, 'ताम्बूलाय नमः' इति सम्पूज्य—

ॐ पूगीफल-समायुक्तं सचूर्णं मुखमण्डनम् ।
गृहाण देवि ताम्बूलं कर्पूरेण सुवासितम् ॥

इति पठन् देव्यग्रे नीत्वा—

मूलं इदं ताम्बूलं विष्णुदैवतं श्रीदक्षिणकालिकायै नमः ।

इत्यर्घोदकं नोत्सृजेत । ततो वामकर-तत्त्वमुद्रया 'क्रीं दक्षिणकालिकां तर्पयामि स्वाहा' दक्षिणहस्तेन विशेषार्घजलेन त्रिः सन्तर्पयेत ।

मूलं एष पुष्पाञ्जलिः श्रीदक्षिणकालिकायै वौषट्— इत्यष्टधा पुष्पाञ्जलीन् दद्यात् । सहस्राणं-मन्त्रेण वा । ततोऽङ्गपूजा । तत्राङ्गदेव्यः षडपि वराभयकराः । देवीसकाशादाग्नेय्यां तुषारावदातां हृदयदेवीं ध्यात्वा—

१—ॐ क्रां हृदयाय नमः हृदयदेव्यै नमः ।

ऐशान्यां स्फटिकाभां शिरोदेवीं ध्यात्वा—

२—ॐ क्रीं शिरसे स्वाहा शिरोदेव्यै नमः ।

नैऋत्यां श्यामवर्णां ध्यात्वा—

३—ॐ क्रूं शिखायै वषट् शिखादेव्यै नमः ।

वायव्यां नीलवर्णां ध्यात्वा—

४—ॐ क्रैं कवचाय हुं कवचदेव्यै नमः ।

पुरोभागे कृष्णवर्णां ध्यात्वा—

५—ॐ क्रौं नेत्रत्रयाय वौषट् नेत्रदेव्यै नमः ।

चतुर्दिक्षु रक्तवर्णां ध्यात्वा—

६—ॐ क्रः अस्त्राय फट् अस्त्रदेव्यै नमः ।

क्वचित् 'हृदयदेवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः' इत्यादि-क्रमेणापि पूजा-प्रयोगो दृश्यते । ततस्तेनैव क्रमेण—

१—ॐ क्रां हृदयाय नमः हृदयदेवीं	तर्पयामि	स्वाहा
२—ॐ क्रीं शिरसे स्वाहा शिरोदेवीं	,,	,,
३—ॐ क्रूं शिखायै वषट् शिखादेवीं	,,	,,
४—ॐ क्रैं कवचाय हुं कवचदेवीं	,,	,,
५—ॐ क्रौं नेत्रत्रयाय वौषट् नेत्रदेवीं	,,	,,
६—ॐ क्रः अस्त्राय फट् अस्त्रदेवीं	,,	,,

इति विशेषार्घजलेन दक्षकरेण वामकर-तत्त्वमुद्रया सन्तर्प्य पुष्पाञ्जलिं गृहीत्वा—

मूलं षडङ्गार्चनेन दक्षिणे कालिके मातस्तृप्यताम्। इति दद्यात्। ततो वायव्यादीशानान्तं गुरुपंक्तीर्विभाव्य 'ॐ त्रिविधगुरुभ्यो* नमः' इति सम्पूज्य 'ऐं रक्त-शक्त्याढ्य श्री अमुकानन्दनाथाय नमः श्री अमुकाय गुरवे नमः' इति वा स्वगुरुं, एवं—

ॐ परमगुरवे नमः, ॐ परापरगुरवे नमः, ॐ परमेष्ठिगुरवे नमः।

इति सम्पूज्य—

ॐ त्रिविध-गुरूंस्तर्पयामि स्वाहा। ऐं रक्तशक्त्याढ्य श्री अमुकगुरुं तर्पयामि स्वाहा। श्री अमुकगुरुं तर्पयामि स्वाहेति वा।

एवं परमगुरुं, परापरगुरुं, परमेष्ठिगुरुं तर्पयेत्। ततः पुष्पाञ्जलिं गृहीत्वा—

ॐ गुरुपंक्त्यर्चनेन दक्षिणे कालिके मातस्तृप्यताम्।

* दिव्यौघ-सिद्धौघ-मानवौघभेदात्।

इति दत्वाऽवरणानि पूजयेत्। तत्र बद्धाञ्जलिः—

भगवति! तवावरणान्यहं पूजयिष्ये—

इति अभ्यर्थ्यानुज्ञा जातेति मनसि विभाव्य, पञ्च-दशकोणेषु बाह्यत्रिकोणमारभ्यान्तस्त्रिकोण-पर्यन्तं सम्मुख-वाम-दक्षिण-कोण-क्रमोपविष्टाः श्यामवर्णा मुण्डमाला-विभूषणा दक्षकरेण खड्गं वामकरेण तर्जनीं दधानाः काल्यादि-पञ्चदशदेवीर्ध्यात्वा—

१ क्रीं काली श्रीपादुकां पूजयामि नमः इति, क्रीं काल्यै नमः इति वा।

२ कं कपालिन्यै नमः, ३ कुं कुल्लायै नमः, ४ कुं कुरुकुल्लायै नमः, ५ विं विरोधिन्यै नमः, ६ विं विप्र-चित्तायै नमः, ७ उं उग्रायै नमः, ८ उं उग्रप्रभायै नमः, ९ दीं दीप्तायै नमः, १० नीं नीलायै नमः, ११ घं घनायै नमः, १२ वं वलाकायै नमः, १३ मां मात्रायै नमः, १४ मुं मुद्रायै नमः, १५ मिं मितायै नमः।

इति गन्धादिभिरभ्यर्च्य तद्वदेव 'क्रीं कालीं तर्पयामि स्वाहा' इत्यादि 'मिं मितां तर्पयामि स्वाहा' इत्यन्तं पञ्चदश शक्तीस्तर्पयेत् ।

मूलं अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले ।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं प्रथमावरणार्चनम् ॥

इति प्रधानदेव्यै पुष्पाञ्जलिं दद्यात ॥१॥

ततोऽष्टदल-मध्येऽष्टौ मातृर्यजेद्यथा—

(१) पूर्वदिक्पत्रे हंस-समारूढां स्वर्णवर्णां चतुर्भुजां चतुर्वक्त्रां त्रिनेत्रां कूर्च-पङ्कज-दण्ड-पद्माक्षमालां वहन्तीं जटाजूटधरां ध्यात्वा—'आं ब्रह्माणी श्रीपादुकां पूजयामि नमः' इति 'आं ब्रह्माण्यै नमः' इति वा पूजयेदेवमग्रेऽपि ।

(२) ईशान - दिक्पत्रे गरुड़वाहिनीं चतुर्भुजां घण्टा-शक्ति-कृपाण-चक्राणि करैर्दधतीं मधु-मदोल्लोल-दृष्टिं चारुकेशां नानालङ्कारयुक्तां श्यामां ध्यात्वा 'ईं नारायण्यै नमः' ।

(३) सौम्य-दिक्पत्रे वृषारूढां शुक्लां त्रिनेत्रां डमरु-वराभय-त्रिशूलानि करैर्दधतीं नानाभरण-भूषितां ध्यात्वा 'ऊं माहेश्वर्यै नमः' ।

(४) वायव्य-पत्रे अट्टहास-प्रकटित-दशनां त्रिनेत्रां नीलवर्णां नृमुण्डावलि-मालिनीं खड्गं शूलं कपालं नरशिरोघटित-खेटकं धारयन्तीं प्रेतारूढां मधुमद-मुदितां मत्तरूपां ध्यात्वा 'ॠं चामुण्डायै नमः ।'

(५) प्रत्यक्-पत्रे कुङ्कुमवर्णां त्रिनेत्रां शिखि-वाहनां चतुर्भुजां शक्ति-पाशाङ्कुशाभय-धारिणीं प्रमत्तां ध्यात्वा 'ॡं कौमार्यै नमः' ।

(६) नैर्ऋत्य-पत्रे पीतवर्णां अक्षसूत्र-वर-कमल-मातुलुङ्गानि दधतीं ध्यात्वा 'ऐं अपराजितायै नमः' ।

(७) नृशिरः खड्ग-मुशल-हलधारिणीं धूम्रवर्णां वराहवदनां ध्यात्वा 'औं वाराह्यै नमः' ।

(८) आग्नेय-पत्रे नृसिंह-सदृशीं ध्यात्वा 'अः नारसिंह्यै नमः' इति पूजयेत् ।

तद्वदेव 'आं ब्रह्माणीं तर्पयामि स्वाहा' इत्यादि

'अं नारसिंहीं तर्पयामि स्वाहा' इत्यन्तमष्टौ मातॄः सन्तर्प्य पुष्पाञ्जलिमादाय—

मूलं अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं द्वितीयावरणार्चनम्॥

इति मूलदेव्यै समर्पयेत ॥२॥

ततोऽष्टदलाग्रेषु भैरवान् नीलवर्णान् वेताल-कपाल-शूल-दण्ड-लघुदुन्दुभि-धारिणः त्रिनेत्रान् गज-कृत्ति-कृतोत्तरीयान् भ्रूकुटि-कुटिल-ललाटपट्टान् मुदितान्तःकरणान् सुयूनः ध्यात्वा—

(१) पूर्वे ऐं ह्रीं असिताङ्गभैरव श्रीपादुकां पूजयामि नमः इति ऐं ह्रीं असिताङ्गभैरवाय नमः एवं वा पूजयेदेवमग्रेऽपि।

(२) ऐशान्यां ऐं ह्रीं रुरुभैरवाय नमः।

(३) उदीच्यां ऐं ह्रीं चण्डभैरवाय नमः।

(४) वायव्ये ऐं ह्रीं क्रोधभैरवाय नमः।

(५) प्रतीच्यां ऐं ह्रीं उन्मत्तभैरवाय नमः।

(६) नैर्ऋत्यां ऐं ह्रीं कपालिभैरवाय नमः।

(७) याम्ये ऐं ह्रीं भीषणभैरवाय नमः।

(८) आग्नेये ऐं ह्रीं संहारभैरवाय नमः।

इति गन्धादिभिरभ्यर्च्य तेनैव क्रमेण 'ऐं ह्रीं असिताङ्गभैरवं तर्पयामि स्वाहा' इत्यारभ्य 'ऐं ह्रीं संहारभैरवं तर्पयामि स्वाहा' इत्यन्तमष्टौ भैरवान् सन्तर्प्य पुष्पाञ्जलिमादाय—

मूलं अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं तृतीयावरणार्चनम्॥

इति मूलदेव्यै समर्पयेत ॥३॥

ततो भूपुरे—

(१) पूर्वस्यां दिशि पीतवर्णमैरावतारूढं वज्रहस्तं सुराधिपतिं ध्यात्वा 'लं इन्द्र श्रीपादुकां पूजयामि नमः' एवं 'लं इन्द्राय नमः' एवं वा पूजयेत्, एवमग्रेऽपि।

(२) आग्नेयां रक्तवर्णं मेषारूढं शक्तिहस्तं तेजोऽधिपतिं ध्यात्वा—रं अग्नये नमः।

(३) याम्यां कृष्णवर्णं महिषारूढं खड्गहस्तं प्रेताधिपतिं ध्यात्वा—यं यमाय नमः।

(४) नैर्ऋत्यां धूम्रवर्णमश्वारूढं खड्गहस्तं रक्षोधिपतिं ध्यात्वा—क्षं निर्ऋतये नमः।

(५) प्रतीच्यां शुभ्रवर्णं मकरारूढं पाशहस्तं यादोऽधिपतिं ध्यात्वा—वं वरुणाय नमः।

(६) वायव्ये धूम्रवर्णं मृगारूढं शृणिहस्तं प्राणाधिपतिं ध्यात्वा—यं वायवे नमः।

(७) उदीच्यां शुक्लं नरारूढं गदाहस्तं यक्षाधिपतिं ध्यात्वा—कुं कुवेराय नमः।

(८) ऐशान्यां शुक्लं वृषारूढं शूलहस्तं विद्याधिपतिं ध्यात्वा—हौं ईशानाय नमः।

(६) निर्ऋति-वरुणान्तराले गौरं रथारूढं चक्रहस्तं नागाधिपतिं ध्यात्वा—ह्रीं अनन्ताय नमः।

(१०) ईशानेन्द्रान्तराले रक्तं हंसारूढं पद्महस्तं लोकाधिपतिं ध्यात्वा—ॐ ब्रह्मणे नमः।

इति गन्धादिभिरभ्यर्च्य तेनैव क्रमेण 'लं इन्द्रं तर्पयामि स्वाहा' इत्यारभ्य 'ॐ ब्रह्माणं तर्पयामि स्वाहा' इत्यन्तं दश-दिक्पालान् सन्तर्पयेत। पुष्पाञ्जलिमादाय—

मूलं अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागत-वत्सले।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं चतुर्थावरणार्चनम्॥

इति मूलदेव्यै समर्पयेत् ॥४॥

ततो भूपुर-बाह्ये—

(१) प्राच्यां पीतवर्णं ध्यात्वा 'वं वज्रश्रीपादुकां पूजयामि नमः' एवं 'वं वज्राय नमः' एवं वा पूजयेदेवमपेऽपि।

(२) आग्नेय्यां सितवर्णं ध्यात्वा—शं शक्त्यै नमः।

(३) याम्ये कृष्णवर्णं ध्यात्वा—दं दण्डाय नमः।

(४) नैर्ऋत्यां व्योमसङ्काशं ध्यात्वा—खं खड्गाय नमः।

(५) प्रतीच्यां विद्युन्निभं ध्यात्वा—आं पाशाय नमः।

(६) वायव्ये रक्तं ध्यात्वा—क्रों अङ्कुशाय नमः।

(७) उदीच्यां शुक्लां ध्यात्वा—गं गदायै नमः।

(८) ऐशान्यां नीलं ध्यात्वा—त्रिं त्रिशूलाय नमः।

(९) निर्ऋति - वरुणान्तराले रक्तं सहस्रारं ध्यात्वा—चं चक्राय नमः।

(१०) ईशान-प्राच्योरन्तराले रक्तं ध्यात्वा—पं पद्माय नमः।

इति गन्धादिभिरभ्यर्च्य तेनैव क्रमेण 'वं वज्रं तर्पयामि स्वाहा' इत्यारभ्य 'पं पद्मं तर्पयामि स्वाहा' इत्यन्तं सन्तर्प्य पुष्पाञ्जलिमादाय—

मूलं अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं पञ्चमावरणार्चनम्॥

इति प्रधानदेव्यै समर्पयेत ॥५॥

अशक्तपक्षे प्रधानदेवता-पूजन-प्रयोगे साङ्गादि-पदेनापि एकत्रापि परिवाराणामपि पूजनं सिद्ध यतीत्य-वधेयम्। ततः पूर्ववद्देव्या दक्षिणभागे महाकालभैरवं सम्पूज्य 'हूं स्फ्रौं यां रां लां वां क्रौं महाकालभैरव सर्वविघ्नान्नाशय नाशय ह्रीं श्रीं फट् स्वाहा महाकाल-भैरवं तर्पयामि स्वाहा' इति त्रिः सन्तर्प्य देवं पूर्वोक्त-रीत्या ध्यायन् मालामादाय 'ॐ ह्रीं क्लीं हूं महा-कालाय ह्रौं महादेवाय क्रीं कालिकायै ह्रौं' इत्येकविंशा-क्षरं महाकाल-महामन्त्रमष्टोत्तरशतवारं प्रजप्य—

ॐ गुह्यातिगुह्यगोप्ता त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम्।
सिद्धिर्भवतु मे देव त्वत्प्रसादान्महेश्वर॥

इति विशेषार्घोदकेन देवस्य दक्षहस्ते जपफलं समर्प्य वामकरेण घण्टां वादयन् दक्षिणेन चामरं भ्रामयन् स्तुवीत। स्तोत्रान्ते—

ॐ यद्दत्तं भक्तिमात्रेण पत्रं पुष्पं फलं जलम्।
निवेदितं च नैवेद्यं तद्गृहाणानुकम्पया॥
आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनम्।
पूजाभागं न जानामि त्वं गतिः परमेश्वर॥

कर्मणा मनसा वाचा त्वत्तो नान्या गतिर्मम ।
अन्तश्चरसि भूतानां त्वं गतिः परमेश्वर ॥
देवयोनि-सहस्रेषु येषु येषु व्रजाम्यहम् ।
तेषु तेष्वच्युता भक्तिरद्वैतास्तु सदा त्वयि ॥
देवो दाता च भोक्ता च देवः सर्वमिदं जगत् ।
देवो जयति सर्वत्र यो देवस्सोहमेव तत् ॥

इति बद्धाञ्जलिः सम्प्रार्थ्य साष्टाङ्गं प्रणमेत्। ततो मूलमन्त्रेण देव्यै पुष्पाञ्जलि-त्रयं दत्वा रक्त-पुष्पाण्यादाय 'क्रीं हूं स्त्रीं ह्रीं फट् दक्षिणकालिका-कुल्लुकायै नमः' इति मन्त्रेण स्वमूर्ध्नि कुल्लुका पूजयेत्।

'खं खड्ग श्रीपादुकां पूजयामि नमः' एवं 'खं खड्गाय नमः' एवं वा एवमग्रेऽपि। तदधोहस्ते—मुं मुण्डाय नमः। दक्षोर्ध्वहस्ते—अं अभयाय नमः। तदधः—वं वराय नमः। इति गन्धादिभिरभ्यर्च्य तेनैव क्रमेण विशेषार्घोदकेन 'खं खड्गं तर्पयामि स्वाहा, अं अभयं तर्पयामि स्वाहा, वं वरं तर्पयामि स्वाहा' इति सन्तर्पयेत।

ततः योनिमुद्रां प्रदर्श्य 'मूलं साङ्गायै सायुधायै सपरिवारायै सवाहनायै महाकाल-सहितायै दक्षिण-कालिकायै नमः' इति गन्धाक्षत - पुष्पादिभिस्त्रिः सम्पूज्य 'मूलं साङ्गां सायुधां सवाहनां सपरिवारां महाकाल-सहितां दक्षिणकालिकां तर्पयामि स्वाहा' इति त्रिः सन्तर्पयेत् ।

ततः पुष्पाञ्जलीन् दत्वा कवचं पठेत् । ततो जपः, तत्र जपेति कर्तव्यता पुरश्चरण-जपे आवश्यकी नित्य-जपेऽप्यविरुद्धाधिकफलार्था चेति लिख्यते ।

'क्रीं क्रीं क्रीं ॐ ॐ ॐ क्रीं क्रीं क्रीं' इति नवार्णमन्त्रस्य दशधा जपेन मुख-शोधनम् ।

तन्मन्त्रस्यैव दशधा जपेन जिह्वा-शोधनम् ।

'क्रीं हूं स्त्रीं ह्रीं फट्' इति काली-कुल्लुकामन्त्र-मष्टोत्तरशतं दशकृत्वो वा शिरसि जपेत् ।

ततो महाकालस्य जप्यमन्त्रमष्टोत्तरशतं दश-कृत्वो वा जप्त्वा महाकाल-करे समर्पयेत्। ततो मूल-

मन्त्रेण प्रणवेन वा पूर्ववत् प्राणायाम-त्रयं कृत्वा ऋष्यादिन्यासाङ्गन्यास - करन्यास - व्यापकन्यासान् कुर्यात् ।

ततो हृदि 'ॐ' इति 'ऐं ह्रूं ऐं' इति वा 'क्रीं' इति वा सेतुमन्त्रं दशधा जपेत् ।

कण्ठे 'क्रीं' इति महासेतुं दशधा जपेत्। सहस्रारेऽपि तदेव दशधा जपेत् ।

नाभौ निर्वाणमन्त्रं त्रिधा जपेत्। 'ॐ अं आं' इत्यारभ्य 'शं षं सं हं लं क्षं ऐं मूलं ऐं क्षं लं हं सं षं' इत्यादि 'आं अं ॐ' इति निर्वाण मन्त्रः ।

ततः स्वाधिष्ठाने 'क्लीं' इति कामबीजं दशधा जपेत्

ततो मूलाधारे कुण्डलिनी-मन्त्रं त्रिधा जपेत्। मन्त्रस्तु 'ॐ ह्रीं जुं सः कालमूर्ति-कालप्रबोधिनि कालातीते कालदायिनि कपालपात्रधारिणि अमरि कुण्डलिनि जूं सः वं वं वं सोऽहं स्वाहा' इति ।

ततः प्रणव-पुटित-मूलमन्त्रस्य सप्तधा जपेन सूतकोद्धारं कुर्यात् ।

'ॐ ह्रीं ॐ' इति सप्तच्छदं प्रणव-पुटित-मूलमन्त्रञ्च सप्तधा विमृश्य 'ॐ घोररूपे दक्षिणे सिद्धिं कुरु कुरु कालिके ममाभीष्टं फलं शीघ्रं देहि द्रविणसम्पदम्' इति पठित्वा मूलमन्त्रेण विशेषार्घ-जलेन मालामभ्युक्ष्य 'ऐं ह्रीं अक्षमालायै नमः' इति गन्धपुष्पादिभिरभ्यर्च्य—

ॐ माले माले महामाले सर्वशक्ति-स्वरूपिणि ।
चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव ॥

इति पठन्मालां दक्षिणकरेण गृहीत्वा 'ॐ ह्रीं सिद्धेश्वर्य्यै नमः' इति पठन्मालां हृदय-सन्निधौ समानीय त्रिलयं कृत्वा सहस्रारे गुरून् हृत्कमले चेष्टदेवतां मूलाधारे मन्त्रं ध्यात्वा तदैक्यं भावयन् निराकुलो भूत्वा यथाकालं दक्षमध्यमा-मध्यपर्व-स्थित-मालामणीन् दक्षांगुष्ठेन् चालयन् मन्त्रं मन्त्रध्यानपूर्वकमष्टोत्तरसहस्रं ततो न्यूनमधिकं वा पुरश्चरणादौ प्रतिदिन-नियत - संख्याकं वा प्रजप्य जपान्ते प्रणवमुच्चार्य मालां शिरसि निधाय—

ॐ क्लीं त्वंमाले सर्वदेवानांप्रीतिदा शुभदा मम ।
शिवं कुरुष्व मे भद्रे यशो वीर्यं च देहि मे ॥

इति 'ॐ ह्रीं सिद्धेश्वर्यै नमः' इति पठित्वा प्राणायाम-त्रयं विधाय ऋष्यादि-षडङ्गन्यासान् कुर्यात्। ततो दक्षहस्तेन विशेषार्घजलमादाय—

ॐ गुह्यातिगुह्यगोप्त्री त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम् ।
सिद्धिर्भवतु मे देवि त्वत्प्रसादान्महेश्वरि ॥

इति मन्त्रेण तेजोमयं जलं भावयन् देव्या वामकरे मूलेन 'एतावज्जपं श्रीदक्षिणकालिकायै समर्पयामि' इति समर्पयेत्। ततः पूर्वोक्तं सूतकोद्धारमन्त्रं पठेत्।

'ई क्रीं ई' इति सप्तधा जपेन दीपनं कुर्यात्।

'हूं' इति मन्त्रस्य दशधा जपेन चेतनीकृत्य स्तुतिं पठेत्। शैवागमे 'इत्थं जपं समर्प्याथ घण्टावादनपूर्वकम्, स्तुवीत स्तुतिभिः सम्यक् साधको भक्तवत्सलः।'*

ततो नित्यहोम-विधिना जुहुयात्। जलादिकमादाय 'ॐ अद्य श्रीदक्षिणकालिकादेवता-प्रीतये अमुकमन्त्रेण अमुकद्रव्येण नित्यहोम-विधानेन षोडशाहुतीरहं होष्यामि' इति सङ्कल्प्य हस्तमात्रां भूमिं कुशादिना परिसमुह्य गोमयोदकादिनोपलिप्य त्रिकोणं यथा स्यात्तथा प्रादेश-प्रमाणास्तिस्रो रेखा लिखित्वा। अङ्गुष्ठतर्जनीभ्यां ताभ्यो मृद उद्धृत्यैशान्यां क्षिपेत्। प्रोक्षणी जलेन ताः प्रोक्षयेद्विष्णु - रुद्र-चन्द्रात्मतया ध्यायेच्च ताः प्रणम्य कांस्यपात्रेणाग्निमादाय तस्मा-ज्ज्वलदङ्गारं गृहीत्वा 'ॐ क्रव्यादेभ्यो नमः' इति नैर्ऋत्यां क्षिप्त्वा तस्मिन्नेव त्रिकोण-मध्ये वह्निं स्थापयेत्। तद्रक्षार्थं समिधस्त्रिकोणाकारेण योजयेत्।

इष्टं शक्तिं स्वस्तिकाभीतिमुच्चै—
दीर्घैर्दोर्भिर्धारयन्तं जपाभम् ॥

---

* यहाँ मूल पुस्तक में साधकों के पाठ करने हेतु कर्पूरादिस्तोत्र दिया हुआ है।

हेमाकल्पं पद्मसंस्थं त्रिनेत्रं,
ध्यायेद्वह्निं बद्धमौलिं जटाभिः ॥

देवीं षोडशवार्षिकीं शवगतां माध्वीरसाघूर्णितां। श्यामाङ्गीमरुणाम्बरां पृथुकुचां गुञ्जावलीशोभिताम् ॥ हस्ताभ्यां दधतीं कपालममलं तीक्ष्णां तथा कर्त्रिकां। ध्यायेन्मानस-पङ्कजे भगवतीमुच्छिष्ट-चाण्डालिनीम् ॥

इति ध्यात्वा 'ॐ चित्कलोच्छिष्ट-चाण्डालिन्यै नमः' इति निर्माल्यादिभिः सम्पूज्य नत्वा विसर्जयेत्। पुनश्चक्रस्थं निर्माल्य-पुष्पमादाय—

ॐ ते सर्वे विलयं यान्तु ये मां हिंसन्ति हिंसकाः।
मृत्यु-रोग-भयक्लेशाः पतन्तु रिपु-मस्तके ॥

इत्यैशान्यां तत्पुष्पं क्षिपेत्। ततो मूलमन्त्राभिमन्त्रितं निर्माल्यपुष्पं मूर्ध्नि धृत्वा—

यो मां स्पृशति हस्तेन यो मां पश्यति चक्षुषा।
सर्वे ते वश्यमायान्तु राजानो दुष्टजन्तवः ॥

इति मन्त्रेण चक्रस्थ-रक्तचन्दनं भाले धारयेत्। पादोदकं पीत्वा तद्भक्तेभ्यो दत्वा स्वयं च भुक्त्वा देवीरूपोऽहमित्यात्मानं विभावयन् विहरेदिति समाचारः।

अथ न्यासाः

अस्य श्रीकण्ठादि-मातृकान्यासस्य दक्षिणामूर्तिः ऋषिः, गायत्रीच्छन्दः, अर्द्धनारीश्वरो देवता, हलो वीजानि, सुराः शक्तयः, अव्यक्तं कीलकं, सकल-सिद्धये न्यासे विनियोगः।

'ह्सां ह्सीं' इत्यादि षड्दीर्घभाजा कर-षडङ्ग-न्यासः।

पाशांकुश-वराक्षस्रक्-पाणिं शीतांशु-शेखरम्।
त्र्यक्षं रक्तसुवर्णाभमर्द्धनारीश्वरं भजे ॥

इति ध्यात्वा—

ह्सौं अं श्रीकण्ठेश-पूर्णोदरीभ्यां नमः ललाटे
„ आं अनन्तेश-विरजाभ्यां „ मुखवृत्ते
„ इं सूक्ष्मेश-शाल्मलीभ्यां „ दक्षनेत्रे

हसौं ईं त्रिमूर्तीश-लोलाक्षीभ्यां नमः वामनेत्रे
,, उं अमरेश-वर्तुलाक्षीभ्यां ,, दक्षकर्णे
,, ऊं अर्घीश-दीर्घघोणाभ्यां ,, वामकर्णे
,, ऋं भारभूतीश-दीर्घमुखीभ्यां ,, दक्षनासापुटे
,, ॠं अतिथीश-गोमुखीभ्यां नमः वामनासापुटे
,, लृं स्थाण्वीश-दीर्घजिह्वाभ्यां ,, दक्षकपोले
,, लॄं हरेश-कुण्डोदरीभ्यां ,, वामकपोले
,, एं झिण्डीशोर्ध्वकेशीभ्यां ,, ऊर्ध्वोष्ठे
,, ऐं भौलिकेश-विकृतमुखीभ्यां ,, अधरोष्ठे
,, ओं सद्योजातेश-ज्वालामुखीभ्यां ,, ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ
,, औं अनुग्रहेशोल्कामुखीभ्यां ,, अधोदन्तपंक्तौ
,, अं अक्रूरेश-सुश्रीमुखीभ्यां ,, शिरसि
,, अः महासेनेश-विद्यामुखीभ्यां ,, मुखे
,, कं क्रोधीश-महाकालीभ्यां ,, दक्षबाहुमूले
,, खं चण्डेश-सरस्वतीभ्यां ,, दक्षकूर्परे
,, गं पञ्चान्तकेश-गौरीभ्यां ,, दक्षमणिबन्धे
,, घं शिवोत्तमेश-त्रैलोक्यविजयाभ्यां ,, दक्षकरां-
गुलिमूले

हसौं ङं एकरुद्रेश-मन्त्रशक्तिभ्यां नमः अंगुल्यग्रेषु
,, चं कूर्मेशात्मशक्तिभ्यां ,, वामबाहुमूले
,, छं एकनेत्रेशभूवमातृभ्यां ,, वामकूर्परे
,, जं चतुराननेश-लम्बोदरीभ्यां नमः वाममणिबन्धे
,, झं अजेश-द्राविणीभ्यां ,, वामकराङ्गुलि-
मूलेषु

हसौं ञं शर्वेश-नागरीभ्यां ,, वामकरांगुल्यग्रे
,, टं सोमेश-खेचरीभ्यां ,, दक्ष पादमूले
,, ठं लाङ्गलीश-मञ्जरीभ्यां ,, दक्षजानुनि
,, डं दारुकेश-रूपिणीभ्यां ,, दक्षगुल्फे
,, ढं अर्द्धनारीश-वीरिणीभ्यां ,, दक्षपादाङ्गुलिमूले
,, णं उमाकान्तेश-काकोदरीभ्यां ,, दक्षपादाङ्गुल्यग्रे
,, तं आषाढीश-पूतनाभ्यां ,, वामपादमूले
,, थं दण्डीश-भद्रकालीभ्यां ,, वामजानुनि
,, दं अद्रीश-योगिनीभ्यां ,, वामगुल्फे
,, धं मीनेश-शङ्खिनीभ्यां ,, वामपादाङ्गुलि-
मूलेषु

हसौं नं मेषेश-गर्जिनीभ्यां नमः वामपादाङ्गुल्यग्रेषु
,, पं लोहितेश-कालरात्रिभ्यां ,, दक्षपार्श्वे
,, फं शिखीश-कुब्जिनीभ्यां ,, वामपार्श्वे
,, बं छगलण्डेश-कपर्दिनीभ्यां ,, पृष्ठे
,, भं द्विरण्डेश-वज्रिणीभ्यां ,, नाभौ
,, मं महाकालेश-जयाभ्यां नमः जठरे
,, यं त्वगात्मक-वालीश-सुमुखेश्वरीभ्यां ,, हृदि
,, रं असृगात्मक-भुजङ्गेश-रेवतीभ्यां ,, दक्षांशे
,, लं मांसात्मक-पिनाकीश-माधवीभ्यां ,, ककुदि
,, वं मेदात्मक-खड्गीश-वारुणीभ्यां ,, वामांशे
,, शं अस्थ्यात्मक-बकेश-वायवीभ्यां ,, हृदादि-दक्षपाणौ
,, षं मज्जात्मक-श्वेतेश-रक्षोविदारिणीभ्यां ,, हृदादिवामपाणौ
,, सं शुक्रात्मक-भृग्वीश-सहजाभ्यां ,, हृदादि-दक्षपादे
ह्सौं हं प्राणात्मक-नकुलीश-लक्ष्मीभ्यां नमः हृदादि-वामपादे
,, लं जीवात्मक-शिवेश-व्यापिनीभ्यां ,, हृदादि-जठरे
,, क्षं परमात्मक-सम्वर्तेश-मायाभ्यां ,, हृदादि-मुखे

इति मातृकान्यासोक्त-मुद्राभिर्न्यसेदिति श्रीकण्ठादिन्यासः ॥

अथ षोढान्यासस्तन्त्रसारे वीरतन्त्रे केवलां मातृकां कृत्वा मातृकां तार-सम्पुटाम्। मातृकापुटितं तारं न्यसेत् साधक-सत्तमः। श्रीबीजपुटितां तां तु मातृका-पुटितं तु तत्। कामेन पुटितां देवीं तत्पुटं काममेव च। ह्रीं-बीज-पुटितां देवीं तत्पुटां भुवनेश्वरीम्। क्रींद्वन्द्व-पुटितां देवीं तत्पुटां क्रींद्वयं न्यसेत्। ऋं ॠं-द्वन्द्वं लृं ॡं-द्वन्द्वं पुरावद्विन्यसेत् सुधीः। कालीबीजेन पुटितां मातृकां तत्पुटं च तत्। अनुलोम-विलोमाभ्यां मन्त्रं च मातृका-स्थले। मूलेनाष्टशतं कुर्याद् व्यापकं तदनन्तरम्।

सुधार्णवेऽपि वीरतन्त्रे। केवलां मातृकां न्यस्य मातृकां तार-सम्पुटाम्। मातृका-पुटित तारं न्यसेत साधक-सत्तमः। एवं कामपुटं तारं कामं च तार-सम्पुटम्। शक्ति-सम्पुटितं तारं शक्तिं तत्पुटितां न्यसेत। ह्रांह्रां श्रंश्रं क्लुंक्लुं च मन्त्रेण पुटितं पुनः। तैस्तैस्तथैव मन्त्रं च पुटितं विन्यसेद् बुधः। अनुलोम-विलोमेन मन्त्रं केवलमेव तु। विन्यस्य मातृका-स्थाने व्याप्तमष्टोत्तरशतम्। इति गुप्तेन दुर्गाया इत्यादि।

१ प्रथमः केवलमातृकान्यासः।

२ द्वितीयमाहता रस-सम्पुटामिति श्रीवीज-सम्पुटितामित्यर्थः। तेन श्रीं अं श्रीं अं श्रीं अं नमः ललाटे। श्रीं आं श्रीं आं श्रीं आं नमः मुखवृत्ते। एवं क्षकार-पर्यन्तं मातृकास्थाने न्यसेत्।

३ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नमः ललाटे। क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नमः मुखवृत्ते एवं मातृका-स्थाने न्यसेत्।

४ ह्रीं श्रीं ह्रीं श्रीं ह्रीं श्रीं नमः ललाटे। एवं ह्रीं श्रीं ह्रीं श्रीं ह्रीं श्रीं क्लीं श्रीं नमः मुखवृत्ते एवं पञ्चाशन्मातृका-स्थाने न्यसेत।

५ मूलं ह्रां ह्रां श्रं श्रं क्लुं क्लुं मूलं ह्रां ह्रां श्रं श्रं क्लुं क्लुं मूलं ह्रां ह्रां श्रंश्रं क्लुं क्लुं नमः ललाटे। एवं मूलं ह्रां ह्रां श्रं श्रं क्लुं क्लुं मूलं ह्रां ह्रां श्रं श्रं क्लुं क्लुं मूलं ह्रां ह्रां श्रं श्रं क्लुं क्लुं नमः मुखवृत्ते एवं पञ्चाशन्मातृकास्थाने न्यसेत्।

अनुलोम-विलोम-मातृकास्थाने मूलं विन्यस्याष्टोत्तरशतं मूलेन व्यापकं कुर्यादित्यर्थः। तदुक्तं हर-गौरी-सम्वादे—'वक्ष्ये षोढात्मकं न्यासं दुर्लभं भुवन-त्रये। यं कृत्वा साधकश्रेष्ठो भवेद् भैरवसन्निभः।

श्रिया विन्यसेन्मातृकां पूर्वं न्यासोऽयं प्रथमः स्मृतः। सम्पुटितं वर्णं वर्ण-सम्पुटितां श्रियम्। एवं क्रमेण विन्यस्य द्वितीयश्च समीरितः।

काम-सम्पुटितां लक्ष्मीं लक्ष्मी-सम्पुटितं च तम्। विन्यसेत् मातृका-स्थाने तृतीयोऽयं समीरितः।

लज्जया सम्पुटां लक्ष्मीं श्रिया सम्पुटितां ह्रियम्। पूर्ववद्विन्यसेत मन्त्री न्यासस्तूर्य उदाहृतः।

मुखवृत्त-समारूढं लज्जा-द्वन्द्वं नसो युगम्। शशाङ्कशकलारूढं कामशक्रवदुःस्वरम्। मूल-सम्पुटितं कृत्वा तत्पुटं च मनुं तथा। त्रिन्यसेदुक्तमार्गेण न्यासोऽयं पञ्चमो भवेत्।

अनुलोम-विलोमेन लिपि-स्थानेषु केवलम्। मूलं विन्यस्य मेधावी मूलमष्टोत्तरं शतम्। सञ्जप्य व्यापयेद्देहे न्यासः षष्ठोऽयमीरितः।

कालिका-मन्त्रराजस्य षोढान्यासोऽयमीरितः। एवं न्यासं तु यः कुर्यात स मन्त्री भैरवोपमः। स हरः स हरिः साक्षात् स देवी नात्र संशयः। तारायां च तथोन्मुख्यामिमं न्यासं समाचरेत्। अणिमाद्यष्ट-सिद्धीनामीश्वरश्च भवेन्नरः।

अत्रेदमवधेयम्। तन्त्रसारे तथोपलभ्यमानोऽपि वीरतन्त्रपाठः पुस्तकभेद-लेखक-प्रमादादि-दोषादेवेति न समीचीनः। ताराभक्तिसुधार्णवे चोपलभ्यमानवीर-तन्त्रपाठश्चापि-समीचीनः। हरगौरीसम्वादतन्त्रैक-वाक्यतानुरोधात् मन्त्रकल्पद्रुमे पञ्चमन्यासे 'क्लुं क्लुं' इत्यस्य स्थाने 'क्लीं क्लीं' इत्युपलभ्यते, अन्य तारा-भक्तिसुधार्णव-समान एव। तत्रापि सुधार्णव-पाठ एव समीचीनः। 'मुखवृत्त-समारूढ लज्जाद्वन्द्व नसो युगम्, शशाङ्क-शकलारूढं कामशक्रवदुस्वर' इति तत्षडक्षर-मन्त्रोद्धारस्य हरगौरीसम्वादतन्त्रे समुप-लम्भात्। तत्रापि कामशक्रवदोस्वर इति पाठोऽपि न कल्पनीयः। काम इत्युक्त्यैव कामवीजस्य लाभे शक्र-वदीस्वर इत्यस्य वैयर्थ्यापत्तेः।

अथ रुद्रयामलोक्तो गुह्यषोढान्यासः—अं क्रीं क्रीं क्रीं अं क्रीं क्रीं क्रीं अं क्रीं क्रीं क्रीं नमः ललाटे। आं क्रीं क्रीं क्रीं आं क्रीं क्रीं क्रीं आं क्रीं क्रीं क्रीं नमो मुख-वृत्ते इत्यादि पञ्चाशन्मातृकास्थाने न्यसेदिति प्रथमः।

अं हूं हूं अं हूं हूं अं हूं हूं नमः ललाटे। आं हूं-हूं आं हूं-हूं आं हूं-हूं आं हूं-हूं नमः मुखवृत्ते। एवमादि पञ्चाशन्मातृका-स्थाने न्यसेदिति द्वितीयः।

अं ह्रीं ह्रीं अं ह्रीं ह्रीं अं ह्रीं ह्रीं नमः ललाटे। आं ह्रीं ह्रीं आं ह्रीं ह्रीं आं ह्रीं ह्रीं नमः मुखवृत्ते। एवमादिपञ्चाशन्मातृकास्थाने न्यसेदिति तृतीयः॥

आं दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं क्रीं अं दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं क्रीं अं दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं क्रीं नमः ललाटे। एवमादि-पञ्चाशन्मातृकास्थाने न्यसेदिति चतुर्थः।

अं हूं हूं अं हूं हूं अं हूं हूं नमः ललाटे। एवमादिपञ्चाशन्मातृकावर्णैस्वत्तत्स्थानेषु तत्तन्मुद्राभिर्न्यसेदिति पञ्चमो न्यासः।

अं ह्रीं ह्रीं स्वाहा अं ह्रीं ह्रीं स्वाहा अं ह्रीं ह्रीं स्वाहा नमः ललाटे। इति मातृकास्थाने न्यसेदिति षष्ठो न्यासः।

ततो द्वाविंशत्यक्षरेण व्यापकन्यासः॥ रुद्रयामले शृणु देवि प्रवक्ष्यामि गुह्यषोढामिमां प्रिये। न प्रकाश्यमिदं क्वापि यदीच्छेदात्मनो हितम्। कर्प्पूरं मातृकावर्णैः पुटितं मातृकास्थले। तेनैव पुटितं वर्णं न्यसेदत्रैव पार्वति। कूर्च्चबीजद्वयं देवि विन्यस्तव्यं प्रयत्नतः। शक्तिबीजं तथा देवि विन्यसेन्मूलमादितः। दक्षिणे कालिकेत्यादि पूर्वबीजत्रयं न्यसेत्। कूर्चबीजद्वयं देवि लज्जाबीजद्वयं पुनः। विन्यस्तव्यं तथा देवि मिलितं वह्निजायया। ततस्तत्सकलं न्यस्य व्यापकत्वेन देवते। द्वाविंशत्यक्षरो मन्त्रः षोढान्यास इहोदितः॥ अयं तु सिद्धिदो लोके तथा देवासुरेषु च। अवश्यं प्रत्यहं कार्य्यं न पूजा न जपस्तथा। कृतेऽपि साधकश्रेष्ठो महादेव-समो भवेत्, इति ते कथितं किञ्चिद्रहस्यं घोरदक्षिणे। न प्रकाश्यं कदाचित्तु देवेष्वपि तथा नरि। कर्प्पूरं आदिबीजत्रयं मूलम्। मातृकायाः आदितः, अकारादितः।

अथ तत्त्वन्यासः। आत्मविद्या-शिवैस्तत्वैस्तत्त्वन्यासं समाचरेत्॥ मूलमन्त्राद्यखण्ड-सप्तबीजान्ते आत्मतत्त्वाय नमः इति पादादि-नाभिपर्य्यन्तं न्यसेत्॥ मूलमन्त्र-द्वितीयखण्ड-षड्वर्णान्ते विद्यातत्वाय नमः इति नाभितो हृदयपर्य्यन्तं न्यसेत्॥ तृतीयमूलमन्त्र-

खण्ड-सप्तवीजस्वाहान्ते शिवतत्त्वाय नमः इति हृदादि-शिरः पर्य्यन्तं न्यसेदिति तत्त्वन्यासः ॥

ततो बीजन्यासः वीरतन्त्रे—'शिरसि नयनभाले भ्रूयुगे कर्णगण्डे वदन रदन-जिह्वा-स्कन्धदेशे गले च। भुजहृदय-सपार्श्वे पृष्ठनाभौ च रुद्रे कटि गुदकर-पादे सर्वतो मन्त्रवर्णान्। रुद्रे लिङ्गे सर्वतः सर्व-शरीरे।

क्रीं नमश्शिरसि। क्रीं नमः नेत्रयोः। क्रीं नमः ललाटे। हूँ नमः भ्रुवोः। हूँ नमः कर्णयोः। ह्रीं नमः गण्डयोः। ह्रीं नमः मुखे। दं नमः दन्तपंक्त्योः। क्षि नमः जिह्वायाम्। णे नमः स्कन्धयोः। का नमः कण्ठे। लि नमः भुजयोः। के नमः हृदये। क्रीं नमः नाभौ। हूं नमः लिङ्गे। हूं नमः कट्योः। ह्रीं नमः गुदे। ह्रीं नमः करयोः। स्वा नमः पादयोः। हा नमः सर्वाङ्गे।

त्रिशक्तिरत्ने तु—मूर्ध्नि गण्डद्वये नेत्रद्वये श्रोत्र-द्वये तथा। नासिकायुगले भूयो रदच्छदयुगे पुनः। दन्तद्वये भ्रुवोर्मध्ये हृदये गुह्यदेशके। भुजद्वन्द्वे पद-द्वन्द्वे सर्वाङ्गेऽर्णान् प्रविन्यसेत्। वामादि-क्रमतो द्वन्द्वे विज्ञेयो न्यासकर्म्मणीति क्रम उक्तः।

क्रीं नमश्शिरसि। क्रीं नमः वामगण्डे। क्रीं नमः दक्षगण्डे। हूं नमः वामनेत्रे। हूँ नमः दक्षनेत्रे। ह्रीं नमः वामनेत्रे। ह्रीं नमः दक्षनेत्रे। ह्रीं नमः वाम-श्रोत्रे। ह्रीं नमः दक्षश्रोत्रे। द नमः वामनासायाम्। क्षि नमः दक्षनासायाम। णे नमः अधरोष्ठे। का नमः ऊर्ध्वोष्ठे। लि नमः अधोदन्तपंक्तौ। के नमः ऊर्ध्वदन्त-पंक्तौ। क्रीं नमः वामभ्रुवि। क्रीं नमो दक्षभ्रुवि। क्रीं नमः हृदये। हूं नमः गुह्ये। हूँ नमः वामभुजे। ह्रीं नमः दक्षभुजे। ह्रीं नमः वामपादे। स्वा नमः दक्षपादे। हा नमः सर्वाङ्गे।

अथ बीजन्यासः कुमारीतन्त्रे—ब्रह्मरन्ध्रे भ्रुवो-र्मध्ये ललाटे नाभिदेशके। गुह्ये वक्त्रे तु सर्वाङ्गे सप्तबीजानि विन्यसेदिति।

क्रीं नमः ब्रह्मरन्ध्रे। क्रीं नमः भ्रुवोर्मध्ये। क्रीं नमः ललाटे। हूँ नमः नाभौ। हूँ नमः गुह्ये। ह्रीं नमः वक्त्रे। ह्रीं नमः सर्वाङ्गे इति।

अथ वज्रपञ्जरन्यासः । अस्य श्री वज्रपञ्जरन्यासस्य शम्भुऋ्षिः, संस्कृतिश्छन्दः, श्रीदक्षिणकालिकादेवता, मन्त्रसिद्धौ न्यासे विनियोगः । ऋष्यादिन्यासं षडदीर्घभाजा कर्पूरेण षडङ्गन्यासकरन्यासौ विधाय ध्यायेत्—

अम्भोदश्यामलाङ्गीमतिविकटदतीं लोलजिह्वां जटालां । मुण्डं वामे दधानां करकमलतले दक्षिणे चन्द्रहासम् । सृक्कद्वन्द्वास्रधाराधरमुखकमलां प्रेतदोर्वल्लिकाञ्चीं । माध्वीकोन्मत्तनेत्रां शवहृदयगतां नौमि कालीं सकालाम् ।

क्रीं नमः शिरसि । क्रीं नमः दक्षगण्डे । क्रीं नमः वामगण्डे । हूँ नमः दक्षनेत्रे । हूँ नमः वामनेत्रे । ह्रीं नमः दक्षकर्णे । ह्रीं नमः वामकर्णे । द नमः दक्षनासायाम् । क्षि नमः वामनासायाम् । णे नमः अधरोष्ठयोः । का नमः मुखे । लि नमः दन्तपंक्त्योः । के नमः लिङ्गे । क्रीं नमः भ्रूमध्ये । क्रीं नमः हृदि । क्रीं नमः गुदे । हूँ नमः दक्षबाहौ । हूँ नमः वामबाहौ । ह्रीं नमः दक्षपादे । ह्रीं नमः वामपादे । स्वा नमः हा नमः इति द्विधा व्यापकन्यासः ॥

एवं न्यासं विधाय त्रिभुवनवलये ख्यातकीर्त्तिः कवीन्द्रो वज्राङ्गो जीवलोके जयति बहुधनः साधकः सिद्धमन्त्रः । इति वज्रपञ्जरन्यासः ।

ततो मूलमन्त्रेण पञ्चधा सप्तधा नवधा वा सर्वाङ्गेषु व्यापक-न्यासं कुर्य्यात ।*

---

* यहाँ मूल पुस्तक में 'श्री शिवपरशुसम्वादे कालिककुलसर्वस्वे आद्यासहस्रनामस्तोत्रं' पाठ करने हेतु उद्धृत किया गया है ।

तारार्चन चन्द्रिका

कर्पूर-गौर-हरिदम्बर-डम्बरस्य
वक्षःस्थले निजतनोरभिवीक्ष्य बिम्बम् ॥
शंकावृताक्षि-गलिताविरताश्रुपाता—
त्संबोधिता नगसुता हसितावतान्नः ॥

अथ तारार्चनचन्द्रिका। तत्रापि प्रातःकृत्यादीनि पूर्ववत्। भूतशुद्धौ त्वियान्विशेषः हंश इति पञ्चतत्त्वसहितं जीवात्मानं कुण्डलिनीञ्च षट्चक्राणि भेदयित्वा शिरःकमलकर्णिकास्थ-परमशिवे ब्रह्मणि मेलयित्वा नाभौ मायां रक्तवर्णां ध्यायन् तामेव षोडशवारं जपन् वायुं पूरयन् वामनासिकेरित-वायुना वह्निं प्रज्वालयेत्। नासापुटे निरुद्ध्य चतुष्षष्टि-जपेन कुम्भयन् सपापपुरुषं देहं च संशोषयेत्। द्वात्रिंशद्वार-जपेन दक्षनासया वायुं रेचयन् सपापं देहं सन्दाहयेत्। ततः पीताभं वधूबीजं वायुरूपं हृदि ध्यायन् षोडशवारं जपन् दक्षनासापुटेन पूरयित्वा चतुष्षष्ट्या कुम्भयित्वा वामनासया रेचयेत्। भावयेच्च पापपुरुषभस्मप्रोत्सारण-पूर्वक-स्वदेहभस्मसंस्थापनम्। ततो ललाटे शशिवर्णाभं हूंकारं भावयन् वामनासयाऽऽपूर्यामृतं निपात्य चतुष्षष्ट्या कुम्भयित्वा स्वदेहभस्मनि अमृतस्रावनं कुर्यात्। दक्षनासापुटेन रेचयन् द्वात्रिंशद्वारञ्च तन्मन्त्रं जपन् स्वदेहं समुत्पादयेत्। ततः सोहं-मन्त्रेण पञ्चतत्त्व-सहितं जीवं कुण्डलिनीञ्च ब्रह्मणः सकाशान्निष्काश्य

सोऽहंमन्त्रेण पञ्चतत्त्वसहितं जीवं कुंडलिनीञ्च ब्रह्मणः सकाशान्निष्काश्य यथास्थानं समानीय स्थापयेत्। विभावयेच्च तारिणीमयं स्वशरीरमिति। ताराभक्ति-सुधार्णवे अनेकधा भूतशुद्धिमुक्त्वा इयमेव साम्प्रदा-यिकाचारविषयतयानुमोदिता। काम्यं ताराचमनं यथा—'ह्रीं तारायै स्वाहा ह्रीं स्त्रीं हूँ फट् एकजटायै स्वाहा। ह्रीं स्त्रीं हूँ नीलायै स्वाहा' इति प्रतिमन्त्र-मेकैकमाचमनं कृत्वा 'ह्रीं' इति करं प्रक्षाल्य 'स्त्रीं हूँ' इति ओष्ठौ द्विरुन्मृज्य फडिति करं प्रक्षालयेत्। ततो 'मुखे ॐ वैरोचनाय नमः। दक्षनासायाम् ॐ असिताभाय नमः। वामनासायाम् ॐ शङ्खपाण्डराय नमः। दक्षनेत्रे ॐ पद्मनाभाय नमः। वामनेत्रे ॐ मामकायै नमः। दक्षश्रोत्रे ॐ नामकायै नमः। वामश्रोत्रे ॐ तारकायै नमः। नाभौ ॐ पाण्डरायै नमः। वक्षसि ॐ पद्मान्तकाय नमः। शिरसि ॐ यमान्तकाय नमः। दक्षभुजे ॐ विघ्नान्तकाय नमः। वामभुजे ॐ नरकान्तकाय नमः।

अत्र मुखे नासिकयोश्चांगुष्ठतर्ज्जनीभ्याम्। दृशोः श्रोत्रयोश्चांगुष्ठानामाभ्याम्। नाभावंगुष्ठ-कनिष्ठाभ्यां। वक्षसि शिरसि भुजयोश्च मध्यमाभि-स्तिसृभिरंगुलीभिः स्पर्शः कर्त्तव्यः। अन्यत्सर्वं पूर्ववत्। 'ह्रीं स्त्रीं हूँ' इति नीलतन्त्रोक्तं त्र्यक्षरं कुल्लुकामन्त्रं अथवा 'ॐ पद्मे पद्मे महापद्मे पद्मावति ह्रीं ह्रीं स्वाहेति' ब्रह्मसंहितोक्तं सप्तदशाक्षरं कुल्लुकामन्त्रं पूर्वोक्तरीत्या* धृत्वा विचिन्त्य वा विष्णुं सम्पूज्य योनिमुद्रां बध्वा पठेत्। मूलमुच्चार्य्य अस्य श्रीतारिणी-मन्त्रस्याक्षोभ्यऋषिर्बृहतीछन्दः उग्रतारा देवता हूं वीजं फट् शक्तिः ह्रीं कीलकम् ममोग्रताराप्रीति-जन्य-सर्वाभीष्टसिद्धये पुरुषार्थचतुष्टयसिद्ध्यर्थे वा विनियोगः।

---

* भूर्जपत्रे कुङ्कुमादिना लिखितं पट्टवस्त्रादिना वेष्टितं ताम्रादि-धातु-स्थितं ललाटे केशान्ते धारयेत्। ललाट-केशान्ते पंक्त्याकारेण कुल्लुकाक्षराणि लिखितानि विभावयेद्वा।

शिरसि अक्षोभ्यऋषये नमः। मुखे बृहत्यै छन्दसे नमः। हृदये उग्रतारायै देवतायै नमः। गुह्ये हूं बीजाय नमः। पादयोः फट्शक्तये नमः। सर्वाङ्गे ह्रीं कीलकाय नमः।

अत्र ऋषिच्छन्दो देवताबीजशक्तीनां न्यासे अंगुष्ठवर्ज्यास्तस्रोऽङ्गुलयः। कीलकन्यासस्तु व्यस्त-हस्ताभ्यां सर्वाङ्गे इति ऋष्यादि न्यासः।

ततः '१ ह्रां एकजटायै अंगुष्ठाभ्यां नमः, २ ह्रीं तारिण्यै तर्ज्जनीभ्यां स्वाहा, ३ ह्रूं वज्रोदके मध्यमाभ्यां वषट्, ४ ह्रैं उग्रजटे अनामिकाभ्यां हुँ, ५ ह्रौं महापरिसरे कनिष्ठाभ्यां वौषट्, ६ ह्रः पिङ्गोग्रैकजटे करतलकर-पृष्ठाभ्यां फट्' इति करन्यासः।

ततः 'ह्रां एकजटायै हृदयाय नमः इति हृदये मध्यमानामातर्जनीभिः। ह्रीं तारिण्यै शिरसे स्वाहा इति मध्यमातर्ज्जनीभ्याम्। ह्रूं वज्रोदके शिखायै वषट् इति शिखायां अंगुष्टेन। ह्रैं उग्रजटे कवचाय हूँ इति बाह्वोर्दं-शांगुलीभिः। ह्रौं महापरिसरे नेत्रत्रयाय वौषट् इति मध्यमानामातर्ज्जनीभिः। ह्रः पिङ्गोग्रैकजटे अस्त्राय फट् इति मध्यमातर्ज्जनीभ्यामूर्ध्वोर्ध्वक्रमेण तालत्रयं दत्त्वा छोटिकाभिर्द्दिशोदश बध्नीयादिति षडङ्गन्यासः।

ततो मूलमुच्चार्य शिरादिपादान्तं पादादिशिरोऽन्तं हृदादिमुखान्तमिति व्यापकत्रयं न्यसेत्। अथवा मूर्द्धादिपादान्तं प्रणवपुटित-मूलमन्त्रेण सप्तकृत्वो व्यापकतया न्यसेदिति व्यापकन्यासः। ततो रक्तचन्दना-दिना स्वर्णताम्रादिपात्रे चक्रं विलिखेत्तद्यथा—आदौ षट्-कोणं ततो वृत्तं ततोऽष्टदलं ततो भूपुरमिति। तत्राष्टदल-निर्माणकाले 'आः सुरेखे वज्ररेखे हूँ फट् स्वाहा' इति मन्त्रं जपेत्। ततो जवापुष्पादिना 'अभिषेकशताभि-षेक शमय हूँ फट् स्वाहे'ति मन्त्रेण पुष्पाञ्जलिविधिनाऽऽ-च्छाद्य पीठपूजां कुर्य्यात्—

ॐ मण्डूकाय नमः। ॐ कालाग्निरुद्राय नमः। कूर्मा-कारशिलाविशेषमारूढां पङ्कजद्वयधारिणीं ध्यात्वा ॐ ह्रीं आधारशक्तये नमः। ॐ प्रकृत्यै नमः। तन्मूर्ध्नि समा-सीनं नीलाभं ध्यात्वा ॐ कूर्म्माय नमः तदुपरि कुन्द-

पुष्पसन्निभं मूर्ध्ना वसुमतीं धारयन्तं ध्यात्वा ॐ अनन्ताय नमः। तन्मूर्ध्नि तमालश्यामलां नीलेन्दीवरधारिणीं स्फुरत्सागरमेखलां ध्यात्वा ॐ वसुमत्यै नमः। ॐ सुधाम्बुधये नमः। ॐ मणिद्वीपाय नमः। ॐ चिन्तामणिगृहाय नमः। ॐ श्मशानाय नमः। ॐ पारिजाताय नमः। तन्मूले रत्नवेदिकायै नमः। परितः ॐ मुनिभ्यो नमः। ॐ देवेभ्यो नमः। ॐ शिवाभ्यो नमः। ॐ शवेभ्यो नमः। ॐ शवमुण्डेभ्यो नमः। दिक्षु रक्तं वृषाकारं ध्यात्वा ॐ धर्माय नमः। श्यामलं केशरिरूपं ॐ ज्ञानाय नमः। हरिद्राभं भूताकारं ॐ वैराग्याय नमः। इन्द्राकारमिन्द्रनीलाभं ॐ ऐश्वर्य्याय नमः। कोणेषु ॐ अधर्म्माय नमः। ॐ अज्ञानाय नमः। ॐ अवैराग्याय नमः। ॐ अनैश्वर्य्याय नमः। मध्ये ॐ आनन्दमयकन्दाय नमः। ॐ सम्विन्नालाय नमः। ॐ सर्वतत्त्वात्मकपद्माय नमः। ॐ प्रकृत्यात्मकपत्रेभ्यो नमः। ॐ विकारमयकेसरेभ्यो नमः। ॐ पञ्चाशद्वर्णवीजाढ्यकर्णिकायै नमः। अं अर्कमण्डलाय द्वादशकलात्मने नमः। उं सोममण्डलाय षोडशकलात्मने नमः। मं वह्निमण्डलाय दशकलात्मने नमः। सं सत्वाय नमः। रं रजसे नमः। तं तमसे नमः। आं आत्मने नमः। अं अंतरात्मने नमः। पं परमात्मने नमः। ह्रीं ज्ञानात्मने नमः। पद्मस्याष्टसु पत्रेषु पूर्वादि-वामावर्त्ततः वराभयधारिणीः पीठशक्तीः पूजयेत्।

१ ॐ रत्यै नमः, २ ॐ प्रीत्यै नमः, ३ ॐ प्रियायै नमः, ४ ॐ कान्त्यै नमः, ५ ॐ कामिन्यै नमः, ६ ॐ काममालिन्यै नमः, ७ ॐ कन्दर्पपद्‌लिन्यै नमः, ८ ॐ दुर्गायै नमः, ९ ॐ भवान्यै नमः, ऐं परायै अपरायै परापरायै ह्सौः सदाशिवमहाप्रेतपद्मासनाय नमः। इति पीठपूजां कृत्वा।

'ॐ ह्रीं मूलम् ह्रीं ॐ' इति सप्तकृत्वो जपेन रक्षां विधाय। क्रमोत्क्रमद्विरावृत्त्या मातृकावर्णैर्मूलमन्त्रं ग्रथित्वा जपेदिति मन्त्रशुद्धिं कृत्वा।

'मूलं फट्' इति प्रोक्षणीजलेन पूजाद्रव्याणि प्रोक्षये-दिति द्रव्यशुद्धिं कुर्य्यात् ।

अथ विशेषार्घस्थापनम् । स्ववामाग्रभागे त्रिकोण-वृत्त-चतुरस्रमण्डलं विधाय 'ऐं ह्रीं व्यापकमण्डलाय* नमः' इति संपूज्य आधारं निधाय 'फट्' इति शंखा-धारं शङ्खञ्च प्रक्षाल्य तन्मण्डले संस्थाप्य त्रिपदिकायां 'मं वह्निमण्डलाय दशकलाव्याप्तात्मने नमः' इति संपूज्य ।

'अं सूर्यमण्डलाय द्वादशकलाव्याप्तात्मने नमः' इत्यर्घपात्रं संपूज्य मूलमन्त्रेण विमलजलेन शङ्खमा-पूर्य 'उं चन्द्रमण्डलाय षोडशकलाव्याप्तात्मने नमः' इति जलं संपूज्य ।

तत्र विल्वपत्र - रक्तचन्दन-वज्रपुष्प - दूर्वाक्षतानि निक्षिप्य अर्घपात्राग्नेये—

ह्रां एकजटायै हृदयाय नमो नमः । ऐशान्यां ह्रीं तारिण्यै शिरसे स्वाहा नमः । नैर्ऋत्ये ह्रूं वज्रोदके शिखायै वषट् नमः । वायव्ये ह्रैं उग्रजटे कवचाय हुँ नमः । मध्ये ह्रौं महापरिसरे नेत्रत्रयाय वौषट् नमः । परितः ह्रः पिङ्गोग्रैकजटे अस्त्राय फट् नमः । इति षडङ्गानि संपूज्य शङ्खोपरि मूलं दशधा प्रजप्य—

ॐ गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति ।
नर्मदे सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिन्सन्निधिं कुरु ॥

इति मन्त्रेणाङ्कुशमुद्रयाऽर्घे तीर्थान्यावाह्य मत्स्य-मुद्रयाऽच्छाद्य फट् इति संरक्ष्य हूँ इत्यवगुण्ठ्य धेनु-मुद्रयाऽमृतीकृत्य चक्रमुद्रया बोधयेदिति ।

ततः स्वदक्षिणे प्रोक्षणीपात्रमद्भिः पूरयित्वा तत्र किञ्चिदर्घाम्बु दत्त्वा साधारकमन्यत्पात्रं पुरतः स्थाप-येत् । तत्पार्श्वे वामक्रमेण त्रिकोणवृत्तचतुरस्रात्मक-

* अत्र व्यापकपदापादानं मन्त्रकल्पद्रुमानुसारेण अत्रैव सूर्यमण्डलादि-त्रयाणां व्याप्यतया प्रवेशात् मण्डलान्तरेषु सर्वेष्वेवास्योपयोगाच्च मयाप्यनुमोदितम् ।

षण्मण्डलानि चन्दनादिना विरचय्य ॐ आधारशक्तये नमः। इति सम्पूज्य तेषामुपरि आधारान्निधाय तदुपरि क्रमेण १ पाद्यपात्रम्, २ तद्वामेऽर्घपात्रम्, ३ तद्वामे आचमनीयपात्रम्, ४ तद्वामे मधुपर्कपात्रम्, ५ तद्वामे पुनराचमनीयपात्रम्, ६ तद्वामे स्नानीयपात्रम्, संस्थाप्य पाद्यपात्रे जलं पूरयित्वा श्यामाकदूर्वाब्ज-विष्णुक्रान्ता-द्रव्याणि तथाऽर्घपात्रे जलं दत्त्वा गन्ध-पुष्पाक्षतयवकुशाग्रतिलसर्षपदूर्वादलानि। आचमनीय-पात्रे जलं जातीलवङ्गकङ्कोलानि। मधुपर्कपात्रे माक्षिकं मध्वधिकं दधिसर्पिः सितासमं जलं तु सर्वतः स्वल्पमित्येकीकृत्य मधुपर्कं निर्म्माय धारयेत।

पुनराचमनीयपात्रे शुद्धजलम्। स्नानीयपात्रे गन्धजले निःक्षिपेत्। ततः किञ्चिच्छङ्खामृतं पुष्पादिना समुद्धृत्य सर्वेषु पात्रेषु निःक्षिप्य सर्वं दिव्यं विचिन्तयेदिति।

ततः करकच्छपिकया पुष्पाञ्जलिमादाय ध्यायेत्तद्यथा—तस्मिन् विश्वव्यापके वारिणि आःकाराद्रक्त-पङ्कजं तदुपरि टांकाराच्छ्वेतपंकजम् तदुपरि नीलं हूंकारम् हूं बीजविभूषितां कर्त्रिकाम् तदुपरि काम-कलात्मना वक्ष्यमाणस्वरूपेण वा परिणताम् हृदय-पद्ममध्ये विद्युदाकृतिं स्फुरन्तीं सुषुम्नावर्त्मना सहस्र-दलकमले नीत्वा मानसोपचारैः संपूज्य वायुवीजं जपन्वामनासया वायुना विरचेन क्रमेण तेजोमयीमिष्ट-देवतां पुष्पाञ्जलि-द्वारा चक्रादिगतकल्पितमूर्त्तेर्ब्रह्मरन्ध्र द्वारा प्रवेश्य स्थीरीभूतां भावयेत। तन्त्रसारे फेत्कारिणी तन्त्रे पुष्पाञ्जलिं विरच्याथात्माभेदेन चिन्तयेत्—

प्रत्यालीढपदार्पिताङ्घ्रि शवहृद्घोराट्टहासापरा।
खड्गेन्दीवरकर्त्रिखर्प्परभुजा हूँकारवाजीद्भवा॥
खर्वा नीलविशालपिङ्गलजटाजूटैकनागैर्युता।
जाडयं न्यस्य कपालके त्रिजगतां हन्त्युग्रतारा स्वयं
(गन्धर्वतन्त्रे)

श्मशानं तत्र संचिन्त्य तत्र कल्पद्रुमं स्मरेत्। तन्मूले मणिपीठञ्च नानामणिविभूषितम्। शिवाभिर्बहु-

मांसास्थिमोदमानाभिरन्ततः। चतुर्दिक्षु शवा मुण्डा-शिवाङ्गारास्थिभूषिताः। तन्मध्ये भावयेद्देवीं यथोक्त-ध्यानयोगत" इति। नीलतन्त्रे।

प्रत्यालीढपदां घोरां मुण्डमालाविभूषिताम्।
खर्वां लम्बोदरीं भीमां व्याघ्रचर्म्मावृतां कटौ।
नवयौवनसम्पन्नां पञ्चमुद्राविभूषिताम्। चतुर्भुजां ललज्जिह्वां महाभीमां वरप्रदाम्। खड्गकर्त्रिधरां सव्ये वामे मुण्डोत्पलान्विताम्। पिङ्गोग्रैकजटां ध्याये-न्मौलावक्षोभ्यभूषिताम्। बालार्कमण्डलाकारलोचन-त्रयभूषिताम्। प्रज्वलत्पितृभूमध्यगतां दंष्ट्रा करालिनीम्। शावेशस्मेरवदनामस्थ्यलंकारभूषिताम्। विश्वव्याप-कतोयान्तः श्वेतपद्मोपरिस्थितामिति।

मंत्रचूडामणौ, तस्योपरि महादेवीं खर्वां नीलमणि-प्रभाम्। लम्बोदरीं व्याघ्रचर्मसमावृतनितम्बिनीम्। पीनोन्नतपयोभारां रक्तवर्तुललोचनाम्। ललज्जिह्वां महाभीमां दंष्ट्रा कोटि-समुज्ज्वलाम्। नीलोत्पल-लसन्मालां बद्धजूटां भयङ्करीम्। श्वेतास्थिपट्टिकायुक्त-कपाल-पञ्चशोभिताम्। ललाटे रक्तनागेन कृतकर्णाव-तंसकाम्। अतिशुभ्रमहानाग कृतहारमहोज्ज्वलाम्। दूर्वादलश्यामनागकृतयज्ञोपवीतिनीम्। चतुर्भुजां रक्त-मांस खण्डमण्डित-मुष्टिकाम्। जटाजूटाक्षसूत्रेण शोभितां तीक्ष्णधारया। खड्गेन दक्षिणस्योर्ध्वे शोभितां वीरनादिनीम्। तदधस्ताद्बीजवृन्तकर्त्रिकालंकृतां पराम्। वामोर्ध्वे रक्तमाल्येन दिगम्बर-मनोहराम्। दधतीं नीलपद्मञ्च तदधस्तात्कपालकम्। जगतां जाड्य-संयुक्तं दधतीं कुन्दसन्निभम्। धूम्राभनाग-सन्दोह-कृत-केयूर सत्वराम्। सुवर्णवर्णनागेन कंकणो-ज्ज्वलपाणिकाम्। शुभ्रवर्णमहादेवकृतसद्विमलासनाम्।

निर्यन्त्रण-भिया तद्वत्संकुचत्प्रपदात्मिकाम्।
शवपादद्वयारूढवामपादां हसन्मुखीम्॥
तस्यैव कण्ठमूलस्थदक्षपादसरोरुहाम्।
कुन्दाभनागसंशोभिकटिसूत्रां त्रिलोचनाम्॥
ईषद्रक्तेन नागेन कृतनूपुरपल्लवाम्।
सद्यश्छिन्नगलद्रक्तमुण्डै रक्तविभूषणैः॥

अन्योन्यकेशग्रथितैः पादपद्मविलम्बितैः ।
पञ्चाशद्भिर्म्महामालाशोभितां परमेश्वरीम् ॥
ज्वलच्चितामध्यसंस्थां द्वीपिचर्म्मोत्तरांशुकाम् ।
अक्षोभ्यनागसम्बद्धजटाजूटां वरप्रदामिति ॥

प्रत्यालीढ-लक्षणं यथा सङ्गीतरत्नाकरे । वामो यत्र निषण्णोरुरन्तरे पूर्व-मानतः । दक्षिणं चरणं चाग्रे पञ्चतालप्रसारितम् । त्र्यस्रौ द्वावपि तद्विद्यादालीढन्तु सदैवतम् । आलीढाङ्घ्रिविपर्य्यासात्प्रत्यालीढमुदा कृत-मिति । तालं वितस्तिः । तालमात्रं वितस्तिकेत्युक्तेः । त्र्यस्रौ वक्रौ ।

पञ्चमुद्राविभूषितामित्यभिधायाह वीरतन्त्रे । योनिश्च भूतिनी चैव वीजाख्या दैत्यधूमिनी । लेलि-हानेति संगुप्ताः पञ्चमुद्राः प्रकीर्तिताः । योनिर्म्माया धराधेनुर्वधूः कूर्चं क्रमाद्विदुः । वीजान्यासां लक्षणन्तु क्रमेण कथयाम्यहम् ॥

योनिः ऐं । माया ह्रीं । धराधेनुः वं । वधूः स्त्रीं । कूर्च्चम् हूँ । मुद्रालक्षणं पद्धतिशेषेऽन्वेष्टव्यम् ।

श्वेतास्थिपट्टिकाकपालपञ्चकं विभूषणम् मुकुटवत् । एवं ध्यात्वा पुष्पाञ्जलिं पुष्पाणि च प्रागुक्तरीत्या यन्त्रादौ प्रक्षिपेत । तत आवाहनमुद्रया मूलान्ते श्रीतारिणि इहावह इहावह ।

स्थापनमुद्रया मूलान्ते श्री तारिणि इह तिष्ठ इह तिष्ठ, सन्निधापनमुद्रया मूलान्ते श्रीतारिणि इह सन्निधेहि इह सन्निधेहि, सांन्नरोधनमुद्र । मूलान्ते श्रीतारिणि इह सन्निरुद्ध्यस्व इह सन्निरुद्ध्यस्व । सम्मुखीकरणमुद्रया मूलान्ते श्रीतारिणि इह सम्मुखी-भव इह सम्मुखीभव इति पञ्चमुद्राभिरावाहनादि कृत्वा शालग्रामवर्जितयन्त्रादौ प्राणप्रतिष्ठां कुर्य्यात् । कुण्ड-लिन्यां न प्राणप्रतिष्ठा शालाग्रामशिलात्वाविशेषात् । लेलिहानमुद्रया यन्त्रादौ देव्या हृदये करं दत्त्वा । आं ह्रीं क्रों हंसः तारिण्याः प्राणा इह प्राणाः । आं ह्रीं क्रों हंसः तारिण्या जीव इह स्थितः । आं ह्रीं क्रों हंसः तारिण्याः सर्वेन्द्रियाणि इह स्थितानि । आं ह्रीं क्रों हंसः तारिण्याः वाङ्मनश्चक्षुः श्रोत्रघ्राणप्राणा इहा-

गत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा इति प्राणान्प्रतिष्ठाप्य अवगुण्ठन-मुद्रया मूलान्ते श्रीतारिणि इहावगुण्ठिता भव इत्यवगुण्ठ्य पुष्पेण देवतायास्तत्तदङ्गेषूपास्य-मन्त्रस्य षडङ्गन्यासेन सकलीकृत्य वमिति धेनुमुद्रयाऽमृतीकृत्य महामुद्रया परमीकृत्य प्रागुक्ता योन्यादि-पञ्चमुद्राः स्व-स्व-वीज-पुरःसराः प्रदर्शयेत । ततो मूल-जप-पुरःसरमर्घोदकेन पूजा चक्रस्य त्रिः प्रोक्षणाद्देवशुद्धिं कुर्य्यात । ततः षोडशोपचार-पञ्चोपचारान्यतरोपचारेण यथालाभमर्च्चयेत् । उपचारेषु सर्वेषु यत्किञ्चिद्दुर्लभं भवेत । तत्सर्वं मनसि ध्यात्वा पुष्पक्षेपेण कल्पयेत् ।

ततः स्वागतमुद्रां प्रदर्श्य मूलान्ते 'श्रीतारिणि देवि स्वागतं ते इदमासनमास्यताम् ।'

ततः पाद्यपात्रस्थजलमुद्धृत्य 'ॐ मूलं श्रीमदेकजटे वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा' इति देव्याः पादयोर्दत्त्वा 'एतत्पाद्यं श्रीमदुग्रतारायै नमः' इत्यर्घोदकेनोत्सृज्य पाद्यमुद्रां प्रदर्शयेत ॥

ततोऽर्घपात्रस्थ-जलमुद्धृत्य मू 'ॐ लं श्रीमदेकजटे वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा' इति देव्याशिरसि दत्त्वा 'एषोऽर्घः श्रीमदुग्रतारायै स्वाहा' इति विशेषार्घोदकेनोत्सृज्यार्घमुद्रां प्रदर्शयेत ॥

तत आचमनपात्रस्थजलमुद्धृत्य 'ॐ मूलं श्रीमदेकजटे वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा' इति देव्या मुखकमले दत्त्वा 'एतदाचमनीयं श्रीमदुग्रतारायै स्वधा' इत्यर्घोदकेनोत्सृज्याचमनमुद्रां प्रदर्शयेत ॥

ततो मधुपर्कमुद्धृत्य 'ॐ मूलं श्रीमदेकजटे वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा' इति मधुपर्कं देव्या मुखकमले दत्त्वा 'एष मधुपर्कः श्रीमदुग्रतारायै स्वधा' इत्यर्घोदकेनोत्सृज्य मधुपर्कमुद्रां प्रदर्शयेत । ततः पुनराचमनीयमाचमनीयवद् दद्यात ।

ततः स्नानीय - पात्रस्थ - जलमुद्धृत्य 'ॐ मूलं श्रीमदेकजटे वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा' इति शतकृत्वो दशकृत्वो यथाशक्ति वा देव्याः सर्वाङ्गे दत्त्वा 'एतत्स्नानीयं श्रीमदुग्रतारायै नमः' इत्यर्घोदकेनोत्सृज्य स्नानमुद्रां प्रदर्शयेत ॥

मूलेनाङ्गप्रोक्षणं विभाव्य ॥ ततः प्रोक्षणपूजन-पूर्वकं रक्तवर्णं सूक्ष्ममच्छिद्रमनुपभुक्तं वस्त्रयुगल-मादाय 'ॐ मूलं श्रीमदेकजटे वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा' इति देव्या वामहस्ते दत्त्वा 'एतद्वस्त्रयुगलं बृहस्पतिदैवतं श्रीमदुग्रतारायै नमः' इत्यर्घोदकेनोत्सृज्य वस्त्रमुद्रां प्रदर्श्य पुनराचमनीयं दद्यात् ।

ततः प्रोक्षण-पूजन-पूर्वकं भूषणमादाय 'ॐ मूलं श्री मदेकजटे वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा' इति देव्या वाम-हस्ते दत्वा 'एतद्भूषणममुकदैवतं श्रीमदुग्रतारायै नमः' इत्यर्घोदकेनोत्सृज्य भूषणमुद्रां दर्शयेत् ॥

ततः प्रमाणोक्तमुत्तमगन्धं प्रोक्षणपूजनपूर्वकं कनिष्ठया आदाय 'ॐ मूलं श्रीमदेकजटे वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा' इति देव्याः सर्वाङ्गे दत्त्वा 'एष गन्धो गन्धर्व-दैवतः श्रीमदुग्रतारायै नमः' इत्यर्घोदकेनोत्सृज्य गन्धमुद्रां प्रदर्शयेत् ॥

एवमेव रक्तचन्दनं सिंदूरं अक्षतञ्च तत्तद्वाक्येन दद्यात् ॥ ततः प्रमाणोक्तमुत्तमपुष्पं प्रोक्षणपूजन-पूर्वकमंगुष्ठतर्ज्जनीभ्यामुद्धृत्य 'ॐ मूलं श्रीमदेकजटे वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा' इति देव्याः सर्वाङ्गे दत्त्वा 'एतत्पुष्पं वनस्पतिदैवतं श्रीमदुग्रतारायै वौषट्' इत्यर्घोद-केनोत्सृज्य पुष्पमुद्रां प्रदर्शयेत् ॥

एवं बिल्वपत्रादिकं देयम् ॥ जवा-करवीरादि-पुष्पमाल्यं यथाशक्ति दद्यात् ॥ ततो विहितपात्रे निर्धूमाङ्गारेषु विहितधूपं निःक्षिप्य फडिति प्रोक्षणी-जलेन सम्प्रोक्ष्य 'नम' इति सम्पूज्य वामहस्ततर्ज्जन्या धूपपात्रं स्पृशन् 'ॐ मूलं श्रीमदेकजटे वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा' इति देव्याः समीपं नीत्वा 'एष धूपो विष्णु-दैवतः श्रीमदुग्रतारायै नमः' इत्यर्घोदकेनोत्सृज्य 'ॐ जयध्वनि मंत्रमातः स्वाहा' इति घण्टां सम्पूज्य वामेन वादयन् दक्षिण-मध्यमानामा-मध्यपर्वणि अंगुष्ठाग्रेण धूपपात्रं धृत्वा देव्याः पादादि-नाभ्यन्तं धूपयेत् ॥

ततः कर्पूर-गर्भिण्या वर्त्तिकया घृतदीपं प्रज्वाल्य धूपवत्प्रोक्षणपूजने विधाय वामहस्त-मध्यमया दीप-पात्रं स्पृशन् 'ॐ मूलं श्रीमदेकजटे वज्रपुष्पं प्रतीच्छ

स्वाहा' इति देव्याः समीपं नीत्वा 'एष दीपः श्रीमदुग्रतारायै नमः' इत्यर्घोदकेनोत्सृज्य दीपमुद्रां प्रदर्श्य मूलगायत्र्या मध्यमांगुष्ठाभ्यां दीपपात्रमुत्तोल्य घण्टां वादयन् देव्याः पादादि-नाभ्यन्तं दीपयेत्।

ततः पायसादि-नैवेद्यं स्वर्णादिपात्रे परिविष्य तत्पात्रं चतुरस्र-मण्डले साधारं निधाय फडिति प्रोक्षणी-जलेन सम्प्रोक्ष्य 'यं' इति वायुबीजेन नैवेद्य-दोषान् संशोष्य 'रं' इति बीजेन तान् सन्दाह्य दक्षकराग्रेण स्पृष्ट्वा 'वं' इति बीजेनामृतीकृत्य उभाभ्यां कराभ्यां तत्पात्रं स्पृष्ट्वा मूलमन्त्रेणाष्टकृत्वोऽभिमन्त्र्य धेनुमुद्रां प्रदर्श्य 'गंधपुष्पादिभिर्नैवेद्याय नमः' इति सम्पूज्य वामांगुष्ठतर्जनीभ्यां नैवेद्यपात्रं स्पृशन् 'ॐ मूलं श्रीमदेकजटे वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा' इति देव्याः समीपं नीत्वा 'इदममुकनैवेद्यं विष्णुदैवतं श्रीमदुग्रतारायै नमः' इत्यर्घोदकेनोत्सृज्य नैवेद्यमुद्रां प्रदर्श्य मूलमुच्चार्य 'अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा' इति देव्यै जलं दत्वा वामहस्तेन विकचोत्पल-सदृशीं ग्रासमुद्रां प्रदर्शयन् दक्षिणहस्तेन संयुक्तैः कनिष्ठानामिकांगुष्ठैः १ ॐ प्राणाय स्वाहा, २ तर्जनीमध्यमांगुष्ठैः ॐ अपानाय स्वाहा, ३ मध्यमानामांगुष्ठैः ॐ समानाय स्वाहा, ४ तर्जनी-मध्यमानामांगुष्ठैः ॐ उदानाय स्वाहा, ५ सर्वांगुलिभिः ॐ व्यानाय स्वाहा इति प्राणादि-पञ्चग्रासमुद्राः प्रदर्श्य—

'श्रीतारे देवि देवेशि सर्वतृप्तिकरं परम्।
अखण्डानंदसम्पूर्णं गृहाण जलमुत्तमम्॥'

इति पानीयं दत्वा चामरादिना संवीज्य स्तुत्वा देवतां तृप्तां विभाव्य 'अमृतापिधानमसि स्वाहा' इति प्रत्यपोशानं जलं दद्यात्।

ततस्ताम्बूलं फडिति सम्प्रोक्ष्य 'नम' इति सम्पूज्य 'ॐ मूलमुच्चार्य श्रीमदेकजटे वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा' इति मन्त्रेण देव्यग्रे नीत्वा 'इदं ताम्बूलं श्रीमदुग्रतारायै नमः' इत्यर्घोदकेनोत्सृजेत्।

'ॐ मूलं श्रीमदेकजटे वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा

श्रीमदुग्रतारां तर्पयामि स्वाहा' इति विशेषार्घोदकेन त्रिः सन्तर्प्य, पुष्पाञ्जलि-त्रयं दद्यात्।

ततो योनिमुद्रां प्रदर्श्य 'देवि! आज्ञापय भक्त्या परिवारानहं पूजयामी'ति सम्प्रार्थ्याज्ञां प्राप्तां विभाव्यावरणपूजामारभेत। तत्रादौ महीगृह-चतुर्दिक्षु १ गणेश, २ वटुक, ३ क्षेत्रपाल, ४ योगिनीः सम्पूज्य सन्तर्प्य देवी-मौलौ 'ॐ हूं अक्षोभ्य वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा' इति मन्त्रेणाक्षोभ्यं सम्पूजयेत्।

यन्त्रस्य षट्सु कोणेषु १ 'आग्नेयकोणे ह्रां एकजटायै हृदयाय नमो नमः, २ ऐशान्यां ह्रीं तारिण्यै शिरसे स्वाहा नमः, ३ नैर्ऋत्याम् ह्रूँ वज्रोदके शिखायै वषट् नमः, ४ वायव्ये ह्रैं उग्रजटे कवचाय हुं नमः, ५ मध्ये ह्रौं महापरिसरे नेत्रत्रयाय वौषट् नमः, ६ परितः ह्रः पिङ्गोग्रैकजटे अस्त्राय फट् नमः' इति नमोन्तेन सम्पूज्य स्वाहान्तेन सन्तर्पयेच्च॥

अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं प्रथमावरणार्च्चनम्॥

इति पुष्पाञ्जलिं मूलदेव्यै दद्यात्॥१॥

'१ ऐं दिव्यौघगुरुभ्यो* नमः, २ ऐं सिद्धौघगुरुभ्यो† नमः, ३ ऐं मानवौघगुरुभ्यो‡ नमः, ४ ऐं गुरुभ्यो नमः, ५ ऐं परमगुरुभ्यो नमः, ६ ऐं परापरगुरुभ्यो नमः, ७ ऐं परमेष्ठिगुरुभ्यो नमः,' इति

---

* १ ॐ ऊर्ध्वकेशानन्दनाथ, एवं २ व्योमकेश, ३ नीलकण्ठ, ४ वृषध्वज—एते दिव्यौघाः।

† १ ॐ वशिष्ठानन्दनाथ, एवं २ कूर्म, ३ महेश्वर, ४ मीननाथ, ५ हरिनाथ—एते सिद्धौघाः।

‡ १ ॐ तारावत्यम्बा, २ भानुमत्यम्बा, ३ जायम्बा, ४ त्रिद्याम्बा, ५ महोदर्यम्बा, ६ सुखानन्दनाथ, ७ परानन्दनाथ, ८ पारिजातानन्द, ९ कुलेश्वरानन्द, १० त्रिपुरानन्द, ११ ॐ हेरम्बा —एते मानवौघाः।

गुरुपंक्तीरभ्यर्च्य 'ऐं दिव्यौघगुरूंस्तर्पयामि स्वाहा' इत्यादिना तर्पयेच्च ।

अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले ।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं द्वितीयावरणार्च्चनम् ॥

इति पुष्पाञ्जलिं दद्यात् ॥२॥

ततोऽष्टदलमूलेषु '१ पूर्वे मं महाकाल्यै नमः, २ रुं रुद्रायै नमः, ३ उं उग्रायै नमः, ४ भीं भीमायै नमः, ५ घों घोरायै नमः, ६ भ्रां भ्रामर्य्यै नमः, ७ मं महारात्र्यै नमः, ८ भैं भैरव्यै नमः' इति सम्पूज्य 'मं महाकालीं तर्पयामि स्वाहा' इत्यादिनाऽष्टौ सन्तर्पयेच्च ।

अथवा 'ॐ मं महाकालि वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा श्रीमहाकाल्यै नमः' इत्यादिना सम्पूजयेत्तथैव सन्तर्पयेच्च ॥

ततोऽष्टदलाग्रभागेषु '१ पूर्वदिक्पत्रे* आं ब्रह्माण्यै नमः, २ ईशाने इं नारायण्यै नमः, ३ उत्तरे ॐ माहेश्वर्य्यै नमः, ४ वायव्ये ऋं चामुण्डायै नमः, ५ पश्चिमे लृं कौमार्य्यै नमः, ६ नैर्ऋत्ये ऐं अपराजितायै नमः, ७ याम्ये औं वाराह्यै नमः, ८ आग्नेये अः नारसिंह्यै नमः' इत्यष्टौ सम्पूज्य 'आं ब्रह्माणीं तर्पयामि स्वाहेत्यादिनाऽष्टौ सन्तर्पयेत ॥ 'ॐ आं ब्रह्माणि वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा श्रीब्रह्माण्यै नमः' इत्यादिना वा सम्पूज्य तथैव सन्तर्पयेच्च ॥

ततः पूर्वदिशि 'ॐ वैं वैरोचन वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा श्रीब्रह्माण्यै नमः' इत्यादिना वा सम्पूज्य तथैव सन्तर्पयेच्च ॥

ततः '१ पूर्वदिशि ॐ वैं वैरोचन वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा श्रीवैरोचनाय नमः, २ उत्तरे ॐ शङ्खपाण्डर वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा श्रीशङ्खपाण्डराय नमः, ३ पश्चिमे ॐ पं पद्मनाभ वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा श्रीपद्मना-

* देवी-सम्मुखे ।

भाय नमः, ४ दक्षिणे ॐ अं असिताभ वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा श्री असिताभाय नमः' एवं सम्पूज्य 'ॐ वैं वैरोचनं वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा श्रीवैरोचनं तर्प्पयामि स्वाहा' इत्यादिना चतुरस्तर्प्पयेत ॥

तत '१ आग्नेये ॐ मां मामके वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा श्रीमामकायै नमः, २ ईशाने ॐ नां नामके वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा नामकायै नमः, ३ ॐ पं पाण्डरं वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा श्रीपाण्डरायै नमः ४ ॐ वां तारिके वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा श्रीतारिकायै नमः' एवं सम्पूज्य 'ॐ मां मामके वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा श्री मामकां तर्प्पयामि स्वाहे'त्यादिना चतुरस्तर्पयेत् ॥

ततो '१ भूपुर-पूर्वद्वारि ॐ पं पद्मान्तक वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा श्रीपद्मान्तकाय नमः, २ उत्तर-द्वारि ॐ यं यमान्तक वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा श्रीयमान्तकाय नमः, ३ पश्चिमे ॐ विं विघ्नान्तक वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा श्रीविघ्नान्तकाय नमः, ४ दक्षिणे ॐ नं नरकान्तक वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा श्रीनरकान्तकाय नमः' एवं सम्पूज्य 'ॐ पं पद्मान्तक वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा श्रीपद्मान्तकं तर्पयामि स्वाहा' एवं क्रमेण चतुरस्तर्पयेत् ॥

अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागत-वत्सले ।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं तृतीयावरणार्च्चनम् ॥

इति पुष्पाञ्जलिं मूलदेव्यै दद्यात् ॥३॥

ततः '१ पूर्वे ॐ लं इन्द्र वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा श्रीइन्द्राय नमः, २ आग्नेय्यां ॐ रं अग्ने वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा श्रीअग्नये नमः, ३ याम्ये ॐ यं यम वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा श्रीयमाय नमः, ४ नैर्ऋत्ये ॐ क्षं निर्ऋते वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा श्रीनिर्ऋतये नमः, ५ प्रतीच्यां ॐ वं वरुण वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा श्रीवरुणाय नमः, ६ वायव्ये ॐ यं वायो वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा श्रीवायवे नमः, ७ उत्तरे ॐ कुं कुवेर वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा श्रीकुवेराय नमः, ८ ऐशान्यां

ॐ ह्रौं ईशान वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा श्रीईशानाय नमः, ६ ॐ ह्रीं अनन्त वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा श्रीअनन्ताय नमः, १० ॐ ब्रह्मन् वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा श्रीब्रह्मणे नमः' इति दशदिक्पालान् सम्पूज्य 'ॐ लं इन्द्र वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा श्रीइन्द्रं तर्पयामि स्वाहा' एवं क्रमेण दशदिक्पालान् तर्पयेच्च ॥

अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले ।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं चतुर्थावरणार्च्चनम् ॥

इति मूलदेव्यै पुष्पाञ्जलिं दद्यात ॥४॥

ततो भूपुर-बाह्ये '१ प्राच्यां ॐ वं वज्र वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा श्रीवज्राय नमः, २ ॐ शं शक्ते वज्र-पुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा श्रीशक्त्यै नमः, ३ ॐ दं दण्ड वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा श्रीदण्डाय नमः, ४ ॐ खं खड्ग वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा श्रीखड्गाय नमः, ५ ॐ आं पाश वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा श्रीपाशाय नमः, ६ ॐ क्रों अंकुश वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा श्री अंकुशाय नमः, ७ ॐ गं गदे वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा श्रीगदायै नमः, ८ ॐ त्रिं त्रिशूल वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा श्रीत्रिशूलाय नमः, ९ ॐ चं चक्र वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा श्रीचक्राय नमः, १० ॐ पं पद्म वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा श्रीपद्माय नमः, एवं संपूज्य 'ॐ वज्र वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा वज्रं तर्पयामि स्वाहा' एवं क्रमेण दशायुधान् सन्तर्पयेत ॥

अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले ।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं पञ्चमावरणार्च्चनम् ॥

इति मूलदेव्यै पुष्पाञ्जलिं दद्यात ॥५॥

आवरणपूजादौ पूर्वा दिक् देवीसम्मुखमेव, तद्दक्षिण भाग एव दक्षिणा दिक् वामभागस्तूत्तरा दिक्, पश्चाद्भागः पश्चिमा दिक्, तदनुसारेण विदिक्कल्पनीया ॥ अशक्तसाधकपक्षे मूलदेवीपूजायामेव 'साङ्ग-सायुधसवाहनसपरिवार श्रीमदुग्रतारायै नमः' इति प्रवेश्य नित्यपूजा निर्वाह्या ॥

ततः रक्तपुष्पादिभिः 'ह्रीं स्त्रीं हूं तारा - कुल्लुके वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा' इति मन्त्रेण स्वमूर्द्धनि कुल्लुकां पूजयेत ।।

ततो योनिमुद्रां प्रदर्श्य 'ॐ मूलं श्रीमदेकजटे वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा साङ्गायै सायुधायै सवाहनायै सपरिवारायै श्रीमदुग्रतारायै नमः' इति गन्धपुष्पाक्षतजलैर्मूलदेवीं त्रिः संपूज्य 'ॐ मूलं श्रीमदेकजटे वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा साङ्गां सायुधां सवाहनां सपरिवारां श्रीमदुग्रतारां तर्प्पयामि स्वाहा' इति त्रिः सन्तर्प्पयेत् । ततः कवचं पठेत् ।।

अथ जपेति कर्तव्यता सा च पुरश्चरण-जपेऽत्यात्रश्यकी नित्यजपेऽप्यविरुद्धा फलाधिक्यार्थं कर्तव्येति लिख्यते । 'ह्रीं ह्रीं ह्रीं' इति मन्त्रस्य दशकृत्वो जपेन मुखं संशोध्य 'हूं हूं हूं' इति मन्त्रस्य दशकृत्वो जपेन जिह्वां संशोध्य 'हूं स्त्रीं सौः' इति मन्त्रस्य दशधा जपेन शापोद्धारं कृत्वा 'ह्रीं स्त्रीं हूं' इति तारा-कुल्लुका-मन्त्रमष्टोत्तरशतवारं मूर्ध्नि जपेत । 'श्रीं अं अक्षोभ्य स्वाहा श्रीं' इति दशवारं जपेत ।

ततः प्राणायाम - ऋष्यादि-न्यास - करन्यासाङ्गन्यास-व्यापक-न्यासान् पूर्वोक्तान् कृत्वा ततो हृदि 'ॐ' इति 'ॐ ह्रीं' इति वा सेतुमन्त्रं दशवारं जप्त्वा कण्ठे 'हूं' इति महासेतुं दशवारं जपेत् । सहस्रारेऽपि 'हूं' इति महासेतुं दशवारं जपेत् ।। नाभौ 'ॐ अं मूलं ऐं समस्तमातृका ॐ' इति निर्वाणमन्त्रं दशवारं जपेत । ततः स्वाधिष्ठाने 'क्लीं' इति कामराजमन्त्रं दशवारं जपेत । ततो मूलाधारे 'ॐ ह्रीं जूँ सः कालमूर्ति कालप्रबोधिनि कालातीते कालदायिनि कपालपात्रधारिणि अमरि कु डलिनि जूँ सः वं वं वं सोहं स्वाहा' इति कुण्डलिनीमन्त्रं त्रिर्जपेत । ततः प्रणवपुटित-मूलमन्त्रस्य सप्तकृत्वो जपेन सूतकोद्धारं कृत्वा मूलमन्त्रेण मालामभ्युक्ष्य—

ॐ माले माले महामाये सर्वशक्तिस्वरूपिणि ।
चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव ।।

इति मन्त्रेण मालां संपूज्य 'ह्रीं सिद्ध्यै नमः' इति पठेत्ततश्छिलयं कृत्वा मूलाधारे सूर्यकोटिसमप्रभां हृल्लेखाम् स्वाधिष्ठाने पीतवर्णां वधूबीजं विभाव्य मूलादिब्रह्मरन्ध्रान्तं सर्वं विद्यामयं विभावयेत। ततः प्रणवमुच्चार्य अष्टोत्तरसहस्रं शतं वा प्रजप्य अन्तेऽपि प्रणवमुच्चार्य्य—

त्वं माले सर्वदेवानां प्रीतिदा शुभदा मम।
शिवं कुरुष्व मे भद्रे यशोवीर्यञ्च सर्वदा॥

इति मालां शिरसि निधाय 'ह्रीं सिद्ध्यै नमः' इत्युच्चार्य्य प्राणायामत्रयं ऋष्यादिकरषडङ्गन्यासांश्च विधाय दक्षहस्तेन विशेषार्घजलमादाय—

ॐ गुह्यातिगुह्यगोप्त्री त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम्।
सिद्धिर्भवतु मे देवि त्वत्प्रसादान्महेश्वरि॥

तज्जलं तेजोमयं विभाव्य देव्या वामकरे एतावज्जपं श्रीमदुग्रतारायै समर्पयामीति जलं समर्पयेत्। ततः 'ह्रीं श्रीं ॐ क्लीं आं क्रौं श्रीं ह्रीं' इति दशवारजपेन दीपनं कृत्वा 'त्रीं' इति दशवारजपेन उत्कीलनं कुर्यात 'हूं' इति दशवारजपेन चेतनी कुर्यात्। ततो वामकरेण घण्टां वादयन् दक्षिणकरेण चामरमान्दोलयन् स्तुवीत्।

ततो नित्यहोमविधिना जुहुयात। जलादिकमादाय अद्य श्रीमदुग्रतारादेवताप्रीतये अमुकमन्त्रेण अमुकद्रव्येण नित्यहोमविधानेन पञ्चविंशत्याहुतीः षोडशाहुतीर्वा अहं होष्यामि इति संकल्प्य हस्तमात्रां भूमिं कुशादिना परिसमुह्य गोमयोदकादिना उपलिप्य त्रिकोणं यथा स्यात्तथा प्रादेश प्रमाणास्तिस्रो रेखा लिखित्वा अंगुष्ठतर्जनीभ्यां ताभ्यो मृद् उद्धृत्यैशान्यां क्षिपेत। प्रोक्षणीजलेन ताः प्रोक्षयेत् त्रिष्णुरुद्रचन्द्रात्मतया ता ध्यायेच्च प्रणम्य कांश्यपात्रेणाग्निमादाय तस्माज्ज्वलदङ्गारं गृहीत्वा 'ॐ क्रव्यादेभ्यो नमः' इति नैर्ऋत्यां क्षिपेत्। तस्मिन्नेव त्रिकोणे शिववीर्यधिया वह्निं संस्थापयेत। वह्न्यर्थं समिधस्त्रिकोणाकारेण योजयेत। ततः—

"इष्टशक्ति स्वस्तिकाभीतिमुच्चैर्दीर्घैर्दोर्भिर्द्धारयन्तं। जपाभम् हेमाकल्पं पद्मसंस्थं त्रिनेत्रं ध्यायेद्वह्निं बद्धमौलिं जटाभिः॥"

इति ध्यात्वा ज्वालिनीं मुद्रां प्रदर्श्य फूत्कारेणाग्निं प्रज्वाल्य प्रणम्य पञ्चोपचारादिना वह्निं संपूज्य होमद्रव्याणि विशेषार्घोदकेनाभिषिच्य धेनुमुद्रया अमृतीकृत्य मृगीमुद्रया स्रुवं गृहीत्वा '१ ॐ भूः स्वाहा, २ ॐ भुवः स्वाहा, २ ॐ स्वः स्वाहा' इति हुत्वा वह्नौ स्वेष्टदेवतामावाह्य पाद्यादिभिः पञ्चोपचारैरभ्यर्च्य अग्नीष्टदेवतयोरैक्यं विभाव्य स्रुवमादाय '१ ॐ ह्रां एकजटायै हृदयाय नमः स्वाहा, २ ॐ ह्रीं तारिण्यै शिरसे स्वाहा स्वाहा, ३ ॐ ह्रूं वज्रोदके शिखायै वषट् स्वाहा, ४ ॐ ह्रैं उग्रजटे कवचाय हुँ स्वाहा, ५ ॐ ह्रौं महापरिसरे नेत्रत्रयाय वौषट् स्वाहा, ६ ॐ ह्रः पिङ्गोग्रैकजटे अस्त्राय फट् स्वाहा' इति षडङ्ग हवनं कृत्वा ताराकल्पोक्तद्रव्येण षोडशवारं वह्निरूपस्वेष्टदेवतामुखे जुहुयात् मूलमुच्चार्य स्वाहान्तेन आहुतिसंख्यायां षोडशपञ्चविंशत्योरैच्छिको विकल्पः प्रमाणसाम्यात्। ततः 'श्रीं अं अक्षोभ्यः स्वाहा श्रीं स्वाहा' इति अक्षोभ्यमन्त्रेण षडाहुतीर्हुत्वा 'ॐ मूलं श्रीमदुग्रतारापरिवारेभ्यः स्वाहा ॐ' मूलं श्री मदुग्रतारायुधेभ्यः' स्वाहा इत्येकैकामाहुतिं दत्त्वा पुष्पचन्दनताम्बूलफलादिप्रभूतं घृतञ्च स्रुवे समादायोत्तिष्ठन् 'ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्' इति पूर्णाहुतिं आचमनीयं च दत्त्वा घण्टाचामरग्रहणपूर्वकस्तवादिपाठं कृत्वा प्रणम्य संहारमुद्रया देवीं भ्रूमध्यस्थितचन्द्रमण्डले विसृजेदिति नीलतन्त्रोक्तो नित्यहोमविधिरेतत्तन्त्रस्यासाधारणतया तारिणीपरत्वात्। ततः आरात्रिकं विधाय मूलमुच्चरमाणः त्रिकोणाकारं यथा स्यात्तथा देव्याः प्रदक्षिणं कृत्वा साष्टाङ्गं पञ्चाङ्गं वा प्रणमेत्। ततो विशेषार्घोदकं दक्षकरेणादाय 'इतः प्राणबुद्धिदेहधर्माधिकारतो जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिषु सर्वास्ववस्थासु मनसा वाचा कर्मणा हस्ताभ्यां पद्भ्यामुदरेण शिश्ना यत्स्मृतं यदुक्तं यत्कृतं तत्सर्वं ब्रह्मार्पणं भवतु स्वाहा'

मनसा वाचा कर्मणा हस्ताभ्यां पद्भ्यामुदरेण शिश्ना यत्स्मृतं यदुक्तं यत्कृतं तत्सर्वं ब्रह्मार्पणं भवतु स्वाहा इति देव्या वामकरे समर्पयेत्।

ततो गुरून् स्वशिरसि विसृज्य परिवारान् देव्यङ्गे विलीनान् विभाव्य संहारमुद्रां बध्वा—

ॐ गच्छ गच्छ परं स्थानं स्वस्थानं परमेश्वरि।
यत्र ब्रह्मादयो देवा न विदुस्ते परं पदम्॥

इति मन्त्रेण तर्ज्जनी-युगलेन देवी-तेजसा सह चक्रस्थ-पुष्पमुद्धृत्याघ्राय वहद्वायुना तत्तेजो ब्रह्मरन्ध्रं नीत्वा परमशिवे संयोज्यामृतप्लुतं विभाव्य क्षणं विश्रम्य—

ॐ तिष्ठ देवि परे स्थाने स्वस्थाने परमेश्वरि।
यत्र ब्रह्मादयः सर्वे सुरास्तिष्ठन्ति मे हृदि॥

इति मन्त्रेण सुषुम्ना-मार्गेण हृदयारविन्दे नीत्वा दीपे दीपान्तरमिव हृदि वर्त्तमान-जीवात्म-तेजसि संय्योज्य एकीभूतं विचिन्त्य सम्पूज्यात्मानं तत्तेजोमयं विभावयेत्।

ॐ ते सर्वे विलयं यान्तु ये मां हिंसन्ति हिंसकाः।
मृत्यु-रोग-भय-क्लेशाः पतन्तु रिपुमस्तके॥

इत्यैशान्यां तत्पुष्पं क्षिपेत्। तत ऐशान्यां रक्त-चन्दनेन त्रिकोणं विलिख्य तन्मण्डले निर्माल्यं प्रक्षिप्यावशिष्ट-निर्माल्यादिना—

ॐ चण्डेश्वरि महादेवि निर्म्माल्यैश्चन्दनादिभिः।
लेह्य-चोष्यान्न-पानादि-निर्म्माल्यं स्रग्विलेपनम्।
निर्माल्यभोजनं तुभ्यं ददामीति शिवाज्ञया॥

इति मन्त्रेण तस्मिन् त्रिकोणे चण्डेश्वरीं सम्पूज्य नैवेद्य-शेषं दत्त्वा नत्वा विसर्जयेदिति। ततो मूलदेवी-निर्माल्यं मस्तके धृत्वा चक्रस्थ-रक्तचन्दनमादाय मूलं—

यो मां स्पृशति हस्तेन यो मां पश्यति चक्षुषा।
ते सर्वे वश्यमायान्तु राजानो दुष्टजन्तवः॥

इति स्वभाले धारयेत्। पादोदकं पीत्वा शिरसि

धृत्वा नैवेद्यं तद्भक्तेभ्यो दत्त्वा स्वयञ्च भुक्त्वा देवी-रूपोऽहमित्यात्मानं भावयन् विहरेदिति समाचारः ॥

नीलसरस्वती-विषये त्वियान् विशेषः। तस्याश्च लीलसरस्वती नीलसरस्वतीत्युभयन्नाम। लीलया वाक्-प्रदात्री च तस्माल्लीलसरस्वतीति बृहन्नीलतन्त्र-मत्स्यसूक्तयोरभिधानात्। नीलवर्णा भवेत्तेजोमयी नीलसरस्वतीति तन्त्रान्तराच्च ॥

न्यासे कालीतन्त्रोक्त-पञ्चधा विभक्तमातृकान्यासो विशेषः।

ह्रां अखिलवाग्रूपिण्यै अंगुष्ठाभ्यां नमः। ह्रीं अखण्डवाग्रूपिण्यै तर्जनीभ्यां स्वाहा। ह्रूं ब्रह्म-वाग्रूपिण्यै मध्यमाभ्यां वषट्। ह्रैं विष्णुवाग्रूपिण्यै अनामिकाभ्यां हूँ। ह्रौं रुद्रवाग्रूपिण्यै कनिष्ठाभ्यां वौषट्। ह्रः शर्ववाग्रूपिण्यै करतल-करपृष्ठाभ्यां फट् ॥ इति करन्यासः ॥

एवं 'ह्रां अखिलवाग्रूपिण्यैहृदयाय नमः। ह्रीं अखण्डवाग्रूपिण्यै शिरसे स्वाहा। ह्रूं ब्रह्मवाग्रूपिण्यै शिखायै वषट्। ह्रैं विष्णुवाग्रूपिण्यै कवचाय हुं। ह्रौं रुद्रवाग्रूपिण्यै कनिष्ठाभ्यां वौषट्। ह्रः शर्व-वाग्रूपिण्यै करतल-करपृष्ठाभ्यां फट्। इति षडङ्ग-न्यासः ॥

सिद्धसारस्वतोक्ताः लक्ष्म्यादयः पीठशक्तयः एतत्पक्षे प्रागुक्ताः। वीरचूड़ामण्युक्ता रत्यादयः शक्त-योऽन्यासां पक्षे बोध्याः।

यन्त्रञ्च नीलतन्त्रोक्तम्—व्योमेन्द्वौ रसनार्ण-कर्णिकमचां द्वन्द्वैः स्फुरत्केशरं वर्गोल्लासि-वसुच्छदं वसुमतीगेहेन सम्वेष्टितम्। धाराधीश्वर-चारिवर्ण-विलसद्दिक्कोण-संशोभितं यन्त्रं नीलतनोः परं निग-दितं सर्वार्थसिद्धिप्रदमिति।

एतद्यन्त्रस्य धारणेऽपि तत्फलमिति साम्प्रदा-यिकाः। नीलसरस्वत्या अस्या 'ह्रीं स्त्रीं हूँ' इति त्र्यक्षरो मन्त्रः। तथाच मन्त्रमहोदधिः। कीर्त्त्यन्ते सिद्धिदातारस्तारायाः मनवोऽधुना। गुरूपदेशाज-ज्ञातैर्यैः कृतार्थाः स्युर्नरा भुवि ॥

आप्यायनी सरात्रीशा - वियदग्नीन्दुशान्तियुक् ।
हरिः पावकगोविन्द-चन्द्रमोभिरलङ्कृतः ।
खमर्घीश-शशाङ्काढ्यमस्त्रं पञ्चाक्षरो मनुः ।
आदिवीज-वियुक्तैषा प्रोदितैकजटाऽदिमैः ।
आद्यन्तबीजरहिता प्रोक्ता नीलसरस्वती ।
तारा सर्वमनोरस्य मुनिरक्षोभ्यसंज्ञकः । छन्दस्तु बृहती तारा देवता परिकीर्तिता । द्वितीयतुर्ये क्रमतो बीजं शक्तिश्च सिद्धिदे । यद्वा क्रोधो वीजमुत्तमस्त्रं शक्तिरुदाहृता । षड्दीर्घयुग्द्वितीयेन षडङ्गविधिरीरित इति । आप्यायनी चतुर्दशस्वरः रात्रीशश्चन्द्रो विन्दुस्तेन 'ॐ' इति । वियत् हकारः, अग्नी रेफः, इन्दुरनुस्वारस्तेन 'ह्रीं' इति । हरिः तकारः, पावको रेफः, गोविन्द ईकारस्तेन 'त्रीं' इति । कर्त्रिकावीजं तदेव च दन्त्य-सकार-विशिष्टं 'स्त्रीं' वधूवीजं तदेवोपास्यम् । 'खं' हकारः, अर्घीश ऊकारः, शशाङ्काढ्यः अनुस्वार-युक्तस्तेन 'हूं' इति 'अस्त्रं फट्' इति 'ॐ ह्रीं स्त्रीं हूं फट' इति पञ्चाक्षरो मन्त्रः ॥

एषैव प्रणव-वियुक्ता एकजटा आदिमैराद्यैः कविभिरुदिता कथिता प्रणव-फट्कार-वियुक्ता सती 'ह्रीं स्त्रीं हूँ' इति त्र्यक्षरी नीलसरस्वती ताराया अस्य सर्वमनोः सर्वेषां मनूनां अक्षोभ्यो मुनिः, बृहती छन्दः, तारा देवता, ह्रीं वीजं, हूँ शक्तिः अथवा हूँ बीजं, फट् शक्तिः ।

द्वितीयेन 'ह्रीं'-बीजेन षड्दीर्घभाजा 'ह्रां ह्रीं ह्रूं' इत्यादिना षडङ्गन्यासः कथित इत्यर्थः ।

चतुर्लक्षजपः पुरश्चरणम् । क्षीराज्य-लोलितै-रक्तपद्मैर्जप-दशांशो होमः ।

अक्षोभ्यं प्रयजेन्मूर्ध्नि देव्या मन्त्रऋषिं शुभम् । अक्षोभ्यवज्रपुष्पञ्च प्रतीच्छानलवल्लभा । अक्षोभ्यपूजने मन्त्र इत्यादि ।

तथा सविन्दु-नामाद्यर्णाद्याः सम्बुद्ध्यन्तास्तथाभिधा । वज्रपुष्पं प्रतीच्छाग्नि-प्रियान्ताः प्रणवादिकाः । वैरोचनादि-पूजायां मनवः परिकीर्त्तिताः । आदिपदेन सकलपरिवारपूजा-मन्त्रः प्रकीर्त्तितः ।

अथ तन्त्रचूडामण्युक्तस्ताराषोढान्यासस्तत्र—

नीलवर्णां त्रिनयनां शवासनसमुन्नताम् ।
बिभ्रतीं विविधाकल्पां मौलावद्धेन्दुभूषिताम् ॥
एवं ध्यात्वा तारिणीं तु समाहितमनाश्चिरम् ।

ह्रींत्रींहूँ* अं श्रीकण्ठेश-पूर्णोदरीभ्यां नमः इति ललाटे । ३ आं अनन्तेश-विरजाभ्यां नमः—मुखवृत्ते । ३ इं सूक्ष्मेश-शाल्मलीभ्यां नमः—दक्षनेत्रे । ३ ईं त्रिमूर्तीश-लोलाक्षीभ्यां नमः—वामनेत्रे । ३ उं अमरेश-वर्तुलाक्षीभ्यां नमः—दक्षकर्णे । ३ ऊं अर्घीश-दीर्घघोणाभ्यां नमः—वामकर्णे । ३ ऋं भार-भूतेश-दीर्घमुखीभ्यां नमः—दक्षनासापुटे । ३ ॠं अतिथीश-गोमुखीभ्यां नमः—वामनासापुटे । ३ ऌं स्थाण्वीश-दीर्घजिह्वाभ्यां नमः—दक्षकपोले । ३ ॡं हरेश-कुण्डोदरीभ्यां नमः—वामकपोले । ३ एं झिण्टीशोर्द्धकेशीभ्यां नमः—ऊर्ध्वोष्ठे । ३ ऐं भौतिकेश-विकृतमुखीभ्यां नमः—अधरोष्ठे । ३ ओं सद्योजातेश-ज्वालामुखीभ्यां नमः—ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ । ३ औं अनुग्रहेशोल्कामुखीभ्यां नमः—अधोदन्तपंक्तौ । ३ अं अक्रूरेश-श्रीमुखीभ्यां नमः—शिरसि । ३ अः महासेनेश-विद्यामुखीभ्यां नमः—मुखे । ३ कं क्रोधीश-महाकालीभ्यां नमः—दक्षबाहुमूले । ३ खं चण्डीश-सरस्वतीभ्यां नमः—दक्षकूर्परे । ३ गं पञ्चान्तकेश-गौरीभ्यां नमः—दक्षमणिबन्धे । ३ घं शिवोत्तमेश-त्रैलोक्यविद्याभ्यां नमः—दक्षकरांगुलिमूले । ३ ङं एकरुद्रेशमन्त्रशक्तिभ्यां नमः—दक्षकरांगुल्यग्रेषु । ३ चं कूर्मेशात्म-शक्तिभ्यां नमः—वामबाहुमूले । ३ छं एकनेत्रेश-भूतमातृभ्यां नमः—वामकूर्परे । ३ जं चतुराननेशलम्बोदरीभ्यां नमः—वाममणिबन्धे । ३ झं अजेश-द्राविणीभ्यां नमः—वामकरांगुलिमूले । ३ ञं शर्वेशनागरीभ्यां नमः—वामकरांगुल्यग्रेषु । ३ टं

---

* न्यासे 'ह्रींस्त्रींहूँ' इति नीलसरस्वती-मन्त्रो दृश्यते । क्वचित 'ह्रींत्रींहूं' इति कर्त्रीवीज-घटितोऽपि दृश्यते । वस्तुतस्तु तयोर्विकृति-प्रकृति-भाव एवेति बोध्यम् ।

सोमेश-खेचरीभ्यां नमः—दक्षपादमूले। ३ ठं लाङ्गलीश-मञ्जरीभ्यं नमः—दक्षजानुनि। ३ डं दारुकेश-रूपिणीभ्यां नमः—दक्षगुल्फे। ३ ढं अर्द्धनारीश-वीरिणीभ्यां नमः—दक्षपादांगुलिमूले। ३ णं उमा-कान्तेश-काकोदरीभ्यां नमः—दक्षपादांगुल्यग्रेषु। ३ तं आखाढीश-पूतनाभ्यां नमः—वामपादमूले। ३ थं दण्डीशभद्रकालीभ्यां नमः—वामजानुनि। ३ दं अत्रीश-योगिनीभ्यां नमः—वामगुल्फे। ३ धं मीनेश-शंखिनीभ्यां नमः—वामपादांगुलिमूलेषु। ३ नं मेषेश-गर्जिनीभ्यां नमः—वामपादांगुल्यग्रेषु। ३ पं लोहितेश-कालरात्रिभ्यां नमः—दक्षपार्श्वे। ३ फं शिखीश-कुब्जिनीभ्यां नमः—वामपार्श्वे। ३ बं छगलण्डेश-कपर्दिनीभ्यां नमः—पृष्ठे। ३ भं द्विरण्डेश-वज्रिणीभ्यां नमः—नाभौ। ३ मं महाकालेश-जयाभ्यां नमः—जठरे। ३ यं त्वगात्मकभुजङ्गेश-सुखेश्वरीभ्यां नमः—हृदि। ३ रं असृगात्मकभुजङ्गेश-रेवतीभ्यां नमः—दक्षांसे। ३ लं मांसात्मकपिनाकीश-माधवीभ्यां नमः—ककुदि। ३ वं मेदआत्मकखड्गीश-वारुणीभ्यां नमः—वामांसे। ३ शं अस्थ्यात्मकत्रकेश-वायवीभ्यां नमः-हृदादिदक्षपाणौ। ३ षं मज्जात्मकश्वेनेश-रक्षोविदारिणीभ्यां नमः-हृदादिवामपाणौ। ३ सं शुक्रात्मकभृग्वीश-सहजाभ्यां नमः—हृदादिदक्षपादे। ३ हं प्राणात्मकनकुलीश-लक्ष्मीभ्यां नमः—हृदादिवामपादे। ३ लं जीवात्मकशिवेश-व्यापिनीभ्यां नमः—हृदादिजठरे। ३ क्षं परमात्मकसम्वर्त्तेश-मायाभ्यां नमः—हृदादिमुखे।

इति मातृकान्यासोक्त-मुद्राभिर्न्यसेदिति रुद्र-न्यासः प्रथमः॥

एते रुद्राः समारक्ता धृत-शूल-कपालकाः।
एता रुद्राङ्ग-पीठस्थाः सिन्दूरारुण-विग्रहाः।
रक्तोत्पलकपालाभ्यामलंकृत-कराम्बुजा इति।

ह्रीं स्त्रीं हूँ अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं लॄं एं ऐं ओं औं अं अः रक्ताय सूर्याय नमः—हृदि। ३ यं रं लं वं शुक्लाय सोमाय नमः—भ्रूमध्ये। ३ कं खं

गं घं ङं लोहिताय मङ्गलाय नमः—नेत्रत्रये। ३ चं छं जं झं ञं श्यामाय बुधाय नमः—हृदयमण्डले। ३ टं ठं डं ढं णं पीतवर्णाय बृहस्पतये नमः—कण्ठ-कूपे। ३ तं थं दं धं नं पाण्डुराय भार्गवाय नमः—गलदेशे। ३ पं फं बं भं मं नीलवर्णाय शनैश्चराय नमः—नाभिदेशे। ३ यं रं लं वं शं षं सं हं धूम्रवर्णाय राहवे नमः—वक्त्रे। ३ लं क्षं धूम्रवर्णेभ्यः केतुभ्यो नमः—पादयोः।

कामरूपधरान् सर्वान् सर्वाभरण-भूषितानिति ग्रहन्यासो द्वितीयः।

ह्रीं स्त्रीं हूं अं इं उं ऋं लृं एं ओं अं इन्द्राय नमः—ललाट-मध्यभागे। ३ आं ईं ऊं ॠं ॡं ऐं औं अः अग्नये नमः—ललाट-दक्षिणभागे। ३ कं खं गं घं ङं यमाय नमः—दक्षिणकर्णे। ३ चं छं जं झं ञं निर्ऋतये नमः—दक्षिणभागे। ३ टं ठं डं ढं णं वरुणाय नमः—तद्दक्षिणभागे। ३ तं थं दं धं नं वायवे नमः—तद्-दक्षिणभागे। ३ पं फं बं भं मं सोमाय नमः—वामकर्णे। ३ यं रं लं वं ईशानाय नमः—तद्दक्षिण-भागे। ३ शं षं सं हं अनन्ताय नमः—अधः। ३ लं क्षं ब्रह्मणे नमः—मूर्ध्नि। इति तृतीयो लोकपालन्यासः।

ह्रीं स्त्रीं हूं वं शं षं सं डाकिनी-सहित-ब्रह्मणे नमः—मूलाधारे। ३ बं भं मं यं रं लं राकिनी-सहित-विष्णवे नमः—स्वाधिष्ठाने। ३ डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं लाकिनी-सहित-ब्रह्मणे नमः—मणि-पूरे। ३ कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं काकिनी-सहितेश्वराय नमः—अनाहते। ३ अं इत्यादि षोडश साकिनी-सहित-सदाशिवाय नमः—विशुद्धे। ३ लं क्षं हाकिनी-सहित-ब्रह्मरूपाय पर शिवाय नमः—आज्ञा-चक्रे न्यसेदिति चतुर्थः।

ह्रीं स्त्रीं हूं अं आं कं खं गं घं ङं तारायै नमः—ब्रह्मरन्ध्रे। ३ इं ईं चं छं जं झं ञं उग्रायै नमः—ललाटे। ३ उं ऊं टं ठं डं ढं णं महोग्रायै नमः—भ्रूमध्ये। ३ ऋं ॠं तं थं दं धं नं भद्रकाल्यै नमः—कण्ठगह्वरे। ३ लृं ॡं पं फं बं भं मं सरस्वत्यै नमः—

हृदि। ३ एं ऐं यं रं लं वं कामश्वर्य्यै नमः—नाभिदेशे। ३ ओं औं शं षं सं हं कामेश्वर्यै नमः लिङ्गे। ३ अं अः लं क्षं चामुण्डायै नमः—आधारे॥ इति तारादिन्यासः पञ्चमः।

ह्रीं स्त्रीं हूं अं इं उं ऋं लृं एं ओं अं कामरूपपीठाय नमः—मूलाधारे। ३ आं ईं ऊं ॠं ॡं ऐं औं अः जालन्धरपीठाय नमः—हृदि। ३ कं खं गं घं ङं पूर्णगिरिपीठाय नमः—ललाटे। ३ चं छं जं झं ञं उड्डियानपीठाय नमः—शिरसि। ३ टं ठं डं ढं णं वाराणसीपीठाय नमः—भ्रूमध्ये। ३ तं थं दं धं नं अवन्तीपीठाय नमः—नेत्रद्वये। ३ पं फं बं भं मं मायावतीपीठाय नमः—मुखवृत्ते। ३ यं रं लं वं मधुपुरीपीठाय नमः—कण्ठमध्ये। ३ शं षं सं हं अयोध्यापीठाय नमः—नाभिदेशे। ३ लं क्षं काञ्चीपीठाय नमः—कट्योः। इति पीठन्यासः षष्ठः।

॥ इति तारा-महाषोडान्यासः सम्पूर्णः॥

नीलतन्त्रे 'मन्त्रेणान्तरितां कृत्वा षड्वारं मातृकां न्यसेत्। क्रमोत्क्रमाद्वरारोहे ताराषोढा प्रकीर्तिता। कृते च न्यासमात्रे तु सर्वं पापं प्रणश्यति। योगिनां च भवेत्पूज्यः स देवो न तु मानुषः। यं नमन्ति महेशानि षोढा-पुटित-विग्रहा। अल्पायुः स भवेत् सद्यो देवता कम्पते भिया। नास्त्यस्य पूज्यो लोकेषु पितृमातृमुखो जनः-प्रकृततन्त्रस्य कतिधा व्याख्यानमुपलभ्यते। परन्तु क्रमोत्क्रमयोरेव वचनारूढत्वात् अकारादि-क्षकारान्तान् क्षकाराद्यकारान्तान् मन्त्रान्तरितान् कृत्वा वारत्रयं न्यसेत्तावदेव षोढान्यासः सम्पद्यते इति मैथिलागमाचार्य-नृसिंहठक्कुर-सम्मत एव कार्य इति नीलतन्त्रोक्तस्ताराषोढान्यासः समाप्तः।

रुद्रयामलोक्तस्तारा-गुह्यषोढा न्यासो यथा। न प्रकाश्यमिदं क्वापि मन्त्रिणः काय-रक्षणम्। प्रणवं मातृकावर्णैः पुटितं मातृका-स्थले। तेनैव पुटितं वर्णं न्यसेत्तत्रैव पार्वति। मायाबीजं तथा देवि न्यस्तव्यं तत्प्रयत्नतः। वधूबीजं तथा चैव विन्यसेत् सुसमाहितः।

कूर्चवीजं तथा देवि न्यसनीयमशेषतः। अस्त्रं चैव तथा न्यन्स्येत् सकलं तदनन्तरम्। गुह्यषोढामियं देवि न प्रकाश्या कदाचन। अवश्यं प्रत्यहं कार्यं ध्यानं पूजा जपो न चेति। तेन—

अं ॐ अं ॐ अं ॐ नमः ललाटे एवं पञ्चाशन्-मातृका-स्थाने तत्तन्मुद्राभिर्न्यसेदिति प्रथमः। अं ह्रीं अं ह्रीं अं ह्रीं नमः ललाटे एवमादि पञ्चाशन्मातृका-वर्णैस्तत्तत्स्थाने तत्तन्मुद्राभिर्न्यसेदिति द्वितीयः। अं स्त्रीं अं स्त्रीं अं स्त्रीं नमः ललाटे एवमादि पञ्चाशद्वर्णैस्तत्तत्स्थले न्यसेदिति तृतीयः। अं हूँ अं हूँ अं हूँ नमः ललाटे एवमादि पञ्चाशत्स्थाने तत्तद्वर्णैर्न्यसेदिति चतुर्थः। अं फट् अं फट् अं फट् नमः ललाटे इत्यादि तत्तत्स्थाने तत्तन्मुद्राभिस्त-त्तद्वर्णैर्न्यसेदिति पञ्चमो न्यासः। अं ॐ ह्रीं स्त्रीं हूँ फट् अं ॐ ह्रीं स्त्रीं हूँ फट् अं ॐ ह्रीं स्त्रीं हूँ फट् नमः ललाटे एवं पञ्चाशद्वर्णैस्तत्तत्स्थाने तत्तन्मुद्राभिर्न्यसे-दिति षष्ठः। इति गुह्यषोढा।

काली-प्रकरणोक्त वीरतन्त्रानुसारी षोढान्यासो-ऽप्यत्र ग्राह्यः एवं चतुर्द्धा षोढान्यासः प्रकाशितः। तेषु कोऽपि यथेच्छं करणीय इति। अथ वीरतन्त्रोक्तः सम्प्रदायानुसारो तारका-न्यासः—

अं कं आकाशतत्वात्मिकायै रोहिणीरूपायै नमः शिरसि। आं खं वायुतत्वात्मिकायै मृगशिरोरूपायै नमः मुखे। इं गं तेजस्तत्वात्मिकायै आर्द्रारूपायै नमः हृदि। ईं घं जलतत्वात्मिकायै पुनर्वसूरूपायै नमो गुह्ये। उं ङं पृथिवीतत्वात्मिकायै पुष्परूपायै नमः पादयोः। ऊं चं घ्राणतत्वात्मिकायै श्लेषारूपायै नमः नसोः। ऋं छं रसनातत्वात्मिकायै मघारूपायै नमः जिह्वायां। ॠं जं चक्षुस्तत्वात्मिकायै पूर्वफल्गुनी-रूपायै नमः चक्षुषोः। लृं झं त्वकृतत्वात्मिकायै उत्तरफल्गुनोरूपायै नमः सर्वाङ्गे। लॄं ञं श्रोत्रतत्वा-त्मिकायै हस्तरूपायै नमः श्रोत्रयोः। एं टं गन्ध-तत्वात्मिकायै चित्रारूपायै नमः नसोः। ऐं ठं रस-तत्वात्मिकायै स्वातोरूपायै नमः जिह्वायां। ओं डं

रूपतत्वात्मिकायै विशाखारूपायै नमः चक्षुषोः। ओं ढं स्पर्शतत्वात्मिकायै अनुराधारूपायै नमः सर्वाङ्गे। अं तं शब्दतत्वात्मिकायै ज्येष्ठारूपायै नमः श्रोत्रयोः। अः ओं उपस्थतत्वात्मिकायै मूलरूपायै नमः लिङ्गे। अं थं पायुतत्वात्मिकायै पूर्वाषाढरूपायै नमः गुह्ये। आं दं पादतत्वात्मिकायै उत्तराषाढरूपायै नमः पादयोः। इं धं पाणितत्वात्मिकायै श्रवणारूपायै नमः हस्तयोः। ईं नं वाक्तत्वात्मिकायै धनिष्ठारूपायै नमः मुखे। उं पं आनन्दतत्वात्मिकायै शतभिषारूपायै नमः लिङ्गे। ऊं फं विसर्गतत्वात्मिकायै पूर्वभाद्ररूपायै नमः गुह्ये। ऋं बं गतितत्वात्मिकायै उत्तरभाद्रपदरूपायै नमः पादयोः। ॠं भं आदानतत्वात्मिकायै रेवतीरूपायै नमः हस्तयोः। ऌं मं वचनतत्वात्मिकायै अश्विनीरूपायै नमः मुखे। ॡं एं ऐं ओं यं रं लं वं अधस्तत्वात्मिकायै भरणीरूपायै नमः नाभ्यादिपादपर्यन्तं न्यसेत। औं अं अः शं षं सं हं लं क्षं ऊर्ध्वतत्वात्मिकायै कृत्तिकारूपायै नमः नाभ्यादि-शिरोऽन्तं न्यसेत। इति तारकादिन्यासः।

तदुक्तं वीरतन्त्रे—'अकारादि - क्रमान्न्यस्येद्रोहिण्यादिक्रमेण तु। व्युत्क्रमेण च तत्त्वानि शेषं शेषेण योजयेत। रोहिण्यादि-महान्यासं कृत्वा नरवरः सुखी। रोहिणी - सुतवत पृथ्व्यामशोच्यो भवति ध्रुवम्। गद्यपद्यमयी वाणी कथायां तस्य जायते। अदृष्टाश्रुतशास्त्राणां व्याख्याता भवति ध्रुवम्। अकृत्वा तारकान्यासं तारिणीं प्रजपेद्यदि। शतलक्षप्रजप्तोऽपि न मन्त्रः सिद्धिदायकः। इति॥

अथ तारा देव्याः कुलसर्वस्वनामस्तोत्रं पठित्वा—

ॐ यदक्षर-पदभ्रष्टं मात्राहीनं च यद्भवेत्।
तत्सर्वं क्षम्यतां देवि कस्य वै निश्चलं मनः॥

भुवनेश्वरी-सपर्या-विधिः

श्री गणेशाय नमः। अथ भुवनेश्वरी-सपर्या-विधिस्तत्र प्रातःकृत्यादि - मातृकान्यासान्तं कर्म पूर्ववत्।

ह्रीं अस्य श्री भुवनेश्वरी-मन्त्रस्य शक्तिर्ऋषि-र्गायत्री छन्दो, भुवनेश्वरी देवता, हकारो बीजं, ईकार शक्तिः, रेफः कीलकं, चतुर्वर्ग-सिद्ध्यर्थे विनियोगः।

शिरसि शक्तये ऋषये नमः। मुखे गायत्र्यै छन्दसे नमः। हृदि भुवनेश्वर्यै देवतायै नमः। गुह्ये हबीजाय नमः। पादयोः ई शक्तये नमः। सर्वाङ्गे र कीलकाय नमः।

शिरसि ओं हृल्लेखायै नमः। वदने एं गगनायै नमः। गुह्ये इं करालिकायै नमः। पादयोः अं महोच्छूष्मायै नमः।

एवं ऊर्ध्वे ओं हृल्लेखायै नमः। प्राच्यां एं गगनायै नमः। याम्ये उं रक्तायै नमः। उदीच्यां इं करालिकायै नमः। पश्चिमे अं महोच्छूष्मायै नमः।

ततः कराङ्गन्यासौ—

ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः। ह्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ह्रूं मध्यमाभ्यां वषट्। ह्रैं अनामिकाभ्यां हुं। ह्रौं कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्। ह्रः करतल - करपृष्ठाभ्यां फट्।

ह्रां हृदयाय नमः। ह्रीं शिरसे स्वाहा। ह्रूं शिखायै वषट्। ह्रैं कवचाय हूं। ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्। ह्रः अस्त्राय फट्।

ततो भाले ॐ गायत्री-सहित-ब्रह्मणे नमः। दक्षिणकपोले ॐ सावित्री-सहित-विष्णवे नमः।

वामगण्डे ॐ वागीश्वरीसहित-महेश्वराय नमः। वामकर्णे ॐ श्री-सहित-धनपतये नमः। मुखे ॐ रति-सहित-स्मराय नमः। सव्यकर्णे ॐ पुष्टि-सहित-गणपतये नमः। दक्षिणगण्ड-कर्णान्तराले ॐ वसुधारा-सहित-शङ्खनिधये नमः। वामगण्ड-कर्णान्तराले ॐ वसुमती-सहित-पद्मनिधये नमः। मुखे ॐ भुवनेश्वर्यै देवतायै नमः। एवं कण्ठमूले ॐ गायत्री-सहित-ब्रह्मणे नमः। दक्षिणस्तने ॐ सावित्री-सहित-ब्रह्मणे नमः। दक्षांसे ॐ वागीश्वरी-सहित-महेश्वराय नमः। हृदये ॐ श्री-सहित-धनपतये नमः। वामस्तने ॐ पुष्टि-सहित-गणपतये नमः। दक्षिणपार्श्वे ॐ वसुधारा-सहित-शङ्खनिधये नमः। वामपार्श्वे ॐ वसुमती-सहित-पद्मनिधये नमः। नाभौ ॐ भुवनेश्वर्यै देवतायै नमः।

ततो भाले ॐ ब्राह्म्यै नमः। वामांसे ॐ माहेश्वर्यै नमः। वामपार्श्वे ॐ कौमार्यै नमः। जठरे ॐ वैष्णव्यै नमः। दक्षिणपार्श्वे ॐ वाराह्यै नमः। दक्षिणांसे ॐ इन्द्राण्यै नमः। गळे ॐ चामुण्डायै नमः। हृदि ॐ लक्ष्म्यै नमः। इत्यष्टमातृकान्यासः। मूलेन व्यापकत्रयं कुर्यात्।

एवं विन्यस्य स्वर्णादि-पात्रे रक्तचन्दनादिना मध्ये सुन्दरं षट्कोणं, ततो वृत्तं, तदुपर्यष्टदलपद्मं, पुनर्वृत्तं, षोडशदलपद्मं, ततश्चतुरस्रं चतुर्द्वारं भूपुरमिति यन्त्रं निर्माय रक्तपुष्पैः पुष्पाञ्जलि-विधिनाच्छादयेत्।

ततो विशेषार्घ-स्थापनं स्ववामभागे त्रिकोण-वृत्त-चतुरस्रात्मकं मण्डलं विनिमय 'ऐं ह्रीं व्यापकमण्डलाय नमः' इति सम्पूज्य तत्राधारं निधाय 'फट्' इति शङ्खाधार-त्रिपदिकां शङ्खं च सम्प्रोक्ष्य तन्मण्डले संस्थाप्य त्रिपदिकायां 'मं वह्निमण्डलाय दशकलात्मने नमः' इति सम्पूज्य 'अं अर्कमण्डलाय द्वादशकलात्मने नमः' इति शङ्खं सम्पूज्य मूलमन्त्रेण विमलजलेन शङ्खमापूर्य 'ॐ सोममण्डलाय षोडशकलात्मने नमः' इति जलं सम्पूज्य तत्र बिल्वपत्र-रक्तचन्दन-रक्तपुष्प-

दूर्वाक्षतानि निःक्षिप्यार्घपात्राग्नेये 'ह्रां हृदयाय नमो नमः। ऐशान्यां ह्रीं शिरसे स्वाहा नमः। नैरृत्यां ह्रूं शिखायै वषट् नमः। वायव्यां ह्रैं कवचाय हुं नमः। मध्ये ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट् नमः। परितः ह्रः अस्त्राय फट् नमः' इति षडङ्गानि सम्पूज्य शङ्खोपरि मूलं दशधा प्रजप्य—

ॐ गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति।
नर्मदे सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु॥

इति मन्त्रेणांकुशमुद्रयार्घे तीर्थान्यावाह्य, मत्स्य-मुद्रयाच्छाद्य, 'फट्' इति संरक्ष्य, 'हुं' इत्यवगुण्ठ्य, धेनुमुद्रया अमृतीकृत्य, चक्रमुद्रया बोधयेदिति।

ततः स्वदक्षिणे प्रोक्षणीपात्रमद्भिः पूरयित्वा तत्र किञ्चिदर्घाम्बु दत्वा साधारकमन्यत पात्रं पुरतः स्थापयेत। विशेषार्घपात्र-पार्श्वे वामक्रमेण त्रिकोण-वृत्त-चतुरस्रात्मक - षण्मण्डलानि - रक्तचन्दनादिना विरचय्य 'ॐ आधारशक्तये नमः' इति सम्पूज्य तेषामुपरि आधारान्निधाय तदुपरि क्रमेण पाद्यपात्रं संस्थाप्य जलैः पूरयित्वा श्यामाक-दूर्वाब्ज-विष्णुक्रान्ता-द्रव्याणि क्षिपेत। तद्वामेऽर्घपात्रं संस्थाप्य जलैरापूर्य गन्ध-पुष्पाक्षत-यव-कुशाग्र-तिल-सर्षप-दूर्वादलानि दद्यात। तद्वामे आचमनीय-पात्रं संस्थाप्य जलैरापूर्य जाती-लवङ्ग-कङ्कोलानि क्षिपेत। तद्वामे मधुपर्क-पात्रं तत्र माक्षिकं मध्वधिकं दधि सर्पिः सिता-समं जलं तु सर्वतः स्वल्पमेकीकृत्य धारयेत। तद्वामे पुनराचमनीयपात्रे शुद्धजलम्। तद्वामे स्नानीय-पात्रे गन्धजलं निःक्षिपेत।

ततः किञ्चिच्छङ्खामृतं पुष्पादिना समुद्धृत्य सर्वेषु पात्रेषु निःक्षिप्य सर्वं दिव्यं विचिन्तयेदिति।

ततो यन्त्रे पीठदेवताः पूजयेद्यथा—कूर्म्माकार-शिलाविशेषमारूढां पङ्कजद्वय-धारिणीं ध्यात्वा मण्डूकाय नमः। कालाग्निरुद्राय नमः ॐ ह्रीं आधार-शक्तये नमः। ॐ प्रकृत्यै नमः। तन्मूर्ध्नि समासीनं नीलाभं ध्यात्वा ॐ कूर्म्माय नमः। तदुपरि कुन्दाभां

मूर्ध्ना वसुमतीं दधानं ध्यात्वा ॐ अनन्ताय नमः। तन्मूर्ध्नि तमालश्यामलां नीलेन्दीवर-धारिणीं स्फुरत्-सागरमेखलां ध्यात्वा ॐ वसुमत्यै नमः। ॐ सुधाम्बुधये नमः। ॐ चिन्तामणिगृहाय नमः। ॐ पारिजाताय नमः। तन्मूले ॐ सर्वतोभद्रादि-मण्डल-सहित-रत्नवेदिकायै नमः। दिक्षु ॐ धर्माय नमः, ॐ ज्ञानाय नमः, ॐ वैराग्याय नमः, ॐ ऐश्वर्याय नमः। विदिक्षु ॐ अधर्माय नमः, ॐ अज्ञानाय नमः, ॐ अवैराग्याय नमः, ॐ अनैश्वर्याय नमः। मध्ये ॐ आनन्दमयकन्दाय नमः, ॐ सम्विन्नालाय नमः, ॐ सर्वतत्वात्मकपद्माय नमः, ॐ प्रकृत्यात्मक-पत्रेभ्यो नमः, ॐ विकारमय-केशरेभ्यो नमः, ॐ पञ्चाशद्-वर्णवीजाढ्य-कर्णिकायै नमः। अं अर्कमण्डलाय द्वादशकलात्मने नमः। उं सोममण्डलाय षोडशकलात्मने नमः। मं वह्निमण्डलाय दशकलात्मने नमः। सं सत्वाय नमः। रं रजसे नमः। तं तमसे नमः। आं आत्मने नमः। अं अन्तरात्मने नमः। पं परमात्मने नमः। ह्रीं ज्ञानात्मने नमः। पद्मस्याष्टसु पत्रेषु पूर्वादि-दिक्षु वामावर्ततः मध्ये च ॐ जयायै नमः, ॐ विजयायै नमः, ॐ अजितायै नमः, ॐ अपराजितायै नमः, ॐ नित्यायै नमः, ॐ विलासिन्यै नमः, ॐ दोग्ध्र्यै नमः, ॐ अघोरायै नमः, ॐ मङ्गलायै नमः, ऐं परायै अपरायै परापरायै ह्रीं पद्मासनाय नमः।

इति पीठपूजां कृत्वा समाहित-मनाः साधकः मूलाधारे 'ह्रीं आधारशक्तये नमः' इत्यादि-पूर्वोक्त-क्रमेण हृत्कमले 'ह्रीं पद्मासनाय नमः' इत्यन्तं स्वाङ्गे पीठं विन्यस्य—

उद्यद्दिनद्युतिमिन्दुकिरीटां,
तुङ्गकुचां नयनत्रययुक्ताम्।
स्मेरमुखीं वरदांकुशपाशा-,
भीतिकरां प्रभजे भुवनेशीम्॥

इति ध्यात्वा ततो मूलाधारात् कुण्डलिनीमुत्थाप्य सुषुम्नान्तर्मार्गेण सहस्रदलकमले नीत्वा तत्रोक्तरूपेण परिणतां परमात्मना सङ्गमय्य तत्रत्यामृत-लोलीभूतां स्वर्णादि-दोलादिना हृदि न्यस्ताष्टदलकमलोपरि रत्नपीठ-पद्मासनोपरि समानयेत्। गुरुमुखाद्यवगत-कामकलाद्यात्मना वा परिणतां तत्र स्थापयेत्। प्रतिष्ठापयेच्च वक्ष्यमाण-क्रमेण तत्प्राणान्। ततः सहस्रदल-कमलान्तर्गत-चन्द्रबिम्ब-स्रवदमृतधाराभिः संस्नाप्य—

ह्रीं भुवनेश्वर्यै लं पृथ्वीतत्वात्मकं गन्धं समर्पयामि नमः इति हस्तद्वय-कनिष्ठांगुष्ठ-संयोगात्मक-गन्ध-मुद्रया मनःकल्पित-श्रीखण्डादिच्छोदं सर्वाङ्गे मनसा समर्पयेत्। ततः 'ह्रीं भुवनेश्वर्यै हं आकाशतत्वात्मकं पुष्पं समर्पयामि नमः' इति हस्तद्वय-तर्जन्यंगुष्ठ-संयोगात्मक - पुष्पमुद्रया मनःकल्पित - विहितोत्तम-पुष्पाणि तत्तदङ्गे हस्ते च समर्पयेत्। 'ह्रीं भुवनेश्वर्यै यं वायुतत्वात्मकं धूपं समर्पयामि नमः' इति हस्तद्वय-तर्जन्यंगुष्ठ-योगात्मक-धूपमुद्रया मनःकल्पितं धूपं समर्पयेत्। ततो 'ह्रीं भुवनेश्वर्यै रं वह्नितत्वात्मकं दीपं समर्पयामि नमः' इति हस्तद्वय-मध्यमांगुष्ठ-योगात्मक-दीपमुद्रया मनःकल्पितं दीपं समर्पयेत्। ततो 'ह्रीं भुवनेश्वर्यै वं अमृततत्वात्मकं नैवेद्यं समर्पयामि नमः' इति हस्तद्वयांगुष्ठानामिका - योगात्मक - नैवेद्यमुद्रया मनःकल्पित-परमान्नादि-मधुरद्रव्यं समर्पयेत् प्रदर्शयेच्च। वक्ष्यमाण-प्राणादि-पञ्चग्रासमुद्राः इति पञ्चोपचारान् समर्प्य गुरूपदेशानुसारेण वं अमृततत्वात्मकं पानीयं, हं आकाशतत्वात्मकं ताम्बूलं, हं आकाशतत्वात्मकं पुष्पाञ्जलिमित्याद्यपि मनसा समर्पयेत्। ततश्चन्द्रार्का-नल-संघट्ट-गलित-परमामृतेन 'ह्रीं भुवनेश्वरीं तर्पयामि स्वाहा' इति मनसा त्रिः सन्तर्प्य वर्णमालया कर-मालया वा मनुं जप्त्वा समर्प्य स्तुत्वा प्रणमेदिति मानसपूजां कृत्वा ततः करकच्छपिकया पुष्पादिकं गृहीत्वा ध्यायेत्। ध्यानं प्रागेवोक्तं। एवं रूपामिष्ट-देवीं हृत्पद्मोपरिस्थितां 'यं' इति वायुबीजमुच्चरमाणो वामनासया रेचन-क्रमेण करस्थ-पुष्पे समानीय—

ॐ देवेशि भक्तिसुलभे परिवार-समन्विते ।
यावत्त्वां पूजयिष्यामि तावद्देवि स्थिरा भव ॥

इति पठन् यन्त्रादौ कल्पित-मूर्तेः शिरसि तत्पुष्पं दत्वा देवता-तेजः पुष्पमपहाय तस्या मूर्तेर्ब्रह्मरन्ध्र-द्वारेण हृदये प्रविश्य स्थिरीभूतं भावयेत् । ततो—

ह्रीं भुवनेश्वरि इहावह इहावह । ह्रीं भुवनेश्वरि इह तिष्ठ इह तिष्ठ । ह्रीं भुवनेश्वरि इह सन्निधेहि इह सन्निधेहि । ह्रीं भुवनेश्वरि इह सन्निरुध्यस्व इह सन्निरुध्यस्व । ह्रीं भुवनेश्वरि इह सम्मुखी भव इह सम्मुखी भव—पञ्चमुद्रा आवाहनाद्याः प्रदर्शयेत् ।

कुण्डलियां न प्राणप्रतिष्ठा शालिग्रामत्वाविशेषात् । ततो मूलेन कल्पित-मूर्तेर्हृदये लेलिहान-मुद्रया हस्तमारोप्य—

आं ह्रीं क्रों हंसः भुवनेश्वर्याः प्राणा इह प्राणाः । आं ह्रीं क्रों हंसः भुवनेश्वर्या सर्वेन्द्रियाणि इह स्थितानि । आं ह्रीं क्रों हंसः श्री भुवनेश्वर्या वाङ्मनश्चक्षुःश्रोत्रघ्राणप्राणा इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा ।

इति प्राणान् प्रतिष्ठाप्य 'ह्रीं भुवनेश्वरि इहावगुण्ठिता भव' इत्यवगुण्ठन-मुद्रया अवगुण्ठ्य पुष्पादिना षडङ्गन्यासेन मूर्तौ सकलीकृत्य 'वं' इति धेनुमुद्रया अमृतीकृत्य 'ऐं' इति योनिमुद्रां प्रदर्शयेत् । ततो विशेषार्घोदकेन मूलमन्त्रेण त्रिः प्रोक्षणेन देवशुद्धिं विदध्यात् । ततो यथालाभं षोडशोपचार-दशोपचार-पञ्चोपचारान्यतमोपचारैर्देवीं सम्पू-जयेत् । षोडशोपचाराः—

१ पाद्यं, २ अर्घः, ३ आचमनीयं ४ स्नानं, ५ वसनं, ६ भूषणं, ७ गन्धः, ८ पुष्पं, ९ धूपं, १० दीपं, ११ नैवेद्यं, १२ आचमनं, १३ ताम्बूलं, १४ स्तोत्रं, १५ तर्पणं, १६ प्रणामः ।

अथवा १ आसनं २ स्वागतं, ३ पाद्यं, ४ अर्घः, ५ आचमनीयं, ६ मधुपर्कः, ७ आचमनं ८ स्नानं,

९ वस्त्रं, १० आभरणं, ११ गन्धः, १२ पुष्पं, १३ धूपः, १४ दीपः १५ नैवेद्यं, १६ वन्दनं ।

उभयथा तन्त्रेऽभिधानादैच्छिको विकल्पः ।

१ पाद्यं, २ अर्घः, ३ आचमनीयं, ४ मधुपर्कं, ५ आचमनं, ६ गन्धः, ७ पुष्पं, ८ धूपः, ९ दीपः, १० नैवेद्यं—इति दशोपचारः ।

१ गन्धः, २ पुष्पं, ३ धूपः, ४ दीपः, ५ नैवेद्यं—इति पञ्चोपचाराः । अधिक-प्रवेशे न तद्धानिः ।

ततो 'ह्रीं भुवनेश्वरि देवि स्वागतं ते कुशलमिद्मासनमास्यतां' इति तत्तन्मुद्रां प्रदर्शयन्नभिलपेत् ।

ततः पाद्य-पात्रस्थ-जलमुद्धृत्य 'ह्रीं इदं पाद्यं श्रीभुवनेश्वर्यै नमः' इति पादयोर्दत्वा पाद्यमुद्रां प्रदर्शयेत ।

ततोऽर्घपात्रस्थजलमुद्धृत्य 'ह्रीं एषोऽर्घः श्री भुवनेश्वर्यै स्वाहा' इति शिरसि दत्वा अर्घमुद्रां प्रदर्शयेत ।

तत आचमन-पात्रस्थ-जलमुद्धृत्य 'ह्रीं एतदाचमनीयं श्रीभुवनेश्वर्यै स्वधा' इति मुखकमले दत्वा आचमनमुद्रां प्रदर्शयेत ।

ततो मधुपर्कं देव्या मुखे दत्वा 'ह्रीं एष मधुपर्कः श्री भुवनेश्वर्यै स्वधा' इत्यर्घोदकेनोत्सृज्य मधुपर्कमुद्रां प्रदर्शयेत् ।

ततः पुनराचमनीयमाचमनी-वद् दद्यात

ततः स्नानीयपात्रस्थ-जलमुद्धृत्य शतकृत्वो दशकृत्वो वा यथाशक्ति सर्वाङ्गे दत्वा 'ह्रीं एतत् स्नानीयं श्रीभुवनेश्वर्यै नमः' इत्यर्घोदकेनोत्सृज्य स्नानमुद्रां प्रदर्शयेत ।

ततो मूलेनाङ्गप्रोक्षणं विभाव्य रक्तवर्णमनुपभुक्तं वस्त्रयुगलमादाय फडिति सम्प्रोक्ष्य 'नम' इति सम्पूज्य 'ह्रीं एतद्वस्त्रयुगलं बृहस्पति-दैवतं श्रीभुवनेश्वर्यै नमः' इत्युत्सृज्य वस्त्र-मुद्रां प्रदर्शयेत ।

पुनराचमनीयं पूर्ववद्दद्यात ।

ततः फडिति सम्प्रोक्ष्य 'नमः' इति सम्पूज्य देव्या

वामहस्ते दत्वा 'ह्रीं एतद्भूषणममुकदैवतं श्रीभुवनेश्वर्यै नमः' इत्युत्सृज्य भूषणमुद्रां प्रदर्शयेत।

ततः प्रमाणोक्तमुत्तमगन्धं फडिति सम्प्रोक्ष्य 'नम' इति सम्पूज्य देव्याः सर्वाङ्गे दत्वा 'ह्रीं एष गन्धो गन्धर्वदैवतः श्रीभुवनेश्वर्यै नमः' इत्युत्सृज्य गन्धमुद्रां प्रदर्शयेत् । एवं रक्तचन्दनं सिन्दूरं अक्षतञ्च दद्यात।

ततो विहित-पद्मादि-पुष्पं फडिति सम्प्रोक्ष्य 'नम' इति सम्पूज्य 'ह्रीं इदं पुष्पं वनस्पति-दैवतं श्रीभुवनेश्वर्यै वौषट्' इति वामकरे सर्वाङ्गे च दद्यात्। पुष्पमालां बिल्वपत्राणि च पुष्पवद्दद्यात।

ततः प्रमाणोक्तपात्रे प्रशस्तधूपद्रव्यं निर्धूमाङ्गारेषु निःक्षिप्य 'फट्' इति सम्प्रोक्ष्य 'धूपाय नम' इति सम्पूज्य वामहस्त-तर्ज्जन्या धूपपात्रं स्पृशन देव्याः समीपं नीत्वा 'ह्रीं एष धूपः विष्णु दैवतः श्रीभुवनेश्वर्यै नमः' इत्युत्सृज्य धूपमुद्रां प्रदर्श्य 'ॐ जयध्वनि मन्त्रमातः स्वाहा' इति घण्टां सम्पूज्य वामहस्तेन तां वादयन् दक्ष-मध्यमानामिका-मध्यपर्वणि अंगुष्ठाग्रेण धूपपात्रं धृत्वा देव्याः पादादि-नाभ्यन्तं धूपयेत्।

ततः कर्पूर-गर्भिण्या वर्त्तिकया गव्य-घृतादिना दीपं प्रज्वाल्य धूपवत्प्रोक्षण-पूजने विधाय वाम-हस्त-मध्यमया दीपपात्रं स्पृशन् देव्याः समीपं नीत्वा 'ह्रीं एष दीपः श्रीभुवनेश्वर्यै नमः' इत्यर्घोदकेनोत्सृज्य दीपमुद्रां प्रदर्श्य मूलगायत्र्या मध्यमांगुष्ठाभ्यां दीपपात्रमुत्तोल्य घण्टा-वादन-पूर्वकं देव्याः पादादिनेत्रान्तं दीपयेत्।

ततः प्रमाणोक्त-पायसादि-नैवेद्यं स्वर्णादिपात्रे कृत्वा तत्पात्रं चतुरस्रमण्डले साधारं निधाय 'फट्' इति प्रोक्षणी-जलेन सम्प्रोक्ष्य चक्रमुद्रया संरक्ष्य 'यं' वायुबीज-जपेन नैवेद्य-दोषान् संशोध्य 'रं' इति जपेन तान् सन्दाह्य दक्ष-कराग्रेण स्पृष्ट्वा 'वं' इति बीजेनामृतीकृत्य कराभ्यां तत्पात्रं स्पृशन् मूलमन्त्रेणाष्टकृत्वोऽभिमन्त्र्य धेनुमुद्रां प्रदर्श्य गन्ध-पुष्पाक्षतजलैः 'ॐ नैवेद्याय नमः' इति सम्पूज्य देव्याः समीपं नीत्वा

वामांगुष्ठ-तर्जनीभ्यां स्पृशन् 'ह्रीं इदममुक-नैवेद्यं विष्णु-दैवतं श्रीभुवनेश्वर्यै नमः' इत्यर्घोदकेनोत्सृज्य तत्वमुद्रां प्रदर्श्य 'ह्रीं अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा' इति देव्यै जलं दत्वा वामहस्तेन विकचोत्पल-सदृशीं ग्रासमुद्रां दर्शयन् १ दक्षिणहस्तेन संयुक्तैः कनिष्ठा-नामांगुष्ठैः 'ॐ प्राणाय स्वाहा,' २ तर्जनी-मध्यमां-गुष्ठैः 'ॐ अपानाय स्वाहा,' ३ मध्यमानामांगुष्ठैः 'ॐ समानाय स्वाहा,' ४ तर्जनी-मध्यमानामांगुष्ठैः 'ॐ उदानाय स्वाहा', ५ सर्वाङ्गुलीभिः 'ॐ व्यानाय स्वाहा' इति प्राणादि-पञ्चमुद्राः प्रदर्श्य—

'ॐ नमस्ते देवदेवेशि सर्वतृप्तिकरं परम्। परमानन्द-सम्पूर्णं गृहाण जलमुत्तमम् ॥ ह्रीं इदं पानीयं श्री भुवनेश्वर्यै नमः' इति दत्वा घण्टां वादयन् चामरैर्वीजयन् तृप्तिमाकांक्षमाणः क्षणं स्थित्वा तृप्तां विभाव्य 'ॐ अमृतापिधानमसि स्वाहा' इति जलं दत्वा पुनराचमनीयमाचमनीय-वद् दद्यात्।

ततस्ताम्बूलं फडिति सम्प्रोक्ष्य 'नम' इति सम्पूज्य 'ॐ पूगीफल-समायुक्तं संचूर्णं मुखमण्डनम्। गृहाण देवि ताम्बूलं कर्पूरेण सुवासितम् ॥' इति पठन् देव्यग्रे नीत्वा 'ह्रीं इदं ताम्बूलं विष्णु-दैवतं श्री भुवनेश्वर्यै नमः' इत्यर्घोदकेनोत्सृजेत्।

ततो वामकरे तत्त्वमुद्रां कृत्वा दक्षिणकरेण विशेषार्घोदकेन 'ह्रीं भुवनेश्वरीं तर्पयामि स्वाहा' इति त्रिः सन्तर्प्य 'ह्रीं एष पुष्पाञ्जलिः श्रीभुवनेश्वर्यै वौषट्' इत्यष्टधा पुष्पाञ्जलिं दद्यात्।

ततो गुरून् सम्पूज्य तर्पयेत्। ततो योनिमुद्रां बध्वा—

मातर्भुवनेश्वरि देवि आज्ञापय तवावरणान्यहं पूजयिष्ये।

इति आज्ञा जातेति विभाव्यावरण-पूजामारभेत। कर्णिका-मध्ये ओं हृल्लेखायै नमः, पूर्वे एं गगनायै नमः, दक्षिणे ऊं रक्तायै नमः, उत्तरे ईं करालिकायै नमः, पश्चिमे ओं महोच्छूष्मायै नमः।

ततः षट्कोणेषु पूर्वादितः 'ॐ गायत्र्यै नमः, ॐ ब्रह्मणे नमः, नैर्ऋते ॐ सावित्र्यै नमः ॐ विष्णवे नमः, वायौ ॐ सरस्वत्यै नमः, ॐ रुद्राय नमः, अग्निकोणे ॐ श्रियै नमः, ॐ धनपतये नमः, पश्चिमे ॐ रत्यै नमः, ॐ स्मराय नमः, ऐशान्यां ॐ पुष्ट्यै नमः, ॐ गणपतये नमः, षट्कोणस्योभय-पार्श्वयोः ॐ शङ्खनिधये नमः, ॐ पद्मनिधये नमः।

ततः केशरेषु अग्नि-निर्ऋति-वायु-ईशानकोणेषु मध्ये दिक्षु च 'ॐ ह्रां हृदयाय नमो नमः, ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा नमः, ॐ ह्रूं शिखायै वषट् नमः, ॐ ह्रैं कवचाय हुं नमः, ॐ ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट् नमः, ॐ ह्रः अस्त्राय फट् नमः।

ततोऽष्टदलेषु पूर्वादितः 'ॐ अनङ्गकुसुमायै नमः, ॐ अनङ्गकुसुमातुरायै नमः, ॐ अनङ्गमदनायै नमः, ॐ अनङ्गमदनातुरायै नमः, ॐ भुवनपालायै नमः, ॐ गगनवेगायै नमः, ॐ शशिरेखायै नमः, ॐ गगनरेखायै नमः।

ततः षोडशदलेषु पूर्वादितः 'ॐ करालयै नमः, ॐ विकरालयै नमः, ॐ उमायै नमः, ॐ सरस्वत्यै नमः, ॐ श्रियै नमः, ॐ दुर्गायै नमः, ॐ उषायै नमः, ॐ लक्ष्म्यै नमः, ॐ श्रुत्यै नमः, ॐ स्मृत्यै नमः, ॐ धृत्यै नमः, ॐ श्रद्धायै नमः, ॐ मत्यै नमः, ॐ कान्त्यै नमः, ॐ आर्यायै नमः।

तद्बहिः पूर्वादितः 'ॐ अनङ्गरूपायै नमः, ॐ अनङ्गमदनायै नमः, ॐ अनङ्गमदनातुरायै नमः, ॐ भुवनवेगायै नमः, ॐ भुवनपालिकायै नमः, ॐ सर्वशिशिरायै नमः, ॐ अनङ्गवेदनायै नमः, ॐ अनङ्गमेखलायै नमः।

तद्बहिर्भूगृहस्य पूर्वादितः 'ॐ लां इन्द्राय देवाधिपतये साङ्गाय सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय नमः। ॐ रां अग्नये तेजोऽधिपतये सायुधाय०। ॐ यं यमाय प्रेताधिपतये सायुधाय०। ॐ क्षां निर्ऋतये रक्षोऽधिपतये सायुधाय०। ॐ वां वरुणाय जलाधिपतये सायुधाय०। ॐ यं वायवे प्राणाधिपतये

साङ्गाय० । ॐ कुं कुबेराय यक्षाधिपतये सायुधाय० । ॐ हौं ईशानाय प्रेताधिपतये सायुधाय० । इन्द्रेशानयोर्मध्ये 'ॐ आं ब्रह्मणे प्रजाधिपतये सायुधाय० ।' नैर्ऋति-वरुणयोर्मध्ये 'ॐ ह्रीं अनन्ताय नागाधिपतये सायुधाय० ।'

तद्बहिः पूर्वादितः 'ॐ वज्राय नमः, ॐ शक्त्यै नमः, ॐ दण्डाय नमः, ॐ खड्गाय नमः, ॐ पाशाय नमः, ॐ अङ्कुशाय नमः, ॐ गदायै नमः, ॐ शूलाय नमः, ॐ पद्माय नमः, ॐ चक्राय नमः ।'

इत्यावरण-देवतानां तर्पणमपि कुर्यात् । अशक्तसाधक-पक्षे प्रधानदेवता-पूजा-प्रयोगे साङ्ग-सायुध-सवाहन-सपरिवारायै इति निवेशेनाप्येकदैव पूजनं सिद्ध्यतीत्यवगन्तव्यम् ।

ततो रक्तपुष्पादिना 'ह्रीं भुवनेश्वरी कुल्लुकायै नमः' इति स्वमूर्द्धनि पूजयेत् ।

ततो 'वं वराय नमः, क्रों अङ्कुशाय नमः, आं पाशाय नमः, अं अभयाय नमः' इति सम्पूज्य 'वं वरं तर्पयामि स्वाहे' त्यादिना चतुरस्तर्पयेत् ।

ततो गन्ध-पुष्पाक्षत-जलैः 'ह्रीं साङ्ग-सायुध-सवाहन-सपरिवार-स्वभैरव-सहितायै श्री भुवनेश्वर्यै नमः' इति त्रिः सम्पूजयेत् ।

ततो 'ह्रीं साङ्गां सायुधां सवाहनां सपरिवारां स्वभैरवसहितां श्री भुवनेश्वरीं तर्पयामि स्वाहा' इति त्रिः सन्तर्प्य पुष्पाञ्जलीन् समर्प्य कवचं पठेत् ।

ततो जपः । तत्र जपेति कर्तव्यता पुरश्चरणे अत्यावश्यकी नित्यजपेप्यविरुद्धाऽधिकफलार्था चेति लिख्यते ।

'ह्रीं' इति मन्त्रस्य दशधा जपेन मुख-शोधनम् । 'ऐं ह्रीं श्रीं' इति मन्त्रस्य दशधा जपेन जिह्वा-शोधनम् । ततो मूलमन्त्रेण प्रणवेन वा प्राणायाम-त्रयम् । ऋष्यादिन्यास - षडङ्गन्यास - व्यापकन्यासान् पूर्ववत् कृत्वा ततो हृदि 'ॐ' इति सेतुमन्त्रं दशकृत्वो जपेत् । कण्ठे 'ह्रीं ह्रीं' इति वा महासेतुं दशकृत्वो जपेत् ।

सहस्रारेऽपि तमेव दशकृत्वो जपेत् नाभौ 'ॐ अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं ॡं एं ऐं ओं औं अं अः कं....ङं चं....ञं टं....णं तं....नं पं....मं यं....हं लं क्षं ऐं मूलं ऐं क्षं लं हं सं षं शं वं लं रं यं मं भं बं फं पं नं धं दं थं तं णं ढं डं ठं टं ञं झं जं छं चं ङं घं गं खं कं अः अं औं ओं ऐं एं ॡं लृं ॠं ऋं ऊं उं ईं इं आं अं ॐ' इति निर्वाण-मन्त्रं त्रिर्जपेत्। ततः स्वाधिष्ठाने 'क्लीं' इति कामबीजं दशकृत्वो जपेत्। ततो मूलाधारे 'ॐ ह्रीं जूं सः कालमूर्ति काल-प्रबोधिनि कालातीते कालदायिनि कपालपात्र-धारिणि अमरि कुण्डलिनि जूं सः वं वं वं सोऽहं स्वाहा' इति कुण्डलिनी-मन्त्रं त्रिर्जपेत्। प्रणव-पुटित-मूलमन्त्रस्य सप्तकृत्वो जपेन सूतकोद्धारं कुर्यात्। 'ॐ ह्रीं ॐ' इति सप्तच्छदं प्रणव-पुटित-मूलमन्त्रं च सप्तधा विमृष्य मूलमन्त्रेण विशेषार्घजलेन मालामभ्युक्ष्य 'ऐं ह्रीं अक्षमालायै नमः' इति गन्धपुष्पादिभिर्मालामभ्यर्च्य—

ॐ माले माले महामाले सर्वशक्ति-स्वरूपिणि।
चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव॥

इति पठन् मालां दक्षिणकरेणादाय 'ॐ ह्रीं सिद्धेश्वर्यै नमः' इति पठन् मालां हृत् सन्निधौ समानीय त्रितयं कृत्वा सहस्रारे गुरुं हृत्कमले चेष्टदेवीं मूलाधारे मन्त्रं ध्यात्वा तदैक्यं भावयन् निराकुलो भूत्वा यथाकालमष्टोत्तरसहस्रं प्रजप्य जपान्ते प्रणवमुच्चार्य मालां शिरसि निधाय—

ॐ क्लीं त्वं माले सर्वदेवानां प्रीतिदा शुभदा मम। शिवं कुरुष्व मे भद्रे यशोवीर्यं च सर्वदा॥ ॐ ह्रीं सिद्धेश्वर्यै नमः।

इति प्रणम्य प्राणायाम-त्रयं ऋष्यादि-कर-षडङ्ग-न्यासं विधाय दक्षकरेण विशेषार्घजलमादाय—

ॐ गुह्यातिगुह्यगोप्त्री त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम्।
सिद्धिर्भवतु मे देवि त्वत्प्रसादान्महेश्वरि॥

इति तेजोमयं जलं देव्या वामकरे समर्पयेत। 'ईं ह्रीं ईं' इति सप्तकृत्वो जपेन दीपनं। 'हूँ' इति दशकृत्वो जपेन चेतनीकृत्य स्तुतिं पठेत।

ततो नित्यहोम-विधिना जुहुयात। स च नील-तन्त्रानुसारेणैव तस्य तारिणी-परत्वेऽपि तन्त्रसारे साधारण - नित्यहोमस्य तदनुसारेणोपलम्भादेकत्र निर्णीत-न्यायाच्च। जलादिकमादाय 'ॐ अद्य श्री भुवनेश्वरीदेवता-प्रीतये अमुकमन्त्रेण अमुकद्रव्येण नित्यहोम-विधानेन पञ्चविंशत्याहुतीः षोडशाहुतीर्वाहं होष्यामि' इति सङ्कल्प्य हस्तमात्रां भूमिं कुशादिना परिसमुह्य गोमयोदकादिनोपलिप्य त्रिकोणं यथा स्यात्तथा प्रादेश-प्रमाणास्तिस्रो रेखा लिखित्वा अंगुष्ठ-तर्जनीभ्यां ताभ्यो मृद् उद्धृत्यैशान्यां क्षिपेत। प्रोक्षणी-जलेन रेखाः प्रोक्षयेत। विष्णु-रुद्र-चन्द्रात्मतया ध्यायेच्च। प्रणम्य कांस्यपात्रेणाग्निमादाय तस्माज्ज्वलद्-ङ्गारं गृहीत्वा 'ॐ क्रव्यादेभ्यो नमः' इति नैर्ऋत्यां क्षिपेत। तस्मिन्नेव त्रिकोणे शिववीर्य-धिया वह्निं संस्थापयेत। तद्रक्षार्थं समिधस्त्रिकोणाकारेण योजयेत। ततः—

इष्टं शक्तिं स्वस्तिकाभीतिमुच्चैर्दीर्घैर्दोर्भि-
र्धारयन्तं जपाभम्। हेमाकल्पं पद्मसंस्थं त्रिनेत्रं
ध्यायेद्वह्निं बद्धमौलिं जटाभिः॥

इति ध्यात्वा ज्वालिनी-मुद्रां प्रदर्श्य फूत्कारेणाग्निं प्रज्वाल्य प्रणम्य पञ्चोपचारादिना वह्निं सम्पूज्य होम-द्रव्याणि विशेषार्घोदकेनाभिषिच्य धेनुमुद्रयामृतीकृत्य मृगीमुद्रया स्रुवं गृहीत्वा 'ॐ भूः स्वाहा, ॐ भुवः स्वाहा, ॐ स्वः स्वाहा' इति हुत्वा वह्नौ स्वेष्टदेवतां समावाह्य पाद्यादिभिः पञ्चोपचारैः समभ्यर्च्य अग्नीष्ट-देवतयोरैक्यं विभाव्य स्रुवमादाय 'ॐ ह्रां हृदयाय नमः स्वाहा, ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा, ॐ ह्रूं शिखायै वषट् स्वाहा, ॐ ह्रैं कवचाय हुँ स्वाहा, ॐ ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट् स्वाहा, ॐ ह्रः अस्त्राय फट् स्वाहा' इति षडङ्ग-हवनं कृत्वा श्री भुवनेश्वरी-कल्पोक्त-द्रव्येण षोडशवारं

(पञ्चविंशति-वारं वा) वह्निरूप-स्वेष्टदेवता-मुखे 'ह्रीं स्वाहा' इति अन्येन वा स्वोपास्य-मन्त्रेण जुहुयात्। ततः स्रुवेण 'ह्रीं श्रीं भुवनेश्वरी-परिवारेभ्यः स्वाहा ह्रीं श्रीं भुवनेश्वर्यायुधेभ्यः स्वाहा' इत्येकैकामाहुतिं दत्वा पुष्प-चन्दन - ताम्बूल - फलादि - प्रभूतं घृतं चादाय समुत्तिष्ठन् 'ॐ ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्' इति पूर्णाहुतिं दत्वा आचमनीयं च दत्वा घण्टा-चामरादि-ग्रहणेन स्तवादिकं यथाशक्ति पठित्वा प्रणम्य संहारमुद्रया देवीं भ्रूमध्य-स्थित-चन्द्रमण्डल-मध्ये विसृजेदिति नित्यहोमविधिं समाप्य आरात्रिकं विधाय मूलमुच्चरमाणो देव्याः पञ्चाङ्गं प्रदक्षिणं त्रिकोणाकारं यथा स्यात्तथा विधाय साष्टाङ्गं वा प्रणमेत्।

ततो विशेषार्घोदकं दक्षिणकरेणादाय—

इतः प्राणबुद्धिदेहधर्माधिकारतो जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिषु सर्वास्वस्थासु मनसा वाचा कर्मणा हस्ताभ्यां पद्भ्यामुदरेण शिश्ना यत्स्मृतं यदुक्तं यत्कृतं तत्सर्वं ब्रह्मार्पणं भवतु स्वाहा।

इति देव्या वामकरे समर्पयेत्। ततो गुरुन् स्वशिरसि विसृज्य परिवारान् देव्यङ्गे विलीनान् विभाव्य संहारमुद्रया—

ॐ गच्छ गच्छ परं स्थानं स्वस्थानं परमेश्वरि।
यत्र ब्रह्मादयो देवा न विदुस्ते परं पदम्॥

इति तर्जनी-युगलेन देवी-तेजसा सह चक्रस्थपुष्पमुद्धृत्य आघ्राय वहद्वायुना तत्तेजो ब्रह्मरन्ध्रं नीत्वा परमशिवे संयोज्यामृत-प्लुतं विभाव्य क्षणं विश्रम्य—

ॐ तिष्ठ देवि परे स्थाने स्वस्थाने परमेश्वरि।
यत्र ब्रह्मादयः सर्वे सुरास्तिष्ठन्ति मे हृदि॥

इति मन्त्रेण सुषुम्ना-मार्गेण हृदयारविन्दे नीत्वा दीपे दीपान्तरमिव हृदये वर्तमान-जीवात्मतेजसि संयोज्य एकीभूतं विचिन्त्य सम्पूज्य आत्मानं तत्तेजोमयं विभावयेत्—

ॐ ते सर्वे विलयं यान्तु ये मां हिंसति हिंसकाः ।
मृत्यु-रोग-भय-क्लेशाः पतन्तु रिपु-मस्तके ॥

इत्यैशान्यां क्षिपेत् । ततो रक्तचन्दनादि-निर्मित त्रिकोणोपरि चक्रस्थनिर्माल्यं प्रक्षिपेत् । चक्रस्थ-पुष्पमादाय शिरसि निधाय चक्रस्थं सिन्दूरं रक्त-चन्दनं वादाय—

ह्रीं ये मां स्पृशन्ति हस्तेन ये मां पश्यन्ति चक्षुषा । सर्वे ते वश्यमायान्तु राजानो दुष्टजन्तवः ॥

इति मन्त्रेण स्वभाले तिलकं विधाय पादोदकं पीत्वा शिरसि धृत्वा नैवेद्यं तद्भक्तेभ्यो दत्वा स्वयं च भुक्त्वा देवीरूपोऽहमित्यात्मानं विभावयन् विहरेदिति समयाचारः ।

'ह्रीं' इत्येकाक्षरमन्त्रस्य पुरश्चरणं द्वात्रिंशल्लक्ष-जपः । प्रजपेन्मन्त्रविन्मन्त्रं द्वात्रिंशल्लक्षमानवः । त्रिस्वादूक्तैश्च जुहुयादष्टद्रव्यैर्दशांशतः । अष्टद्रव्याणि यथा—

अश्वत्थोदुम्बर-प्लक्ष-न्यग्रोध-समिधस्तिलाः ।
सिद्धार्थ-पायसाज्यानि द्रव्याण्यष्टौ विदुर्बुधाः ।

त्रिस्वाद्विति—घृत-मधु-शर्कराः ।

'ऐं ह्रीं श्रीं' इति त्र्यक्षरस्यापि न्यास-पूजादिकं सर्वं पूर्ववत् । कराङ्गन्यासयोरियान् विशेषः ।

ऐं ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः । ऐं ह्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा । ऐं ह्रूं मध्यमाभ्यां वषट् । ऐं ह्रैं अनामिकाभ्यां हूं । ऐं ह्रौं कनिष्ठाभ्यां वषट् । ऐं ह्रः करतल-करपृष्ठाभ्यां फट् ।

एवं ऐं ह्रां हृदयाय नमः । ऐं ह्रीं शिरसे स्वाहा । ऐं ह्रूं शिखायै वषट् । ऐं ह्रैं कवचाय हूं । ऐं ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट् । ऐं ह्रः अस्त्राय फट् ।

ध्यानं तु—

सिन्दूरारुण-विग्रहां त्रिनयनां माणिक्य-मौलि-स्फुरत्तारानायक - शेखरां स्मितमुखी-

मापीन-वक्षोरुहाम् । पाणिभ्यां मणिपूर्ण-रत्न-चषकं रत्नोत्पलं विभ्रतीं । सौम्यां रत्न-घटस्थ-सव्यचरणां ध्यायेत् परामम्बिकाम् ॥

अस्य पुरश्चरणं द्वादशलक्ष-जपः । रविलक्षं जपेन्मन्त्रं पायसैर्मधुरान्वितैः दशांशं जुहुयान्मन्त्री संस्कृते हव्यवाहने । इति द्वितीय-मन्त्रोपासने विशेष ऊह्यः ।

'ऐं ह्रीं ऐं' इति त्र्यक्षर-मन्त्रस्यापि न्यासपूजादिकं सर्वमेकाक्षरी-वत् । कराङ्गन्यासयोरियान् विशेषः—

ऐं ह्रां ऐं अंगुष्ठाभ्यां नमः । ऐं ह्रीं ऐं तर्जनीभ्यां स्वाहा । ऐं ह्रूं ऐं मध्यमाभ्यां वषट् । ऐं ह्रैं ऐं अनामिकाभ्यां हूं । ऐं ह्रौं ऐं कनिष्ठिकाभ्यां वौषट् । ऐं ह्रः ऐं करतल-करपृष्ठाभ्यां फट् ।

एवं ऐं ह्रां ऐं हृदयाय नमः । ऐं ह्रीं ऐं शिरसे स्वाहा । ऐं ह्रूं ऐं शिखायै वषट् । ऐं ह्रैं ऐं कवचाय हूं । ऐं ह्रौं ऐं नेत्रत्रयाय वौषट् । ऐं ह्रः ऐं अस्त्राय फट् ।

मध्येन दीर्घयुक्तेन वाक्पुटेन प्रकल्पयेदिति ।

ध्यानं तु—

श्यामाङ्गीं शशिशेखरां निजकरैर्दानं च रक्तोत्पलं । रत्नाढ्यं चषकं परं भयहरं संविभ्रतीं शाश्वतीम् । मुक्ताहार-लसत्पयोधर-नतां नेत्रत्रयोल्लासिनीम् । वन्देऽहं सुर-पूजितां हरवधूं रक्तारविन्द-स्थिताम् ॥

अष्टपत्रेषु पूजायां विशेषः ।—

आं ब्राह्म्यै, ईं माहेश्वर्यै, ऊं कौमार्यै, ॠं वैष्णव्यै, ॡं वाराह्यै, ऐं इन्द्राण्यै, औं चामुण्डायै, अः महालक्ष्म्यै ।

अं असिताङ्गभैरवाय नमः, इं रुरवे, उं चण्डाय, ऋं क्रोधाय, लृं उन्मत्ताय, एं कपालिने, ओं भीषणाय, अं संहाराय ।

अथवा 'अं आं असिताङ्ग-ब्राह्मीभ्यां नमः'

इत्यादि एकदैव पूजयेत। तथा च—'दीर्घाद्याः मातरः प्रोक्ता ह्रस्वाद्या भैरवाः स्मृताः।'

अस्य पुरश्चरणं दशलक्षजपः मधुरान्वितैः पलाशपुष्पैर्दशांशहोमः तथाहि। तत्त्वलक्षं जपेन्मन्त्रं दशांशं जुहुयात्ततः। पलाशपुष्पैः स्वादूक्तैः पुष्पैर्वा राजवृक्षजैरिति। तत्त्वलक्षं दशलक्षं अन्तरङ्गत्वादिति गुरवः। चतुर्विंशतिलक्षमिति केचिदिति तन्त्रसारः।

'श्रां ह्रीं क्रौं' इति त्र्यक्षर मन्त्रस्यापि एकाक्षरीवत ऋष्यादि-छन्दो-देवता-न्यासादिः। ध्यानं तु—

वरांकुशौ पाशमभीति-मुद्रां करैर्वहन्तीं
कमलासनस्थाम्। बालार्क-कोटि-प्रतिमां त्रिनेत्रां
भजेऽहमाद्यां भुवनेश्वरीं ताम्॥

अस्य पूजादिकं पूर्ववत कार्यं। अष्टदलेषु ब्राह्मयादि-युगलं पूर्ववत पूजयेत। षोडशदले पूजाया अनुक्तत्वात षोडशदलाभावः। अस्य पुरश्चरणं दशलक्षजपः। दधि-मधु-घृताक्ताभिरश्वत्थोदुम्बरप्लक्षाणां समिद्भिस्तिलैर्दुग्धाक्तैर्दशसहस्र-होमः। हविष्य-भुग् जपेन्मन्त्रं तत्त्वलक्षं जितेन्द्रियः तत्सहस्रं च जुहुयाज्जपान्ते मन्त्रवित्तमः। दधिक्षौद्रघृताक्ताभिः समिद्भिः क्षीरभूरुहाम्। तत्संख्यया तिलैः शुद्धैः पयोक्तैर्जुहुयात्ततः। अत्र तत्त्वशब्देन दशोच्यन्ते शक्तेर्दशतत्त्वमिति वचनात्।

अन्ये श्रीभुवनेश्वरी-मन्त्रा अप्रसिद्धा इति न ते लिखिताः। इति श्रीभुवनेश्वरी-सपर्या-विधिः परिपूर्णा।

कुलार्णवे—

आत्म - स्थान-द्रव्य-मन्त्र-देवशुद्धिस्तु पञ्चमी।
यावन्न कुरुते देवि तस्य देवार्चनं कुतः।
पञ्चशुद्धिं विना पूजा अभिचाराय कल्पते।
सुस्नातैर्भूतशुद्धैश्च प्राणायामादिभिः प्रिये।
षडङ्गाद्यखिलन्यासैरात्मशुद्धिरितीरिता ॥१॥
सम्मार्जनानुलेपाद्यैर्दर्पणाद्यैश्च तच्छुभैः।
वितान - धूप - दीपादि-पुष्पमाल्यादि-शोभितम्।
पञ्चवर्णरजोभिश्च स्थानशुद्धिरितीरिता ॥२॥
ग्रथिता मातृकावर्णैर्मूलमन्त्राक्षराणि च।
क्रमोत्क्रमाद् द्विरावृत्या मन्त्रशुद्धिरितीरिता ॥३॥

पूजाद्रव्याणि सम्प्रोक्ष्य मूलास्त्रैश्च विधानतः।
दर्शयेद् धेनुमुद्रादिर्द्रव्यशुद्धिः प्रकीर्तिता ॥४॥
पीठे देवीं प्रतिष्ठाप्य सकलीकृत्य मन्त्रवित्।

मूलमन्त्रेण धूपादीन् माल्यादीनुदकेन च।
त्रिवारं प्रोक्षयेद्विद्वान् देवशुद्धिरितीरिता।
पञ्चशुद्धिं विधायेत्थं पश्चात् पूजनमाचरेत्।

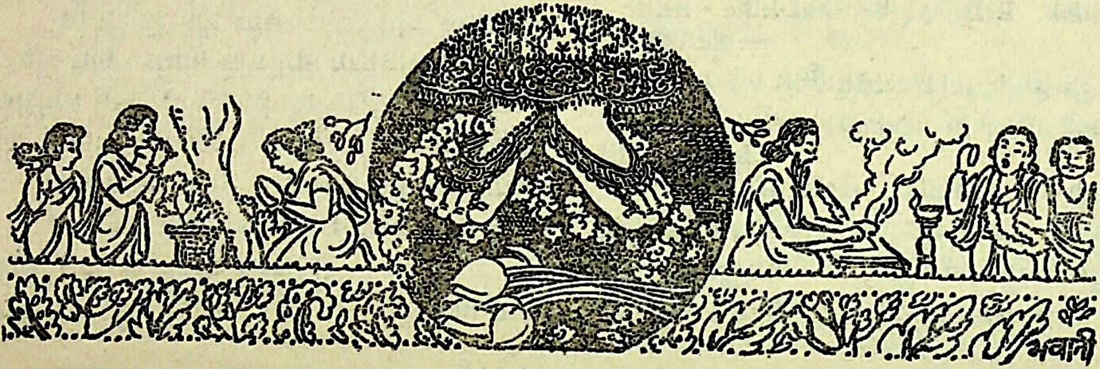

त्रिपुरसुन्दरी सपर्या-विधि

मातृ-रहस्यं जनता समक्षं सम्भाषमाणा य निजात्मजाय ।
माता हसन्ती मधुराणि दत्ते न क्लेशलेशं हृदये विधत्ते ॥१॥

सर्गादौ तमसि प्ररूढमहसो या शोणिमाणीयसी ।
शक्तिः सर्ग-विधायिनीति महसो ब्रह्मत्व-सम्पादिनी ॥
आविर्भूय सदाशिव-प्रणयिनी सौन्दर्य-सारश्रिया सा ।
श्रीचक्र - निवासिनी विजयते संसारि - खेदच्छिदे ॥२॥

अथ श्रीमत्त्रिपुरसुन्दर्या विशेषपूजायां प्रातःकृत्य-स्नान-तर्पणान्ताः क्रिया विशेषास्ते चान्यत्र मल्लिखित-पूजा-पद्धतौ अन्वेष्टव्याः। संक्षिप्त-पूजने त्वत्र प्रागुक्त-प्रकारेण मातृकान्यासान्ताः क्रियाः कर्तव्याः। इयांस्तु विशेषः—

पूजा-मण्डप-द्वारमागत्य 'ॐ आत्मतत्त्वाय स्वाहा, ॐ विद्यातत्त्वाय स्वाहा, ॐ शिवतत्त्वाय स्वाहा' इति त्रिराचम्य सामान्यार्घं विधाय तज्जलेन द्वारमभ्युक्ष्य दक्षिण-वाम-पार्श्वयोरुपर्यधः 'ऐं ह्रीं श्रीं गां गणपतये नमः, ३ क्षां क्षेत्रपालाय नमः, ३ द्वारश्रियै नमः,

३ देहल्यै नमः,' ततो वामपाद-पुरस्सरं मण्डपे प्रविश्य अग्न्यादि-कोणेषु '३ गां गणपतये नमः, ३ दुं दुर्गायै नमः, ३ वां वटुकाय नमः, ३ क्षां क्षेत्र-पालाय नमः, मध्ये ३ रत्नमण्डपाय नमः, पूर्वादि-दिक्षु ३ कामदेवाय नमः रत्यै नमः, ३ वसन्ताय नमः प्रीत्यै नमः, ३ सां सरस्वत्यै नमः श्रियै नमः।

सोमभुजगावली-मते तु—मायां भद्रकालीं स्वस्तिं स्वाहां शुभङ्करीं गौरीं लोकधात्रीं—वागीश्वरीमपि पूजयेत इति शेषं पूर्ववत।

अथ विनियोगादिः। मूलमुच्चार्य अस्य श्रीत्रिपुर-सुन्दरीमन्त्रस्य दक्षिणामूर्तिऋषिः, पंक्तिश्छन्दः, श्रीत्रिपुरसुन्दरी देवता, वाग्भवं बीजं, कामराजं कीलकं, तार्तीयं शक्तिः, पुरुषार्थ-चतुष्टये विनियोगः।

शिरसि दक्षिणामूर्तये ऋषये नमः। मुखे पंक्त्यै छन्दसे नमः। हृदि त्रिपुरसुन्दर्यै देवतायै नमः। गुह्ये ऐं बीजाय नमः। पादयोः सौः शक्तये नमः। सर्वाङ्गे कामराजाय क्लीं कीलकाय नमः।

ततो वशिन्यादि-न्यासः। अं आं १६ (खलूं) व्लूं वशिनीवाग्देवतायै नमः ब्रह्मरन्ध्रे। कं...ङं कलह्रीं कामेश्वरी-वाग्देवतायै नमः ललाटे। चं...ञं नव्लीं मोदिनी-वाग्देवतायै नमः भ्रूमध्ये। टं...णं य्लूं विमला-वाग्देवतायै नमः सर्वाङ्गे। तं...नं ज्म्लीं अरुणावाग्देवतायै नमः हृदि। पं...मं (हसलव्यूं) ह्स्ल्व्यूं जयिनी वाग्देवतायै नमः नाभौ। यं रं लं वं झमरयूं (झ्म्र्यूं) सर्वेश्वरी-वाग्देवतायै नमः आधारे। शं षं ५ (क्षमरीं) क्ष्म्रीं कौलिनी वाग्देवतायै नमः सर्वाङ्गे।

ततः करन्यासः। अं मध्यमाभ्यां नमः, आं अनामिकाभ्यां नमः, सौः कनिष्ठाभ्यां नमः, अं अंगुष्ठाभ्यां नमः, आं तर्जनीभ्यां नमः, सौः करतल-करपृष्ठाभ्यां नमः।

ततोऽङ्गन्यासः। ऐं हृदयाय नमः, क्लीं शिरसे स्वाहा, सौः शिखायै वषट्, ऐं कवचाय हूँ, क्लीं नेत्रत्रयाय वौषट्, सौः अस्त्राय फट्।

न्यास-विशेषा अन्ते सन्ति। ततो मूलेन व्यापकं कुर्यात्। ततो यन्त्रराजं सिन्दूर-कुंकुमादिना लिखेत्। तत्र विन्दुमत्त्र्यस्रमष्टकोणमेतत्त्रयं संहारचक्रं द्विर्दशारं चतुर्दशारं स्थितिचक्रमेतत्त्रयम्। अष्टपत्रं षोडशदलं वृत्तं भूमण्डल-त्रयं चतुर्द्वार-युक्तमेतत्सृष्ट्यात्मकम्। तदुक्तं यामले—

विन्दु-त्रिकोण-वसुकोण-दशारयुग्म-मन्वस्र-नागदल-सङ्गत-षोडशारम्।

वृत्तत्रयञ्च धरणी-सदन-त्रयञ्च श्रीचक्रराज-मुदितं परदेवतायाः॥

दक्षिणामूर्त्तौ च स्पष्टमाह। शक्त्युपरिष्टात् शक्तिं तु विलिखेद्विस्तृतां सकृत। वह्निना तत्पुटं कुर्यात् सन्धिभेद-क्रमेण तु। अग्नीशासुर-वायव्यरेखा विस्तीर्य योजयेत्। दशकोणं तथा देवि जायते तद्वदेव हि। मध्यकोण-चतुष्कस्य रेखामाकृष्य बुद्धिमान्। तत्तत्सन्धि-विभेदेन मन्वस्रं जायते तथा। सम-त्रिकोण-सश्रीकं मुखं हृन्नेत्रयोर्यथा। सुश्रीकं सन्धिभेदेन ऋजुरेखा-विभूषितम्॥ बहिरष्टदलं पद्मं सुवृत्तेन समालिखेत्। तद्वत् षोडशपत्रं हि विलिखेत्पद्ममुत्तमम्। सुवृत्ते परमेशानि बिम्बत्रयं समालिखेत्॥ चतुर्द्वार-विशोभाढ्यं पुष्पं तत्र मध्ये विन्दु-विभूषितम्। त्रिकोणं चैव चाष्टारं दशारञ्च दशारकम्। मनुकोणं महेशानि म यचक्र-मिदं प्रिये। वैन्दवादष्टकोणान्त सर्वं मध्य महेश्वरि। चत्वारिंशत्कोणयुक्तं त्रिभागैरपि पार्वति। वसुपत्रं कलापत्रं चतुरस्रं क्रमाल्लिखेत्। भवात्मकमिदं भद्रे भवयोन्यङ्कितं लिखेत्। चक्रराजं सिन्दूर-कुङ्कुमादिना लिखितम्।

सुवर्ण-रजत-पञ्चरत्न-स्फटिक-ताम्राद्युत्कीर्णं वा कुर्यात्। भूतभैरवे—योऽस्मिन् यन्त्रे महेशानि केशराणि प्रकल्पयेत् योगिनी-सहितास्तस्य विघ्नं कुर्वन्ति भैरवा इति। तस्मान्नात्र केशर-कल्पना कार्या।

स्वच्छन्दभैरवे—कुर्याच्च स्थण्डिले यन्त्रं हस्त-मात्रं सुसुन्दरम्। रत्नादिषु विनिर्म्माणे मानमिच्छा-

वशाद् भवेत्। रक्तेन रजसाऽपूर्य श्रीचक्रं भुवि पूजयेत्। नश्यन्ति सर्वविघ्नाश्च प्राप्यते च यथेप्सितम्। दशभागं सुवर्णस्य ताम्रस्य द्विदशं तथा। षड्गुणं राजतस्यापि चैतल्लोहत्रयं तथा। चक्रेऽस्मिन् पूजयेद्यो हि स सौभाग्यमवाप्नुयात्। अणिमाद्यष्ट-सिद्धीनामधिपो जायतेऽचिरात्। विद्रुमे रचिते यन्त्रे पद्मरागेऽथवा प्रिये। इन्द्रनीलेऽथ वैदूर्ये स्फटिके मरकतेपि वा। धनं पुत्रं तथा दारान् यशांसि लभते ध्रुवम्। ताम्रं च कान्तिदं यन्त्रं स्वर्णजं शत्रुनाशनम्। राजतं क्षेमदं चैव स्फटिकं सर्व-सिद्धिदम्। दग्धं च स्फुटितं यन्त्रं हृतं चौरेण वा प्रिये। उपवासं प्रकुर्वीत दिनमेकमतन्द्रितः। लक्षमात्रं जपेद्विद्यां होम-तर्पण-पूर्विकाम्। सद्गुरुं तथा च गुरुं तोष्य ब्राह्मणानपि भोजयेत्। लक्षमयुतमित्येके। कदाचिल्लुप्तचिह्नं वा स्फुटितादि-विदूषणम्। भग्नं करोति यो मर्त्यो मृत्युस्तस्य ध्रुवं भवेत्। तस्माच्च तीर्थराजे वा गङ्गादि-सरिताम्वरे। समुद्रे वा क्षिपेदेवि अन्यथा दुःखमाप्नु-यात्। इदं तु यन्त्रमात्र-विषयमिति तन्त्रसारे।

गङ्गा-पुष्कर-नर्मदा-सुयमुना-गोदावरी-गोमती-गङ्गाद्वार-गया-प्रयाग-बदरी-वाराणसी-सिन्धुषु। रेवा-सेतु-सरस्वती-प्रभृतिषु ब्रह्माण्डभाण्डोदरे। तीर्थस्नान-सहस्रकोटिफलदं श्रीचक्र-पादोदकम्। सम्यक् शतक्रतून् कृत्वा यत्फलं समवाप्नुयात्। तत्फलं लभते भक्त्या कृत्वा श्रीचक्र-दर्शनम्। सार्द्ध-त्रिकोटि-तीर्थेषु स्नात्वा यत्फलमश्नुते। तत्फलं लभते भक्त्या कृत्वा श्रीचक्र-दर्शनम्।

प्रकृतमनुसरामः। एवं विरचिते मनोहरे यन्त्रे पुष्पाञ्जलि-विधिना पुष्पाणि निःक्षिप्य मानसपूजां कुर्यात्। तत्र ध्यानं, यथा—

ततः पद्मनिभां देवीं बालार्क-किरणोज्ज्वलाम्।
जवाकुसुम-संकाशां दाडिमी-कुसुमोपमाम्।
पद्मराग-प्रतीकाशां कुंकुमारुण-सन्निभाम्।
स्फुरन्मुकुटमाणिक्य-किङ्किणीजालमण्डिताम्।
कालालिकुल-संकाश-कुटिलालक-पल्लवाम्।
प्रत्यग्रारुण-संकाश-वदनाम्भोज-मण्डलाम्।

विश्वकर्म - विनिर्माण - सूत्र - सुस्पष्टनासिकाम् ।
ताम्र - विद्रुम - बिम्बाभ - रक्तोष्ठीममृतोपमाम् ।
रक्ताम्बुज - नखज्योतिर्वितानित - नभस्थलाम् ।
किञ्चिदर्द्धेन्दु - कुटिल - ललाट - मृदु - पट्टिकाम् ।
पिनाकि - धनुराकार - भ्रूलतां परमेश्वरीम् ।
आनन्द - मुदितोल्लास-लीलान्दोलित-लोचनाम् ।
मुक्ताहार - लतोपेत - समुन्नत - पयोधराम् ।
त्रिवली - वलया - युक्तमध्यदेश - सुशोभिताम् ।
अनर्घ्यरत्न - घटित - काञ्चीयुत - नितम्बिनीम् ।
नितम्ब - बिम्ब - द्विरद - रोमराजी - वरांकुशाम् ।
कदली - ललित - स्तम्भ-सुकुमारोरुमीश्वरीम् ।
लावण्य - कुसुमाकार - जानुमण्डल - बन्धुराम् ।
लावण्य - कदलीतुल्य - जंघायुगल - मण्डिताम् ।
गूढ - गुप्त - पदद्वन्द्व - प्रपदाजित - कच्छपाम् ।
तनुदीर्घांगुलि स्वच्छ-नखराजि-विराजिताम् ॥
ब्रह्म-विष्णु-शिरोरत्न-निघृष्ट - चरणाम्बुजाम् ।
शीतांशु-शत-सङ्काश-कान्ति-सन्तान-हासिनीम् ॥
लौहित्य-जित सिन्दूर-जवा-दाडिम-रागिणीम् ।
रक्तवस्त्र-परीधानां पाशांकुश-करोद्यताम् ॥
रक्तपद्म-निविष्टां तु रक्ताभरण-भूषिताम् ।
चतुर्भुजां त्रिनेत्रां तु पुष्पवाण-धनुर्धराम् ॥
कर्पूर-शकलोन्मिश्र - ताम्बूल - पूरिताननाम् ।
महामृग - मदोद्दाम - कुंकुमारुण - विग्रहाम् ॥
सर्वशृङ्गार-वेशाढ्यां सर्वाभरण - भूषिताम् ।
जगदाह्लाद - जननीं जगद्रञ्जन - कारिणीम् ॥
जगदाकर्षणकरीं जगत्कारण - रूपिणीम् ।
सर्वलक्ष्मीमयीं नित्यां सर्वशक्तिमयीं शिवाम् ।

अथवा—

बालार्कमण्डलाभासां चतुर्बाहुं त्रिलोचनाम् ॥
पाशांकुशशरांश्चापं धारयन्तीं शिवां श्रये ॥

इति ध्यानम् । ततो मानस-पूजा—

मूलाधारे मं मण्डूकाय नमः । कां कालाग्निरुद्राय नमः । ॐ आधारशक्तये नमः । ॐ कूर्माय नमः । ॐ अनन्ताय नमः । ॐ पृथिव्यै नमः मेढ्रे । ॐ रसाम्बुधये नमः । नाभौ ॐ रत्नद्वीपाय नमः । हृदि ॐ नन्दनोद्यानाय नमः । ॐ रत्नमण्डपाय नमः । ॐ कल्पवृक्षाय नमः । ॐ रत्नवेदिकायै नमः । ॐ रत्नसिंहासनाय नमः । पीठोपरि ॐ वैन्दवचक्राय नमः । हसौः सदाशिव-महाप्रेत-पद्मासनाय नमः ।

वैन्दवे 'हसरैं हसकलरीं हसरौः' इति मन्त्रेण मूर्तिं सङ्कल्प्य प्रतिष्ठापयेच्च वक्ष्यमाण-क्रमेण मनसा तत्प्राणान् । ततः सहस्रदलकमलान्तर्गत चन्द्रबिम्ब-स्रवदमृत-धाराभिः संस्नाप्य—

१—'मूलं श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरीदेवतायै लं पृथ्वी-तत्वात्मकं गन्धं समर्पयामि नमः' इति हस्तद्वय-कनिष्ठांगुष्ठ-संयोगात्मक-गन्धमुद्रया मनः कल्पित श्रीखण्ड - कृष्णागुरु-केसरि - कर्पूरादिच्छोदं सर्वाङ्गे मनसा समर्पयेत् ।

२—ततो 'मूलं श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरीदेवतायै हं आकाशतत्वात्मकं पुष्पं समर्पयामि नमः' इति हस्तद्वय-तर्जन्यंगुष्ठ-संयोगात्मक - पुष्पमुद्रया मनः कल्पित रक्तकरवीर-जवा-कमल-चम्पकादि-मालां तत्पुष्पाणि च तत्तदङ्गे हस्ते च मनसा समर्पयेत् ।

३—ततो 'मूलं श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरीदेवतायै यं वायुतत्वात्मकं धूपं समर्पयामि नमः' इति हस्तद्वय-तर्जन्यंगुष्ठ-योगात्मक धूपमुद्रया मनः कल्पित-रजत-भाजनोपरि-निर्धूमाङ्गार-समर्पित-विहित-धूपं समर्पयेत् धूपयेच्च मनसा पादतो नाभिपर्यन्तम् ।

४—ततो 'मूलं श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरीदेवतायै रं वह्नि-तत्वात्मकं दीपं समर्पयामि नमः' इति हस्तद्वय-

मध्यमांगुष्ठ - योगात्मकं दीपमुद्रया मनः कल्पित राजतादि-भाजनस्थाज्य-कर्पूर-गर्भपट्टवर्तिका - ज्वलित-प्रदीपं समर्पयेत् दीपयेच्च मनसा पादतो नेत्रान्तम्।

५—ततो 'मूलं श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरीदेवतायै वं अमृततत्वात्मकं नैवेद्यं समर्पयामि नमः' इति हस्तद्वयां-गुष्ठानामिका - योगात्मक - नैवेद्यमुद्रया मनः कल्पित-परमान्नादि-मधुरद्रव्यं समर्पयेत प्रदर्शयेच्च वक्ष्यमाण-प्राणादि-पञ्चग्रासमुद्राः।

इति पञ्चोपचारान् समर्प्य उपदेशानुसारेण 'वं अमृततत्त्वात्मकं पानीयं, हं आकाशतत्वात्मक-पुष्पाञ्जलि'मित्याद्यपि मनसा समर्पयेत्। ततश्चन्द्रार्का-नल-संघट्ट-गलित-परमामृतेन 'मूलं श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरी-देवतां, तर्पयामि स्वाहा' इति मनसा त्रिः सन्तर्प्य वर्णमालया करमालया वा मनुं जप्त्वा समर्प्य स्तुत्वा प्रणमेदिति मानसपूजां कृत्वा ततो बाह्यपूजार्थं पात्र-स्थापनम्।

श्रीयन्त्रस्य पुरतः स्व-वामभागे षट्कोणमध्ये त्रिकोणं रक्तचन्दनादिना विलिख्य तत्र त्रिपदिकां संस्थाप्य मूलेन षट्कोणं पूजयेत्। फडिति मन्त्रेण शङ्खं प्रक्षाल्य मूलमन्त्रेण जलेनापूर्य गन्ध-पुष्पादिकं निःक्षिप्य 'मं वह्निमण्डलाय दशकलात्मने नमः' इति त्रिपदिकायां पूजयेत्। 'अं सूर्यमण्डलाय द्वादश-कलात्मने नमः' इति शङ्खे पूजयेत्। 'उं सोममण्डलाय षोडशकलात्मने नमः' इति जले पूजयेत्। ततोऽङ्कुश-मुद्रया 'गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति, नर्मदे सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु' इति तीर्थ-मावाह्य 'हूँ' इत्यवगुण्ठ्य तत्र बिल्वपत्र-रक्तचन्दन-वज्रपुष्प-दूर्वाक्षतानि निःक्षिप्य 'आग्नेये ऐं हृदयाय नमो नमः, ऐशान्यां क्लीं शिरसे स्वाहा नमः, नैरृत्यां सौः शिखायै वषट् नमः, वायव्ये ऐं कवचाय हूँ नमः, मध्ये क्लीं नेत्रत्रयाय वौषट् नमः, दिक्षु सौः अस्त्राय फट् नमः' इति सम्पूज्य धेनुमुद्रयामृतीकृत्य मूलमन्त्र-मष्टधा प्रजप्य किञ्चिदुद्धृत्य तज्जलं प्रोक्षण्यम्भसि निःक्षिप्य तेनोदकेनात्मानं यागवस्तूनि च त्रिरभ्युक्षयेत्।

ततस्त्रिकोण-वृत्त-चतुरस्रात्मकानि षण्मण्डलानि निर्माय तेष्वाधारान्निधाय 'ॐ आधारशक्तये नमः' इति सम्पूज्य क्रमेण प्रथमं १ पाद्यपात्रं, तद्वामे २ अर्घ्यपात्रं, तद्वामे ३ आचमनीय-पात्रं, तद्वामे ४ मधुपर्क-पात्रं, तद्वामे ५ पुनराचमनीय-पात्रं, तद्वामे ६ स्नानीय-पात्रं संस्थाप्य १ पाद्यपात्रे जलं श्यामाक-दूर्वाब्ज-विष्णुक्रान्ता - द्रव्याणि, २ अर्घ्यपात्रे जलं गन्ध-पुष्पाक्षत-यव - कुशाग्र - तिल-सर्षप - दूर्वादलानि, ३ आचमनीय-पात्रे जलं लवङ्ग-कङ्कोलानि, ४ मधुपर्क-पात्रे दधि-मधु-सर्पिस्सिताः समास्वल्पं जलमेकीकृत्य धारयेत्, ५ पुनराचमनीय-पात्रे शुद्धं जलं, ६ स्नानीय-पात्रे गन्धापो निःक्षिपेत्। ततः किञ्चिच्छङ्खामृतं पुष्पादिना समुद्धृत्य सर्वेषु पात्रेषु निःक्षिप्य सर्वं दिव्यं विचिन्तयेत्।

ततो यन्त्रमुपर्युपरि 'मं मण्डूकाय नमः, कां कालाग्निरुद्राय नमः, ॐ आधारशक्तये नमः, ॐ कूर्माय नमः, ॐ अनन्ताय नमः, ॐ पृथिव्यै नमः, ॐ रसाम्बुधये नमः, ॐ रत्नद्वीपाय नमः, ॐ नन्दनोद्यानाय नमः, ॐ रत्नमण्डपाय नमः, ॐ कल्पवृक्षाय नमः, ॐ रत्नवेदिकायै नमः, ॐ रत्नसिंहासनाय नमः, ॐ वैन्दवचक्राय नमः, ह्सौः सदाशिव-महाप्रेत-पद्मासनाय नमः' इति सम्पूजयेत्। इति पीठपूजा।

ततः उक्तरूपामिष्टदेवीं हृत्पद्मोपरि स्थितां त्रिखण्डां प्रदर्श्य 'यं' इति वायुवीजमुच्चरमाणो वामनासिकया रेचन-क्रमेण कर-कच्छपिकास्थ-पुष्पे समानीय चक्रस्थ-वैन्दवे 'हसैं हसकलरीं हसरौः' इति मन्त्रेण कल्पित-मूर्तेः शिरसि—

ॐ महापद्म-वनान्तःस्थे कारणानन्दविग्रहे।
सर्वभूतहिते मातरेह्येहि परमेश्वरि॥

इति तत्पुष्पं दत्वा ब्रह्मरन्ध्र-द्वारा देवता-तेजो हृदयं प्रविश्य स्थिरीभूतं भावयेत्। ततोऽञ्जलिं बध्वाऽनामिका-मूलपर्व-द्वये अंगुष्ठाग्रे निःक्षिप्य मूलमुच्चार्य 'श्रीत्रिपुरसुन्दरि इहागच्छ इहागच्छ', तदञ्जलिमधो-

मुखं कृत्वा 'मूलं श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरि इह तिष्ठ इह तिष्ठ।' उच्छ्रितांगुष्ठ-मुष्टी संयोज्य 'मूलं श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरि इह सन्निधेहि इह सन्निधेहि।' तन्मुष्टि-युगलमन्तः प्रवेशितांगुष्ठं संयोज्य 'मूलं श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरि इह सन्निरुध्यस्व इह सन्निरुध्यस्व।' तन्मुष्टि-युगलमुत्तानीकृत्य 'मूलं श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरि इह सम्मुखी भव इह सम्मुखी भव।'

इति पंचमुद्राः प्रदर्श्य शालग्राम-भिन्ने पूजाधारे प्राणप्रतिष्ठां कुर्यात। कुण्डलिन्यां न प्राणप्रतिष्ठा शालग्राम-शिलात्वाविशेषात। मूल-कल्पित-मूर्ति-हृदये लेलिहानमुद्रया हस्तमारोप्य—

आं ह्रीं क्रों हंसः त्रिपुरसुन्दर्याः प्राणा इह प्राणाः। आं ह्रीं क्रों हंसः त्रिपुरसुन्दरीदेवतायाः जीव इह स्थितः। आं ह्रीं क्रों हंसः त्रिपुरसुन्दरी देवतायाः सर्वेन्द्रियाणि इह स्थितानि। आं ह्रीं क्रों हंसः त्रिपुरसुन्दरीदेवतायाः वाङ्मनश्चक्षुःश्रोत्रघ्राणप्राणा इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा।

इति प्राणान् प्रतिष्ठाप्य अवगुण्ठन-मुद्रया 'मूलं श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरदेवते इहावगुण्ठिता भव' इत्यवगुण्ठयेत। ततः पुष्प-द्वारा पूज्य-देवता-हृदये—

१ ऐं हृदयाय नमः, २ क्लीं शिरसे स्वाहा, ३ सौः शिखायै वषट्, ४ ऐं कवचाय हूँ, ५ क्लीं नेत्रत्रयाय वौषट्, ६ सौः अस्त्राय फट्।

इति न्यासं विदध्यादिति सकलीकरणम्। धेनुमुद्रया 'वं' इति अमृतीकृत्य योनिमुद्रां प्रदर्शयेत। प्रदर्शयेच्च एतत् कल्पोक्ता नवमुद्रास्ताश्चाग्रे द्रष्टव्याः। ततो विशेषार्घोदकेन मूलमन्त्रेण त्रिः प्रोक्षणेन देवीशुद्धिं विदध्यात। ततो यथालाभं चतुष्षष्ट्युपचारैः षोडशोपचारैः पञ्चोपचारैर्वा पूजयेत।

तत्र षोडशोपचारा, यथा—१ पाद्यं, २ अर्घः, ३ आचमनीयं, ४ स्नानं, ५ वसनं, ६ भूषणं, ७ गन्धः, ८ पुष्पं, ९ धूपः, १० दीपः, ११ नैवेद्यं, १२ आचमनं, १३ ताम्बूलं, १४ स्तोत्रं, १५ तर्पणं, १६ प्रणामः।

अथवा १ आसनं, २ स्वागतं, ३ पाद्यं, ४ अर्घ्यं, ५ आचमनीयं, ६ मधुपर्कं, ७ आचमनीयं, ८ स्नानं, ९ वस्त्रं, १० आभरणं, ११ गन्धः, १२ पुष्पं, १३ धूपः, १४ दीपः, १५ नैवेद्यं, १६ वन्दनं ।

उभयथा तन्त्रेऽभिधानादैच्छिको विकल्पः । अधिक-प्रवेशे न हानिः । ततस्तत्तन्मुद्रां प्रदर्शयन्—

मूलं श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरीदेवि स्वागतं ते कुशलमिद-मासनमास्यताम्—इति दद्यात् ।

ततः पाद्यपात्रस्थ-जलमुद्धृत्य 'मूलं एतत् पाद्यं श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरीदेवतायै नमः' इति पादयोः पाद्यमुद्रां प्रदर्शयन् दद्यात् ।

ततोऽर्घपात्रस्थ-जलमुद्धृत्य 'मूलं एषोऽर्घः श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरीदेवतायै स्वाहा' इत्यर्घमुद्रां प्रदर्शयन् शिरसि दद्यात् ।

तत आचमन-पात्रस्थ जलमुद्धृत्य 'मूलं इदमाच-मनीयं श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरीदेवतायै स्वधा' इत्याचमन-मुद्रां दर्शयन् मुखे दद्यात् ।

ततो मधुपर्कमुद्धृत्य देव्या मुखकमले दत्त्वा 'मूलं एष मधुपर्कः श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरीदेवतायै स्वधा' इत्यर्घोदकेनोत्सृज्य मधुपर्क-मुद्रां प्रदर्शयेत् ।

ततः पुनराचमनीयमाचमनीयवद् दद्यात् ।

ततः स्नानीय - पात्रस्थ - जलमुद्धृत्य शतकृत्वो दशकृत्वो यथाशक्ति वा देव्याः सर्वाङ्गे दत्त्वा 'मूलं एतत् स्नानीयं श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरी देवतायै नमः' इत्यर्घोदकेनोत्सृज्यार्घमुद्रां प्रदर्शयेत् ।

ततो मूलेनाङ्गप्रोक्षणं विभाव्य, रक्तवर्णमनुपभुक्तं वस्त्रयुगलमादाय फडिति सम्प्रोक्ष्य, 'नमः' इति सम्पूज्य 'मूलं एतद्वस्त्र-युगलं बृहस्पति-दैवतं श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरी देवतायै नमः' इत्युत्सृज्य परिधापयन् वस्त्रमुद्रां प्रदर्श-येत् । पुनराचमनीयं पूर्ववद् दद्यात् ।

ततः फडिति सम्प्रोक्ष्य 'नमः' इति सम्पूज्य देव्या वामहस्ते दत्त्वा 'मूलं एतत् स्वर्णभूषणं वह्निदैवतं राजतभूषणं चन्द्रदैवतं वा श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरी देवतायै नमः' इत्यर्घोदकेनोत्सृजेत् प्रदर्शयेच्च भूषणमुद्राम् ।

ततः प्रमाणोक्तमुत्तमगन्धं फडिति सम्प्रोक्ष्य 'गन्धाय नमः' इति सम्पूज्य वामहस्तांगुष्ठेन कनिष्ठाग्रं स्पृशन् दक्षिणहस्त-कनिष्ठया गन्धमादाय देव्याः सर्वाङ्गे दत्वा 'मूलं एष गन्धो गन्धर्वदैवतः श्रीमत्त्रिपुर-सुन्दरी देवतायै नमः' इत्यर्घोदकेनोत्सृजेत ।

एवमेव रक्तचन्दनं, सिन्दूरं, अक्षतं च दद्यात ।

ततो रक्तकरवीर-जवादि-पुष्पं फडिति प्रोक्ष्य 'पुष्पाय नमः' इति सम्पूज्य 'मूलं एतत् पुष्पं वनस्पति-दैवतं श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरी देवतायै वौषट्' इति देव्या वामहस्ते सर्वाङ्गे च दद्यात । पुष्पमाल्यं, बिल्वपत्राणि च एवमेव दद्यात ।

ततः प्रमाणोक्त-पात्रे निर्धूमाङ्गारेषु विहित-धूपद्रव्यं निःक्षिप्य फडिति सम्प्रोक्ष्य 'धूपाय नमः' इति सम्पूज्य वामहस्त-तर्जन्या धूपपात्रं स्पृशन् देवी-समीपं नीत्वा 'मूलं एष धूपः विष्णुदैवतः श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरी देवतायै नमः' इत्युत्सृज्य संयुक्त-ज्येष्ठा-तर्जन्यग्रं दर्शयित्वा 'ॐ जयध्वनि मन्त्रमातः स्वाहा' इति घण्टां सम्पूज्य वामहस्तेन वादयन् दक्षमध्यमानामिका - मध्यम-पर्वणोरंगुष्ठापेण धूपपात्रं धृत्वा देव्याः पादादि-नाभ्यन्तं धूपयेत् ।

ततः कर्पूर-गर्भिण्या पट्टवर्तिकया गव्य-घृतदीपं प्रज्वाल्य धूपवत् प्रोक्षण - पूजने विधाय वामहस्त-मध्यमया दीपपात्रं स्पृशन् देव्याः समीपं नीत्वा 'मूलं एष दीपः श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरी देवतायै नमः' इत्यर्घो-दकेनोत्सृज्य ज्येष्ठा - मध्यमयोरग्रे संयोज्य दर्शयन् मूल-गायत्र्या मध्यमांगुष्ठाभ्यां दीपपात्रमुत्ताल्य घण्टा-वादन-पूर्वकं देव्याः पादादि-नेत्रान्तं दीपयेत् ।

ततः प्रमाणोक्त - पायसादि - नैवेद्यं स्वर्णादिपात्रे कृत्वा तत्पात्रं चतुरस्र-मण्डले साधारं निधाय 'फट्' इति सम्प्रोक्ष्य चक्रमुद्रया संरक्ष्य 'यं' इति वायुबीज-जपेन नैवेद्य-दोषान् संशोध्य 'रं' इति वह्निबीज-जपेन तान् सन्दाह्य, दक्षकरेण स्पृशन्, 'वं' इत्यमृत-मन्त्रेणा-मृतीकृत्य कराभ्यां तत्पात्रं स्पृशन् मूलमन्त्रेणाष्ट-कृत्वोभिमन्त्र्य धेनुमुद्रां प्रदर्श्य गन्ध - पुष्पादिभिः

'ॐ नैवेद्याय नमः' इति सम्पूज्य देव्याः समीपं नीत्वा वामांगुष्ठ-तर्जनीभ्यां स्पृशन् मूलमुच्चरमाण 'इदममुक नैवेद्यं विष्णुदैवतं श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरी देवतायै नमः' इत्यर्घोदकेनोत्सृज्य तत्त्वमुद्रां प्रदर्श्य 'मूलं अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा' इति देव्यै जलं दत्वा वामहस्तेन विकचोत्पल-सदृशीं ग्रासमुद्रां प्रदर्शयन् दक्षहस्तेन संयुक्तैः—

कनिष्ठानामांगुष्ठैः १ ॐ प्राणाय स्वाहा,
तर्जनी-मध्यमांगुष्ठैः २ ॐ अपानाय स्वाहा,
मध्यमानामांगुष्ठैः ३ ॐ समानाय स्वाहा,
तर्जनी-मध्यमानामांगुष्ठैः ४ ॐ उदानाय स्वाहा,
सर्वांगुलीभिः ५ ॐ व्यानाय स्वाहा, इति पञ्चग्रासमुद्राः प्रदर्श्य 'मूलं इदं पानीयं श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरी देवतायै नमः' इति दत्वा घण्टां वादयन् चामरैर्वीजयन्—

ॐ ब्रह्मेशाद्यैरभसमभितस्तूपविष्टैः समेता,
शिञ्जद्वाल-व्यजन-निकरैर्वीज्यमाना सखीभिः।
नर्मक्रीडा-प्रहसनपरा पंक्तिभोक्तृ-ल्लसन्ती,
भुंक्ते पात्रे कनकघटिते षड्रसांश्चिद्विलासा ॥

इति पठेत। ततस्तृप्तिमाकांक्षमाणः क्षणं स्थित्वा तृप्तां विभाव्य 'ॐ अमृतापिधानमसि स्वाहा' इति जलं दत्वा आचमनीय-वत पुनराचमनीयं दद्यात।

ततस्ताम्बूलं झडिति सम्प्रोक्ष्य सम्पूज्य देव्यग्रे नीत्वा 'मूलं इदं ताम्बूलं विष्णुदैवतं श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरी देवतायै नमः' इत्यर्घोदकेनोत्सृजेत।

ततो 'मूलं श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरी देवतां तर्पयामि स्वाहा' इति विशेषार्घजलेन दक्षिणहस्तेन वामहस्तकृत-तत्त्वमुद्रया त्रिः सन्तर्पयेत। मूलमुच्चार्य 'एष पुष्पाञ्जलिः श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरी देवतायै वौषट्' इत्यष्टकृत्वः पुष्पाञ्जलीं दद्यात।

अथावरण-पूजा

तत्पूजोपक्रमे तन्त्रसारे तर्पणं नोपलभ्यते। उपसंहारे च पूजितास्तर्पिताः सन्त्विति चोपलभ्यते।

अतएव सर्वेषां तर्पणमावश्यकम्। तच्च यथा 'अमुक-देवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः' तथैव 'तर्पयामि नमः' इत्यन्तवाक्येन तर्पयेत्। अथवा वामहस्तानामिकांगुष्ठाभ्यां सनखाभ्यां विशेषार्घोदबिन्दून् दक्षिण-हस्तेन गन्धपुष्पाक्षतजलानि गृहीत्वा कराभ्यां 'श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः' इत्यन्तेनैकवाक्ये-नैव युगपत् पूजन-तर्पणे कुर्यादिति रहस्यविदः।

'भगवति आज्ञापय तवावरणान्यहं पूजयिष्ये' इत्यभ्यर्थ्य आज्ञा जातेति विभाव्य पूजामारभेत्, अग्नीशासुर - वायु - मध्येषु दिक्षु च देव्या देहे वा षडङ्गानि पूजयेत् तर्पयेच्च—'१ ऐं सर्वज्ञता - शक्ति श्रीमहात्रिपुरसुन्दरीदेवी हृदयाय नमः, २ क्लीं नित्य-तृप्तता-शक्ति श्रीमहात्रिपुरसुन्दरीदेवी शिरसे स्वाहा, ३ सौः अनादि-बोध-शक्ति श्रीमहात्रिपुरसुन्दरी शिखायै वषट्, ४ ऐं स्वतन्त्रता-शक्ति श्रीमहात्रिपुरसुन्दरी कवचाय हूँ, ५ क्लीं अलुप्तता-शक्ति श्रीमहात्रिपुरसुन्दरी नेत्रत्रयाय वौषट्, ६ सौः अनन्तता-शक्ति श्रीमहात्रिपुर-सुन्दरी अस्त्राय फट्।' इति तन्त्रसारानुसारेण। अन्यत्र तु 'ऐं हृदयाय नमः हृदयदेवी श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः' एवं सर्वत्रेत्युपलभ्यते।

ततस्तिथिनित्या - पूजनं कुर्याद्यथा—महात्र्यस्रे वामावर्तेन अकारादि-पञ्च ऊकारादि-पञ्च एकारादि-पञ्च मध्ये विसर्गं विभाव्य तेषु वामावर्तेन शुक्लपक्षे कामेश्वर्यादि - विचित्रान्ताः कृष्णपक्षे विचित्रादि-कामेश्वर्यन्ताः पूजयेत्। यथा—१ प्रतिपदि अकारे ऐं ह्रीं श्रीं कामेश्वरी-नित्या-कला-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, २ एवं आकारे द्वितीयायां ३ भगमालिनी-नित्या - कला - श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ३ इकारे तृतीयायां ३ नित्यक्लिन्ना-नित्या-कला-श्रीपादुकां पू०, ४ ईकारे चतुर्थ्यां ३ भेरुण्डा-नित्या-कला-श्री पादुकां पू०, ५ उकारे पञ्चम्यां ३ वह्निवासिनी-नित्या-कला-श्रीपादुकां पू०, ६ ऊकारे षष्ठ्यां ३ महाविद्येश्वरी-नित्या-कला-श्रीपादुकां पू०, ७ ऋकारे सप्तम्यां ३ शिवदूती - नित्या-कला - श्रीपादुकां पू०, ८ ॠकारे

अष्टम्यां ३ त्वरिता - नित्या - कला - श्रीपादुकां पू०, ९ लृकारे नवम्यां ३ कुलसुन्दरी-नित्या-कला-श्रीपादुकां पू०, १० लॄकारे दशम्यां ३ नित्या-नित्या-कला-श्रीपा०, ११ एकारे एकादश्यां ३ नीलपताकिनी-नित्या-कला-श्रीपादुकां पू०, १२ ऐकारे द्वादश्यां ३ विजया-नित्या-कला-श्रीपादुकां पू०, १३ ओकारे त्रयोदश्यां ३ सर्वमङ्गला-नित्या-कला श्रीपादुकां पू०, १४ औकारे चतुर्दश्यां ३ ज्वालामालिनी-नित्या-कला श्रीपादुकां पू०, १५ अंकारे पौर्णमास्यां विचित्रा-नित्या०, १६ विसर्गे ३ मूलं त्रिपुरसुन्दरीं पूजयामि तर्पयामि नमः, १५ शुक्लपक्षे प्रतिपदि विचित्रां, द्वितीयायां ज्वालामालिनीं . एवममावास्यायां कामेश्वरीं १६ विसर्गे मूलमुच्चरणमाणः त्रिपुरसुन्दरीं पूर्वोक्त्या पूजयेत्तर्पयेच्च ।

ततो मध्ये प्राक्त्र्यस्रमध्येषु गुरुपंक्तीः पूजयेद्यथा—३ गुरुभ्यो नमः ३ गुरुपादुकाभ्यो नमः। ३ परमगुरुभ्यो नमः ३ परमगुरुपादुकाभ्यो नमः। ३ परापरगुरुभ्यो नमः ३ परापरगुरुपादुकाभ्यो नमः। ३ परमेष्ठिगुरुभ्यो नमः ३ परमेष्ठिगुरुपादुकाभ्यो नमः। ३ आचार्येभ्यो नमः ३ आचार्यपादुकाभ्यो नमः। इति प्रागुक्त-प्रकारेण कराभ्यां पूजातर्पणे युगपत्कुर्यात।

ततस्त्रैलोक्यमोहनादि-सृष्टिचक्रे ३ ह्सूरीं सह्रीं श्रीं कलह्रीं पूर्वाम्नाय - उन्मनीदेवी - श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः। स्थितिचक्रे ३ ऐं क्लिन्ने क्लीं मदद्रवे कुल्ले ह्सौः दक्षिणाम्नायउन्मनीदेवी० ततः सौभाग्यादि-संहारात्मक-त्रिचक्रे ३ ह्सख्फ्रें भगवति त्र्यम्ब-कुब्जिके ह्स्रां ह्स्रीं ह्स्रूं अघोरे घोरे घोरमुखि चद्रां चद्रीं चद्रूँ क्लिलि क्लिलि (विलोमतः पूर्वोक्तानि बीजानि) पश्चिमाम्नाय-कुब्जिकाश्री० ।

ततोऽग्नीशासुरावायव्यमध्ये दिक्षु च षडङ्गानि पूजयेत्।

ततो वैन्दवे ३ शैवदर्शनाय नमः। ततः परितः ३ शाक्तदर्शनाय नमः। शैवस्य वामतः ३ वैष्णवदर्शनाय नमः। सृष्टिचक्रे ३ सूर्यदर्शनाय नमः। स्थितिचक्रे ३ बौद्धदर्शनाय नमः।

ततो बाह्य-चतुरस्रस्य पश्चिमादि-द्वारचतुष्टयेषु—३ अणिमासिद्धि श्री०, ३ लघिमासिद्धि श्री०, ३ महिमासिद्धि श्री०, ३ ईशित्वसिद्धि श्री०। वाय्वादि-कोणचतुष्टयेषु—३ वशित्वसिद्धि श्री०, ३ प्राकाम्य-सिद्धि श्री०, ३ इच्छाशक्ति श्री०, ३ भुक्तिसिद्धि श्री०।

मध्यचतुरस्रस्य पश्चिमादिद्वारचतुष्टयेषु—३ आं ब्रह्माणी श्री०, ३ ईं माहेश्वरी श्री०, ३ ऊं कौमारी श्री०, ३ ॠं वैष्णवी श्री०। वाय्वादिकोणचतुष्टयेषु—३ लॄं वाराही श्री०, ३ ऐं इन्द्राणी श्री०, ३ औं चामुण्डा श्री०, ३ अः महालक्ष्मी श्री०।

अभ्यन्तर-चतुरस्रस्य पश्चिमादि-द्वारचतुष्टयेषु—३ द्रां सर्वसंक्षोभणीमुद्रा श्र.०, ३ द्रीं सर्वविद्रावणी-मुद्रा श्री०, ३ क्लीं सर्वाकर्षिणीमुद्रा श्री०, ३ ब्लुं सर्ववशंकरीमुद्रा श्री०। वाय्वादि-कोणचतुष्टयेषु—३ सः सर्वोन्मादकरीमुद्रा श्री०, ३ क्रों महाङ्कुशमुद्रा श्री०, ३ हसखफ्रें खेचरीमुद्रा श्री०, ३ ह्सौः सर्वबीज-मुद्रा श्री०, अधः ३ ऐं योनिमुद्रा श्री०, ऊर्ध्वे ३ ऐं क्लीं सौः त्रिखण्डामुद्रा श्री०, चक्राग्रे सम्पूर्णचक्रे ३ त्रैलोक्य-मोहनचतुरस्रचक्राय नमः। ३ अं आं सौः त्रिपुरा श्री०, एतस्या दक्षिणे ३ द्रां सर्वसंक्षोभणीमुद्रा श्रीं०, देव्या वामे ३ अणिमासिद्धि श्री०, ३ चार्वाक-दर्शनाय नमः।

अत्र त्रैलोक्यमोहनचतुरस्र-चक्रे त्रिपुराचक्र-नायिकाधिष्ठिते एता अणिमाद्याः प्रकटयोगिन्यः समुद्राः ससिद्धयः सायुधाः सवाहनाः सपरिवाराः सर्वोपचारैः पूजितास्तर्पिताः सन्त्विति विशेषार्घजलेन मूलदेव्यै समर्पयेत द्रामितिसर्वसंक्षोभिणीमुद्रां दर्शयेत।

३ ऐं आत्मतत्वाय स्वाहा, ३ क्लीं विद्यातत्वाय स्वाहा, ३ सौः शिवतत्वाय स्वाहा—इति त्रिवारमर्घो-दकेन तर्पयेत।

ततः षोडशदलेषु पश्चिमदलादारभ्य वामावर्त्तेन—३ अं रूपाकर्षिणी नित्याकला श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः, ३ आं बुद्ध्याकर्षिणी नित्याकला श्री०, ३ इं अहङ्काराकर्षिणी नित्याकला श्री०, ३ ईं सर्वा-

कर्षिणी नित्याकला श्री०, ३ उं स्पर्शाकर्षिणी नित्याकला श्री०, ३ ऊँ रूपाकर्षिणी नित्याकला श्री०, ३ ऋं रसाकर्षिणी नित्याकला श्री०, ३ ॠं गन्धाकर्षिणी नित्याकला श्री०, ३ ऌं चित्ताकर्षिणी नित्याकला श्री०, ३ ॡं धैर्याकर्षिणी नित्याकला श्री०, ३ एं सूक्ष्माकर्षिणी नित्या०, ३ ऐं नामाकर्षिणी नित्याकला०, ३ ओं जीवाकर्षिणी नित्या०, ३ औं आत्माकर्षिणी नित्या०, ३ अं अमृताकर्षिणी नित्याकला०, ३ अः शरीराकर्षिणी नित्याकला०, चक्राग्रे ३ सर्वाशापरिपूरक-षोडशदलचक्राय नमः। ३ ऐं क्लीं सौः त्रिपुरसुन्दरीचक्रनायिका श्री०। एतस्या दक्षिणे ३ द्रां सर्वविद्रावणीमुद्रा श्री०। वामे ३ लघिमासिद्धि श्री०। ३ बौद्धदर्शनाय नमः।

अत्र सर्वाशापरिपूरक - षोडशदलचक्रे त्रिपुरेशीचक्रनायिकाधिष्ठिते एताः कामाकर्षिण्याद्या गुप्तयोगिन्यः समुद्राः ससिद्धयः सायुधाः सपरिवाराः सर्वोपचारैः पूजितास्तर्पिताः सन्तु इति विशेषार्घ-जलेन मूलदेव्यै समर्पयेत्।

द्रां इति सर्वविद्रावणीमुद्रां प्रदर्श्य ३ ऐं आत्मतत्वाय स्वाहा, ३ क्लीं विद्यातत्वाय स्वाहा, ३ सौः शिवतत्वाय स्वाहा इति त्रिवारं विशेषार्घोदकेन तर्पयेत्।

ततोऽष्टदलचक्रे पूर्वादितश्चतुर्दलेषु वामावर्तेन—३ कं खं गं घं ङं अनङ्गकुसुमादेवी श्री०, ३ चं छं जं झं ञं अनङ्गमेखलादेवी श्री०, ३ टं ठं डं ढं णं अनङ्गमदनादेवी श्री०, ३ तं थं दं धं नं अनङ्गमदनातुरादेवी श्री०, अग्न्यादिदलेषु ३ पं फं बं भं मं अनङ्गरेखादेवी श्री०, ३ यं रं लं वं अनङ्गवेगिनीदेवी श्री०, ३ शं षं सं हं अनङ्गांकुशादेवी श्री०, ३ ळं क्षं अनङ्गमालिनीदेवी श्री०, चक्राग्रे ३ सर्वसंक्षोभणाष्टदलचक्राय नमः, ३ ऐं क्लीं सौं त्रिपुरसुन्दरीचक्रनायिका श्री०, एतस्या दक्षिणे ३ क्लीं सर्वाकर्षिणीमुद्रा श्री०, वामे ३ जिनेन्द्र-दर्शनाय नमः।

अत्र सर्वसंक्षोभणाष्टदलचक्रे त्रिपुरसुन्दरीचक्र-नायिकाधिष्ठिते एता अनङ्गकुसुमाद्या गुप्ततर-योगिन्यः समुद्राः ससिद्धयः सायुधाः सवाहनाः सपरिवाराः सर्वोपचारैः पूजितास्तर्पिताः सन्तु इति पूर्ववत् समर्पयेत्।

क्लीं इति सर्वाकर्षिणी-मुद्रां प्रदर्शयेत्। ३ ऐं आत्मतत्वाय स्वाहा, ३ क्लीं विद्यातत्वाय स्वाहा, ३ सौः शिवतत्वाय स्वाहा—इति विशेषार्घोदकेन त्रिस्तर्पयेत्।

चतुर्दशार-चक्राग्रात् समारभ्य पश्चिमादि-दक्षिणान्तं यावत्—३ सर्वसंक्षोभणीशक्ति श्रीपादु०, ३ सर्वविद्रावणीशक्ति श्रीपादु०, ३ सर्वाकर्षिणीशक्ति-श्रीपादु०, ३ सर्वाह्लादिनीशक्ति श्रीपादु०, ३ सर्वसम्मोहनीशक्ति श्रीपादु०, ३ सर्वविजृम्भणीशक्ति श्रीपादु०, ३ सर्वतत्ववशङ्करीशक्ति श्रीपादु०, ३ सर्वरञ्जनीशक्ति श्रीपादु०, ३ सर्वोन्मादिनीशक्ति श्रीपादु०, ३ सर्वार्थ-साधनीशक्ति श्रीपादु०, ३ सर्वसम्पत्तिपूरणीशक्ति श्रीपादु०, ३ सर्वमन्त्रमयीशक्ति श्रीपादु०, ३ सर्वद्वन्द्व-क्षयङ्करीशक्ति श्रीपादु०, सर्वत्र चक्राग्रे ३ सर्वसौभाग्य-दायक चतुर्दशारचक्राय नमः, ३ हैं हंसः त्रिपुरवासिनी चक्रनायिका श्रीपादु०, एतस्या दक्षिणे ब्लूं सर्ववश्यकरी-मुद्रा श्रीपादु०, वामे ३ ईशित्वसिद्धि श्रीपादु०, ३ सांख्य-मीमांसा-न्याय-दर्शनेभ्यो नमः।

अत्र सौभाग्यदायक-चतुर्दशारचक्रे त्रिपुरवासिनी चक्रनायिकाधिष्ठिते एताः सर्वसंक्षोभण्याद्याः शक्तयः समुद्राः ससिद्धयः सायुधाः सवाहनाः सपरिवाराः सर्वोपचारैः पूजितास्तर्पिताः सन्तु इति पूर्ववत्।

ब्लूं सर्वाकर्षिणीं मुद्रां प्रदर्श्य ३ ऐं आत्मतत्वाय स्वाहा, ३ क्लीं विद्यातत्वाय स्वाहा, ३ सौः शिवतत्वाय स्वाहा—इति विशेषार्घोदकेन तर्पणमुद्रया त्रिः सन्तर्पयेत्।

बहिर्दशारचक्राग्रं समारभ्य पश्चिमादि-दक्षिणान्तं यावत्—३ सर्वसिद्धिप्रदादेवी श्रीपादु०, ३ सर्व-सम्पत्प्रदादेवी श्रीपादु०, ३ सर्वप्रियङ्करीदेवी श्रीपादु०; ३ सर्वमङ्गलकारिणीदेवी०, ३ सर्वकामप्रदादेवी०,

३ सर्वदुःख-विमोचनीदेवी०, ३ सर्वमृत्युप्रशमनीदेवी०, ३ सर्व-विघ्ननिवारिणीदेवी०, ३ सर्वाङ्गसुन्दरीदेवी०, ३ सर्वसौभाग्यदायिनीदेवी०, चक्राग्रे ३ सर्वार्थसाधक बहिर्दशारचक्रे त्रिपुराश्रीचक्रनायिकाधिष्ठिते एताः सर्वसिद्धिप्रदा देव्यः कुल-कौलिनी योगिन्यः समुद्राः ससिद्धयः सायुधाः सवाहनाः सपरिवाराः सर्वोपचारैः पूजितास्तर्पिताः सन्तु इति पूर्ववत।

'सः' सर्वोन्मादकरीं मुद्रां प्रदर्श्य ३ ऐं आत्मतत्वाय स्वाहा, ३ क्लीं विद्यातत्वाय स्वाहा, ३ सौः शिवतत्वाय स्वाहा इति विशेषार्घोदकेन तर्पणमुद्रया मूलदेवीं त्रिः सन्तर्पयेत्।

अन्तर्दशारचक्राच्च पश्चिमादि-दक्षिणान्तं यावत ३ सर्वज्ञादेवी श्री०, ३ सर्वशक्तिमयीदेवी श्री०, ३ सर्वैश्वर्यप्रदायिनीदेवी०, ३ सर्वज्ञानमयीदेवी, ३ सर्व-व्याधिविनाशिनीदेवी श्री०, ३ सर्वाधारस्वरूपिणी-देवी०, ३ सर्वपापहरादेवी०, ३ सर्वानन्दमयीदेवी०, अधः ३ सर्वरक्षास्वरूपिणीदेवी०, ऊर्ध्वे ३ सर्वेप्सित-फलप्रदादेवी०, सर्वत्र चक्राग्रे ३ सर्वरक्षाकरान्तर्दशार-चक्राय नमः। ह्रीं क्लीं व्लें त्रिपुरमालिनी चक्रनायिका एतस्या श्री०, दक्षिणे क्रों महाङ्कुशमुद्रा श्री०, वामे ३ प्राकाम्यासिद्धि श्री०, ३ सौरदर्शनाय नमः।

अत्र सर्वरक्षाकरेऽन्तर्दशारचक्रे त्रिपुरमालिनी-चक्रनायिकाधिष्ठिते एतः सर्वज्ञाद्या देव्यो निगर्भ-योगिन्यः समुद्रा ससिद्धयः सायुधाः सवाहनाः सपरिवाराः सर्वोपचारैः पूजितास्तर्पितास्सन्तु इति विशेषार्घोदकेन मूलदेव्यै समर्पयेत्।

'क्रों' इति महांकुशमुद्रां प्रदर्शयेत। ३ ऐं आत्म-तत्वाय स्वाहा, ३ क्लीं विद्यातत्वाय स्वाहा, ३ सौः शिवतत्वाय स्वाहा इति त्रिः मूलदेवीं तर्पयेत।

अष्टारचक्राच्च समारभ्य पश्चिमादि-दक्षिणान्तं यावत अं १६ रव्लूँ (व्लूँ) वसिनीवाग्देवता श्री०, ३ कं—५ कल ह्रीं कामेश्वरी वाग्देवता श्री०, ३ चं—५ नव्लीं मोदिनीवाग्देवता श्री०, ३ टं—५ यलूँ विमला वाग्देवता श्री०, ३ तं—५ यमलीं अरुणावाग्देवता

श्री०, ३ पं—५ ह्सूल वयूँ जयिनीवाग्देवता श्री०, ३ यं—४ क्मूर यूँ सर्वेश्वरीवाग्देवता श्री०, ३ शं—५ क्ष्मूरीं कौलिनीवाग्देवता श्री०, चक्राग्रे ३ सर्वरोगहराष्टचक्राय नमः। ह्सूरैं ह्सरौः त्रिपुरासिद्धानित्या श्री०, एतस्या दक्षिणे ह्सखफ्रें खेचरीमुद्रा श्री०, वामे ३ भुक्तिसिद्धि श्री०, ३ वैष्णवदर्शनाय नमः।

अत्र सर्वरोगहरेऽष्टारचक्रे त्रिपुरसिद्धाचक्रनायिकाधिष्ठिते एता वशिन्याद्या योगिन्यः समुद्राः ससिद्धयः सायुधाः सवाहनाः सपरिवाराः सर्वोपचारैः पूजितास्तर्पिताः सन्तु इति विशेषार्घोदकेन समर्प्य ह्सखफ्रें इति खेचरीमुद्रां प्रदर्श्य ३ ऐं आत्मतत्वाय स्वाहा, ३ क्लीं विद्यातत्वाय स्वाहा, ३ सौः शिवतत्वाय स्वाहा इति विशेषार्घोदकेन त्रिः सन्तर्पयेत्।

त्रिकोणबाह्येऽग्रतो वामावर्त्तेन पश्चिमादि-दक्षिणान्तं यावत् द्रांद्रींक्लींब्लूँसः थां रां लां वां शां कामेश्वरो जृम्भणवाणेभ्यो नमः। द्रां ५ यां ५ धं-थं सकलसम्मोहनाय कामेश्वरीधनुषे नमः। द्रां ५ यां ५ आँह्रीं वशीकरणाय कामेश्वरकामेश्वरीपाशाय नमः। द्रां ५ यां ५ क्रों सकलस्तम्भनाय कामेश्वरकामेश्वर्यंकुशाय नमः।

ततस्त्रिकोणाग्रे दक्षिणोत्तरेषु प्रादक्षिण्येन मूलवाग्भवमुच्चार्य अग्निचक्रे कामगिर्यालये मित्रीशनाथात्मिके रुद्रात्म-शक्तिकामेश्वरीश्री०। कामराजमुच्चार्य सूर्यचक्रे जालन्धरपीठे षष्ठीशनाथात्मके विष्णवात्मशक्तिवज्रेश्वरीश्री०। शक्तिकूटमुच्चार्य सोमचक्रे पूर्णगिरिपीठे उड्डीशनाथात्मके ब्रह्मात्मशक्ति भगमालिनीदेवीश्री०। चक्राग्रे ३ सकलसिद्धिप्रदाद्यचक्राय नमः। ह्सूरैं ह्सक्लरीं ह्सरौः त्रिपुरात्मशक्तिनित्याकला०। एतस्या दक्षिणे ह्सौः वीजमुद्रा श्री०। वामे ३ इच्छाशक्तिश्री०। ३ शक्तिदर्शनाय नमः।

अत्र सकलसिद्धिप्रदाद्यचक्रे वाणचापपाशांकुशविभूषितान्तराले त्रिपुरात्मचक्रनायिकाधिष्ठते एताः कामेश्वर्याद्या अतिरहस्ययोगिन्यः समुद्रः ससिद्धयः सायुधाः सवाहनाः सपरिवाराः सर्वोपचारैः पूजि-

तास्तर्पिताः सन्तु इति विशेषार्घोदकेन समर्पयेत्। 'हसौः' बीजमुद्रां प्रदर्श्य ३ ऐं आत्मतत्त्वाय स्वाहा, ३ क्लीं विद्यातत्त्वाय स्वाहा, ३ सौः शिवतत्त्वाय स्वाहा, इति त्रिः सन्तर्पयेत्।

ततो वैन्दवे चक्रे मूलमुच्चार्य श्रीमहात्रिपुरसुन्दरीनित्याश्री० इति त्रिः सम्पूज्य चक्राग्रे सर्वानन्दमये ३ वैन्दवचक्राय नमः। मूलमुच्चार्य श्रीमहात्रिपुरसुन्दरीचक्रनायिकाश्री०। एतस्या दक्षिणे ऐं योनिमुद्राश्री०। वामे ३ प्राप्तिसिद्धिमोक्षसिद्धिश्री०। ३ शैवदर्शनाय नमः।

अत्र सर्वानन्दमये चक्रे वैन्दवे परब्रह्मस्वरूपिणि परापरशक्तिश्रीमहात्रिपुरसुन्दरी-चक्रनायिका-सम्वित्तिरूपा-चक्रनायिकाधिष्ठिते त्रैलोक्यमोहन - सर्वाशापरिपूरक - सर्वसंक्षोभकारक - सर्वसौभाग्यदायक-सर्वार्थदायक - सर्वार्थसाधक - सर्वरक्षाकर-सर्वरोगहर-सर्वसिद्धि-श्रीचक्र-समुन्मीलित-समस्त- प्रकट - गुप्तगुप्ततर-संप्रदाय - कुलकौलिनी - निगर्व - रहस्यातिरहस्य-समस्तयोगिनी - परिवृत-श्रीमहात्रिपुरेशी-त्रिपुरसुन्दरी-त्रिपुरवासिनी - त्रिपुरा - त्रिपुरमालिनी-त्रिपुरसिद्धा-त्रिपुराम्बा-तच्चक्रनायिका-वन्दित-चरणकमल-श्रीमहा - त्रिपुरसुन्दरी - नित्यादेवी - सर्वचक्रेश्वरी-सर्वमन्त्रेश्वरी-सर्वविद्येश्वरी - सर्वपीठेश्वरी-सर्वकामेश्वरी-सर्वसत्वेश्वरी-सर्ववीरेश्वरी-त्रैलोक्यमोहनी - जगदुत्पत्ति-मातृका-सर्वचक्रमयी-तच्चक्रनायिका - सहिताः समुद्राः ससिद्धयः सायुधाः सवाहनाः सपरिवाराः सर्वोपचारैः पूजितास्तर्पिताः सन्तु इति विशेषार्घजलकुसुमैः प्रधानदेव्या वामहस्ते समर्पयेत्। ततो नवमुद्राः प्रदर्श्य ३ ऐं आत्मतत्त्वाय स्वाहा, ३ क्लीं विद्यातत्त्वाय स्वाहा, ३ सौः शिवतत्त्वाय स्वाहा-इत्यर्घोदकेन त्रिस्तर्पयेत्।

पुनः पूजा गन्धाक्षतपुष्पदूर्वामाल्यादीन् पूर्वप्रकारेण दत्वा घण्टावादन-पुरस्सरं मूलमुच्चरमाणः वनस्पतिरसो दिव्यो गन्धाढ्यः सुमनोहरः। आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यतामिति मन्त्रेण पूर्ववद् दद्यात्। सुप्रकाशो महान्दीपः सर्वत्र तिमिरा-

पहः। सबाह्याभ्यन्तरज्योतिर्दीपोऽयं प्रतिगृह्यताम्। इति दीपं दत्वा पूर्वोक्तदिशा नैवेद्यम्, आचमनीयम्, ताम्बूलम्, पुष्पाञ्जलींश्च ॥

ततः साङ्गायै सायुधायै सवाहनायै सपरिवारायै स्वभैरवसहितायै मूलं श्रीमहात्रिपुरसुन्दर्यै नमः इति हस्ताभ्यां युगपत्पूजातर्पणे पार्थक्येन वा त्रिः कुर्यात ततोऽष्टौ पञ्च त्रीन् वा साङ्गायै इत्यादिना पुष्पाञ्जलीन्दत्वा कवचं पठेत् ॥

अथ जपेति कर्तव्यता तत्र महात्रिपुरसुन्दर्याः षोडश्याः षोडशाक्षर-मूलमन्त्रेण त्रिपुरसुन्दरी-पक्षे 'श्रीं ॐ श्रीं ॐ श्रीं ॐ' इति षडक्षरेण दशकृत्वो जपेन मुखस्य जिह्वायाश्च शोधनं कृत्वा 'ऐं क्लीं ह्रीं त्रिपुरे भगवति स्वाहा' इति द्वादशार्णां, 'ह्रीं हूँ फट्' इति सार्द्ध त्रिवर्णां, 'ऐं क्लीं सौः' इति त्र्यक्षरीं, 'क्लीं' इति एकाक्षरीं वा कुलुकां शिरसि अष्टोत्तरशतकृत्वः दशकृत्वो वा जपेत।

ततो मूलमन्त्रेण प्रणवेन वा प्राणायामत्रयं ऋष्यादिन्यासाङ्गन्यास - करन्यास-व्यापकन्यासान् विधाय हृदये—'ह्रीं सौं ह्रीं' इति त्र्यक्षरं सेतुमन्त्रं दशधा जपेत। 'ह्रीं' इति महासेतु कण्ठे सहस्रारे च तथा जपेत। ततो नाभौ निर्वाणं त्रिधा जपेत्। 'अं आं' इत्यारभ्य 'क्षं हूँ ह्रीं श्रीं मूलं श्रीं ह्रीं हूँ क्षं लं' इत्यारभ्य 'आं अं' इत्यन्तो निर्वाणमन्त्रः।

क्वचित्तु एकपञ्चाशन्मातृका ततः 'ऐं मूलं ऐं' पुनर्विलोम-मातृका इत्येव निर्वाणमन्त्र उपलभ्यते।

ततः स्वाधिष्ठाने 'क्लीं' इति कामराजं दशधा जपेत्। ततो मस्तके 'क्लीं' इत्यस्य दशकृत्वा जपेन निद्राभङ्ग विधाय 'ईं मूलं ईं' इति दशकृत्वो जपेन दीपनं कृत्वा 'ओं मूल ओं' इति सप्तकृत्वो जपेन जात-सूतकोद्धारं कृत्वा 'ओं ह्रीं ओं' इति सप्तच्छदं प्रणव-पुटित-मूलमन्त्रं च सप्तधा प्रजप्य मूलमन्त्रेण विशेषार्घजलेन मालामभ्युक्ष्य 'अक्षमालायै नमः' इति गन्ध-पुष्पादिभिरभ्यर्च्य—

ॐ माले माले महामाले सर्वशक्ति-स्वरूपिणि ।
चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव ॥

इति पठन् मालां हृदय-सन्निधौ समानीय त्रिलयं कृत्वा सहस्रारे गुरुन् हृत्कमले चेष्टदेवतां मूलाधारे मन्त्रं ध्यात्वा ऐक्यं भावयन् निराकुलो भूत्वा यथाकालं दक्षमध्यमा - मध्यपर्व-स्थित-मालामणीन् दक्षांगुष्ठेन चालयन् मन्त्रध्यानपूर्वकं मन्त्रसहस्रमष्टोत्तरशतं वा प्रजप्य जपान्ते प्रणवमुच्चार्य मालां शिरसि निधाय—

ॐ क्लीं त्वं माले सर्वदेवानां प्रीतिदा शुभदा मम । शिवं कुरुष्व मे भद्रे यशो वीर्यं च देहि मे ॥

'ॐ ह्रीं सिद्धेश्वर्यै नमः'—इति प्रणम्य प्राणायाम-त्रयं ऋष्यादि-कर-षडङ्ग-व्यापकन्यासान् विधाय दक्षहस्तेन विशेषार्घ-जलमादाय—

ॐ गुह्यातिगुह्यगोप्त्री त्वं गृहाणास्मत् कृतं जपं । सिद्धिर्भवतु मे देवि त्वत्प्रसादान्महेश्वरि ॥

इति तेजोमयं जलं भावयन् देव्या वामकरे 'मूलमेतावज्जपं श्रीमत्त्रिपुरसुन्दर्यै समर्पयामि' इति समर्पयेत् । सूतकोद्धारं सेतुं महासेतुं दीपनं च पूर्ववद्विधाय स्तुवीत । 'कल्याण वृष्टि भिरिवामृत०' इत्यादि कल्याणीस्तोत्रं पठेत् ।

ततो नित्यहोमविधिना जुहुयात् । जलाक्षतादिकमादाय 'ॐ अद्य श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरीदेवताप्रीतये अमुकमूलमन्त्रेण अमुकद्रव्येण नित्यहोमविधिना (षोडशाहुतीः) पञ्चविंशत्याहुतीरहं होष्यामि । इति सङ्कल्प्य हस्तमात्रां भूमिं कुशैः परिसमुह्य गोमयोदकेनोपलिप्य त्रिकोणं यथा स्यात्तथा प्रादेश-प्रमाणास्तिस्रो रेखा लिखित्वा ताभ्योऽङ्गुष्ठतर्जनीभ्यां मृद उद्धृत्यैशान्यां क्षिपेत् । प्रोक्षणी-जलेन रेखाः प्रोक्षयेत् ताश्च विष्णुरुद्रचन्द्रात्मतया ध्यायेत् । ताः

प्रणम्य कांश्यपात्रेणाग्निमादाय तस्माज्ज्वलदङ्गारं गृहीत्वा 'ॐ क्रव्यादेभ्यो नम' इति नैऋत्यां क्षिपेत्। तस्मिन्नेव त्रिकोणे वह्निं स्वाभिमुखं हस्ताभ्यां स्थापयेत्। वह्निरक्षार्थं त्रिकोणाकारेण समिधो योजयेत्। ततः—

इष्टं शक्तिं स्वस्तिकाभीतिमुच्चैर्दीर्घैर्दोर्भिर्धारयन्तं जवाभम्। हेमाकल्पं पद्मसंस्थं त्रिनेत्रं ध्यायेद्वह्निं बद्धमौलिं जटाभिः॥

इति वह्निं ध्यात्वा हस्तद्वयस्य कनिष्ठांगुष्ठचतुष्टयं मिलितमन्तःप्रवेश्य। मणिबन्धौ संयोज्य इतराः सर्वा अंगुलीः प्रसार्य ज्वालिनीं मुद्रां प्रदर्शयेत्। फूत्कारेणाग्निं प्रज्वाल्य प्रणम्य 'एतानि पाद्यार्घाचमनीय-पुनराचमनीयानि ॐ अग्नये नमः। इदमनुलेपनं, इदं रक्तचन्दनं, इदमक्षतं, एतानि रक्त पुष्पाणि, एतानि विल्वपत्राणि, एतानि गन्ध-पुष्पधूपदोपनैवेद्यानि, ॐ अग्नये नमः इदं पुनराचमनीयं, ॐ अग्नये नमः' इति पञ्चोपचारैरग्निं सम्पूज्य होमद्रव्याणि विशेषार्घोदकेनाभिषिच्य धेनुमुद्रयाऽमृतीकृत्य मृगीमुद्रया स्रुवं गृहीत्वा '१ ॐ भूः स्वाहा, २ ॐ भुवः स्वाहा, ३ ॐ स्वः स्वाहा' इति हुत्वा वह्नौ स्वेष्टदेवतामावाह्य पञ्चोपचारादिना यथालाभमर्चयित्वा अग्नीष्टदेवतयोरैक्यं विभाव्य १ मूलं प्राणाय स्वाहा, २ मूलं अपानाय स्वाहा, ३ मूलं व्यानाय स्वाहा, ४ मूलं उदानाय स्वाहा, ५ मूलं समानाय स्वाहा, इति पञ्चाहुतीर्हुत्वा षडङ्गाहुतयो यथा '१ ऐं हृदयाय नमः स्वाहा, २ क्लीं शिरसे स्वाहा स्वाहा, ३ सौः शिखायै वषट् स्वाहा, ४ ऐं कवचाय हुँ स्वाहा, ५ क्लीं नेत्रत्रयाय वौषट् स्वाहा, ६ सौः अस्त्राय फट् स्वाहा' इत्याज्येन स्रुवेण षडाहुतीर्हुत्वा ततः कल्पोक्त-द्रव्येण आज्याक्त-रक्तकरवीर-पुष्पादिना 'श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः ओं ह्रीं श्रीं [कए ईल ह्रीं] हसकहल ह्रीं, सकल ह्रीं सौः ऐं क्लीं ह्रीं श्रीं' इति षोडशार्णेन अन्येन वा उपास्य-मूलमन्त्रेण षोडशाहुतीः पञ्चविंशत्याहुतीर्वा जुहुयात्।

ततो 'मूलं श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरी-परिवारेभ्यः स्वाहा, मूलं श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरीदेवतायुधेभ्यः स्वाहा' इत्येकैकमाज्येनाहुतिं जुहुयात्। ततः पुष्प-चन्दन-ताम्बूल-फलादिभिः प्रभूतं घृतं स्रुवेणादायोत्तिष्ठन् 'क्लीं नेत्रत्रयाय वौषट्' इति पूर्णाहुतिं दत्त्वा 'इदमाचमनीयं श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरीदेवतायै नमः' एवमग्नये नमः इति दत्वा पूजितां घण्टां चामरञ्च गृहीत्वा स्वेष्टदेवतां स्तुवीत ॥

प्रणम्य संहारमुद्रया देवीं भ्रूमध्य-स्थित-चन्द्र-मण्डले विसृजेदिति किञ्चिज्जल वह्नौ शीतलो भवेत दद्यादिति ॥ होमान्ते स्ववामे त्रिकोण-वृत्त-चतुरस्रं कृत्वा 'ऐं ह्रीं श्रीं व्यापक-मण्डलाय नमः' इति सम्पूज्य तत्राधारे 'ॐ भूतेभ्यो नमः' इति सम्पूज्य अर्धान्नपूर्ण-सलिलभाजनं वलिं संस्थाप्य 'ॐ ह्रीं सर्वविघ्नकृद्भ्यः सर्वभूतेभ्यो हूँ फट् स्वाहा' इति सामान्यार्घोदकेन वलिमुत्सृज्य तत्त्वमुद्रां प्रदर्शयेत। ततो वटुकाय वलिं दद्यात ॥

१ ईशान, २ वायु, ३ निरृतिस्तथा, ४ ग्निकोणेषु क्रमेण त्रिकोण-वृत्त-चतुरस्र-मण्डलं कृत्वा संपूज्याधारान् दत्त्वा क्रमेण 'वाँ वटुकाय नमः। यां योगिनीभ्यो नमः। क्षां क्षेत्रपालाय नमः। गां गणपतये नमः।' इति संपूज्य तेषु द्रव्य-भरित-पात्राणि निक्षिप्य वलिं दद्यात 'एह्येहि देवीपुत्र वटुकनाथ कपिलजटाभारभास्वर त्रिनेत्र ज्वालामुख सर्वविघ्नान्नाशय नाशय सर्वोपचारं वलिं गृह्ण गृह्ण स्वाहा' इति मन्त्रेण वटुकाय वलिं दद्यात, वामांगुष्ठानामायोगेन मुद्रां दर्शयेत्। 'ऊर्ध्वं ब्रह्माण्डतो वा दिवि गगनतले भूतले निःकले वा पाताले वानले वा पवनसलिलयोर्यत्र कुत्र स्थिता वा ॥ क्षेत्रे पीठोपपीठादिषु च कृतपदा धूपदीपादि-मांसैः प्रीता देव्यः सदा नः शुभवलिविधिना पान्तु वीरेन्द्रवन्द्याः ॥१॥ यां योगिनीभ्यः स्वाहा सर्व-योगिनीभ्यो हूँ फट् स्वाहा।' इत्यनेन वलिं दद्यात। वामहस्त - तर्जनीमध्यमानामाभिर्योन्याकारेण मुद्रां प्रदर्शयेत ॥२॥ 'क्षां क्षीं क्षूं क्षैं क्षौं क्षः स्थानक्षेत्रपाल

धूपादि-सहितबलिं गृह्ण-गृह्ण स्वाहा' इत्यनेन क्षेत्रपाल-बलिं दद्यात्। वाममुष्टिस्तर्जनीं सरलां कृत्वा मुद्रां प्रदर्शयेत्। 'गां गीं गूं गैं गौं गः गणपतये वर वरद सर्वजनं मे वशमानय बलिं गृह्ण-गृह्ण-गृह्ण स्वाहा' इति गणपतेर्बलिं हरेत्। वाममुष्टेर्मध्यमांगुलीदण्डवत् कृत्वा मुद्रां दर्शयेत् ॥४॥ ततो देव्यै आचमनीयं दत्वा ताम्बूलं दद्यात्। तत आरात्रिकम् यथा नवयोन्यात्मकं यन्त्रं कुंकुमादिना कांस्यादिभाजने विलिख्य तत्र कर्पूरवर्त्या घृत-पूरितानष्टयोनिषु दीपान् निधाय मध्ये पिष्टकादिरचित-मस्तकोपरि दीपं स्थापयेत्। 'ह्रीं श्रीं ग्लूं स्लूं म्लूं प्लूं ह्रीं श्रीं' इति मन्त्रेण मूल-मन्त्रेण चाभ्यर्च्य तत्पात्रं मस्तकान्तं समुद्धृत्य नववारं नीराजयेत्। ततो मूलमुच्चार्य—

समस्तचक्रचक्रेशि शुभे देवि नवात्मिके।
आरार्त्रिकमिदं देवि गृहाण मम सिद्धये।

ततश्चक्रमुद्रां प्रदर्शयेत्। ततस्त्रिकोणाकारं यथा स्यात्तथा प्रादक्षिण्येन परिक्रम्य साष्टाङ्गं पञ्चाङ्गं वा प्रणमेत्। ततो विशेषार्घोदकं चुलुकेनादाय—

इतः प्राणबुद्धि-देहधर्माधिकारतो जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिषु। सर्वास्ववस्थासु मनसा वाचा कर्मणा हस्ताभ्यां पद्भ्यामुदरेण शिश्ना यत्स्मृतं यदुक्तं यत्कृतं तत्सर्वं ब्रह्मार्पणं भवतु स्वाहा ॥

इति मन्त्रेण देवी-वामकरे समर्पयेत् ॥ ततो गुरून् स्वशिरसि विसृज्य परिवारान्देव्यङ्गे विलीनान् विभाव्य संहारमुद्रां बध्वा—

ॐ गच्छ गच्छ परं स्थानं स्वस्थानं परमेश्वरि।
यत्र ब्रह्मादयो देवा न विदुस्ते परं पदम् ॥

इति मन्त्रेण तर्जनीयुगलेन देवीतेजसा सह चक्रस्थ पुष्पमुद्धृत्याघ्राय वड्वायुना तत्तेजो ब्रह्मरन्ध्रं

नीत्वा परमशिव संयोज्यामृत-प्लुतं विभाव्य क्षणं विश्रम्य—

ॐ तिष्ठ देवि परे स्थाने स्वस्थाने परमेश्वरि।
यत्र ब्रह्मादयः सर्वे सुरास्तिष्ठन्ति मे हृदि॥

इति मन्त्रेण सुषुम्ना-मार्गेण हृदयारविन्दे नीत्वा दीपे दीपान्तरमिव विद्यमाने जीवात्म-तेजसि संयोज्य एकीभूतं विभाव्य मनसा पूर्वोक्तदिशा संपूज्य आत्मानं तत्तेजोमयं विभाव्य। तत ऐशान्यां रक्त-चन्दनेन लिखित-त्रिकोणे—

ॐ ते सर्वे विलयं यान्तु ये मां हिंसन्ति हिंसकाः।
मृत्युरोगभयक्लेशाः पतन्तु रिपुमस्तके॥

इति त्रिकोणोपरि क्षिपेत्। ततो मूलमन्त्राभि-मन्त्रितं निर्माल्यपुष्पं मूर्ध्नि—

ये मां स्पृशन्ति हस्तेन ये मां पश्यन्ति चक्षुषा।
सर्वे ते वश्यमायान्तु राजानो दुष्टजन्तवः॥

इति मन्त्रेण धारयेत्। धारयेच्च श्रीचक्रस्थ-रक्तचन्दनं भाले तेनैव मन्त्रेण। ततः पादोदकं पीत्वा नैवेद्यं तद्भक्तेभ्यो दत्त्वा स्वयञ्च भुक्त्वा देवीरूपोऽहमित्यात्मानं विभावयन् विहरेदिति समयाचारः॥

अथ न्यासाः। तत्र मातृकान्यास-ऋष्यादिन्यास-करांगुलिन्यास-षडङ्गन्यासाः प्रागुक्ताः। ततो निवृत्त्यादिन्यासः। गुह्ये क्रां निवृत्त्यै नमः। हृदये क्रीं प्रतिष्ठायै नमः॥ कण्ठे ऐं विद्यायै नमः। भ्रूमध्ये ह्रौं शान्त्यै नमः। ब्रह्मरन्ध्रे ह्रः अमृतायै नमः॥ ततो हृदये हस्तमारोप्य 'ऐंक्लींसौः महात्रिपुरसुन्दरि आत्मानं रक्ष रक्ष' इति आत्मरक्षां विधाय 'ऐंक्लींसौः फट्' इति छोटिकया दिग्बन्धनं कुर्यात्।

ततः आसनन्यासः। ऐंक्लींसौः अमृतार्णवासनाय नमः इति पादयोः। ऐंक्लींसौः त्रिपुरेश्वरी-पोताम्बुजासनाय नमः इति जानुद्वये। ह्रींक्लींसौः त्रिपुरसुन्दरीदिव्यासनाय नमः ऊरुद्वये।। हैंहक्लीं

हसौः त्रिपुरवासिनीचक्रासनाय नमः इति स्फिग्द्वये ॥ हसैं हसक्लीं हसौः त्रिपुरासर्वमन्त्रासनाय नमः इति गुह्ये । ह्रींश्रीं क्लींब्लें त्रिपुरमालिनीसाध्यसिद्धासनाय नमः इति नाभौ । हसरैं हसकलरीं हसरौः त्रिपुराम्बा-पर्यङ्कशक्तिपीठासनाय नमः इति वक्षसि । हसरैं हसकलरीं हसरौः श्रीमहात्रिपुरभैरवीसदाशिवमहाप्रेत-पद्मासनाय नमः ब्रह्मरन्ध्रे ॥

ततः षडङ्गन्यास वशिन्यादिन्यासौ प्रागुक्तकार्यौ ॥

ततो नवयोनिन्यासः । यथा दक्षिणकर्णे हसरैं नमः, वामकर्णे हसकलरीं नमः, चिबुके हसरौः नमः ॥१॥ दक्षिणगण्डे हसरैं नमः, वामगण्डे हस-कलरीं नमः, मुखे हसरौः नमः ॥२॥ दक्षिणनयने हसरैं नमः, वामनयने हसकलरीं नमः, नासिकायां हसरौः नमः ॥३॥ दक्षिणस्कन्धे हसरैं नमः, वाम-स्कन्धे हसकलरीं नमः, उदरे हसरौः नमः ॥४॥ दक्षिणकूर्परे हसरैं नमः, वामकूर्परे हसकलरीं नमः, कुक्षिदेशे हसरौः नमः ॥५॥ दक्षिणजानुनि हसरैं नमः, वामजानुनि हसकलरीं नमः, लिङ्गे हसरौः नमः ॥६॥ दक्षिणचरणे हसरैं नमः, वामचरणे हसकलरीं नमः, गुह्ये हसरौः नमः ॥७॥ दक्षिणपार्श्वे हसरैं नमः, वामपार्श्वे हसकलरीं नमः, हृदये हसरौः नमः ॥८॥ दक्षिणस्तने हसरैं नमः, वामस्तने हस-कलरीं नमः, कण्ठदेशे हसरौः नमः ॥९॥

ततो गोलकन्यासः । यथा—'ऐंक्लींसौः' इति जपन् गोलकं चिन्तयेत् । पुनः 'ऐंक्लींसौः' इति जपन् चतु-रस्रं विचिन्तयेत् ।

अथ पीठन्यासः । क ए ई ल ह्रीं अग्निचक्रे काम-गिर्यालये मित्रीशनाथात्मके रुद्रात्मशक्तिश्रीकामेश्वरी देवीश्रीपादुकायै नमः इति मूलाधारे । सहकहलह्रीं सूर्यचक्रे जालन्धरपीठे षष्ठीशनाथात्मके विष्ण्वात्म-शक्ति श्रीवज्रेश्वरीदेवी श्रीपादुकायै नमः इति हृदये । सकलह्रीं सोमचक्रे पूर्णगिरिपीठे उड्डीशनाथात्मके ब्रह्मात्मशक्ति श्रीभगमालिनीदेवीश्रीपादुकायै नमः इति ललाटे । कएईलह्रीं सहकहलह्रीं सकलह्रीं परं ब्रह्मचक्रे

उड्डीयानपीठे श्रीचर्यानाथात्मके ब्रह्मात्मशक्तिश्रीमहात्रिपुरसुन्दरीदेवीश्रीपादुकायै नमः इति ब्रह्मरन्ध्रे ॥

अथ तत्त्वन्यासः। कएईलह्रीं आत्मतत्त्व-व्यापिकायै श्रीमहात्रिपुरसुन्दर्यै नमः इति मूलाधारे। सहकहलह्रीं विद्यातत्त्वव्यापिकायै श्रीमहात्रिपुरसुन्दर्यै नमः इति हृदये ॥ सकलह्रीं शिवतत्त्व-व्यापिकायै श्रीमहात्रिपुरसन्दर्यै नमः इति ब्रह्मरन्ध्रे।

अथ पञ्चदशीन्यासः। १ मूलाधारे क नमः, २ हृदये ए नमः, ३ दक्षिणनयने ई नमः, ४ वामनयने ल नमः, ५ दक्षिणकर्णे ह्रीं नमः, ६ वामकर्णे स नमः, ७ दक्षिणनासिकायां ह नम, ८ वामनासिकायां क नमः, ९ मुखे ह नमः, १० दक्षिणबाहौ ल नमः, ११ वामबाहौ ह्रीं नमः, १२ पृष्ठे स नमः, १३ दक्षिणजानुनि क नमः, १४ वाम जानुनि ल नमः, १५ नाभिदेशे ह्रीं नमः।

ततः षोडशीन्यासः। ब्रह्मरन्ध्रे पूर्णविद्यां रक्तविद्यांदे वींविचिन्त्य सौभाग्यदण्डिनीं मुद्रां वामांसे भ्रामयन् रिपुजिह्वाग्रहमुद्रां वामपादतले न्यस्यन् ततो व्यापकन्यासं कुर्वाणः योनिमुद्रां बद्धूवा मुखे क्षिप्त्वा देवतां प्रणमेत्। १ ब्रह्मरंध्रे २ मणिबन्धे ३ ललाटे च षोडशार्णं मन्त्रं न्यसेत। ततः पाद-द्वये १ श्रीं नमः। जङ्घाद्वये २ ह्रीं नमः। जानु-द्वये ३ क्लीं नमः। कटिदेशे ४ ऐं नमः। अंगुली-पृष्ठे ५ सौः नमः। नाभिदेशे ६ ॐ नमः। पार्श्वद्वये ७ ह्रीं नमः। स्तनद्वये ८ श्रीं नमः। अंसयोः ९ कएईल ह्रीं नमः। कर-द्वये १० सहकल ह्रीं नमः। ब्रह्मरन्ध्रे ११ सकल ह्रीं नमः। मुखे १२ सौः नमः। भ्रू युगले १३ ऐं नमः। कर्णद्वये १४ क्लीं नमः। करतलयोः १५ ह्रीं नमः। करपृष्ठयोः १६ श्रीं नमः इति संहारन्यासः ॥ श्रीं नमः अंगुष्ठयोः १। ह्रीं नमः तर्जन्योः २। क्लीं नमः मध्यमयोः ३। ऐं नमः ४ अनामिकयोः। सौः नमः ५ कनिष्ठिकयोः। ओं नमः ६ ब्रह्मरन्ध्रे। ह्रीं नमः ७ मुखे। श्रीं नमः ८ हृदि। कएईलह्रीं नमः ९ नाभ्यादि पादपर्यन्तम्। सहकहलह्रीं मनः १० कण्ठान्ना-

भिपर्यन्तम्। सकल ह्रीं नमः ११ ब्रह्मरन्ध्रात्कण्ठपर्यन्तम्। सौ नमः १२ पादांगुष्ठयोः। ऐं नमः १३ उपांगुष्ठयोः। क्लीं नमः १४ मध्यमयोः। ह्रीं नमः १५ उपकनिष्ठिकयोः। श्रीं नमः १६ कनिष्ठिकयोः। इति स्थितिन्यासः॥ श्रीं नमः १ ब्रह्मरन्ध्रे। ह्रीं नमः २ नेत्रयोः। क्लीं नमः ३ ललाटे। ऐं नमः ४ श्रवणयोः। सौः नमः ५ घ्राणयोः। ॐ नमः ६ ओष्ठे। ह्रीं नमः ७ अधोदन्ते। श्रीं नमः ८ ऊर्द्ध्वदन्ते। कएईल ह्रीं नम ९ जिह्वायाम्। सहकहलह्रीं नमः १० चिबुके। सकलह्रीं नमः ११ पृष्ठे। सौः नमः १२ सर्वाङ्गे। ऐं नमः १३ हृदि। क्लीं नमः १४ स्तनयोः। ह्रीं नमः १५ कुक्षौ। श्रीं नमः १६ लिङ्गे। सर्वत्र नमोऽन्तं न्यसेत्। इति सृष्टिन्यासः॥ शिरसि अविकृतनादाय नमः। ललाटे शून्यनादाय नमः। भ्रूमध्ये स्पर्शनादाय नमः। नासायां नादनादाय नमः। वदने ध्वनिनादाय नमः। कण्ठे विन्दुनादाय नमः। हृदये शक्तिनादाय नमः। नाभौ जीवनादाय नमः। मूलाधारे अक्षरात्मकनादाय नमः।

ततः षोढान्यासः। अस्य श्रीत्रिपुरसन्दरीषोढान्यासस्य बृहदारण्यकऋषिरनुष्टुप्छन्दो गणेशो देवता न्यासकर्म्मणि विनियोगः इत्यभिलप्य ऋष्यादिन्यासं कृत्वा ऐं ह्रीं श्रीं अं विघ्नेश्वरश्रीभ्यां नमः—१ इति शिरसि। ऐं ह्रीं श्रीं आं विघ्नराजह्रीभ्यां नमः—२ इति मुखे। ऐं ह्रीं श्रीं इं विनायकतुष्टिभ्यां नमः—३ इति दक्षिणनेत्रे। ऐं ह्रीं श्रीं ईं शिवोत्तमशान्तिभ्यां नमः—४ इति वामनेत्रे। ऐं ह्रीं श्रीं उं विघ्नहृत्पुष्टिभ्यां नमः ५ इति दक्षकर्णे। ऐं ह्रीं श्रीं ऊं विघ्नकर्तृसरस्वतीभ्यां नमः ६ इति वामकर्णे। ऐं ह्रीं श्रीं ऋं विघ्नराजरतिभ्यां नमः ७ इति दक्षनसि। ऐं ह्रीं श्रीं ॠं गणनायकमेधाभ्यां नमः ८ इति वामनसि। ऐं ह्रीं श्रीं लृं एकदन्तकान्तिभ्यां नमः ९ इति दक्षगण्डे। ऐं ह्रीं श्रीं लॄं द्विदन्तकामिनीभ्यां नमः १० वामगण्डे। ऐं ह्रीं श्रीं एं गजवक्त्रमोहिनीभ्यां नमः ११ तुण्डे। ऐं ह्रीं श्रीं ऐं निरञ्जनजटाभ्यां नमः १२ अधरे। ऐं ह्रीं श्रीं ओं कन्दर्पभृत्तीव्राभ्यां नमः १३ ऊर्द्ध्वदन्ते। ऐं ह्रीं श्रीं औं

दीर्घमुखज्वालिनीभ्यां नमः १४ अधोदन्ते। ऐं ह्रीं श्रीं अं शङ्कर्षणानन्दनाभ्यां नमः १५ ब्रह्मरन्ध्रे। ऐं ह्रीं श्रीं अः वृषध्वजसुरसाभ्यां नमः १६ मुखे। ऐं ह्रीं श्रीं कं १७ गणनाथकामरूपिणीभ्यां नमः दक्षबाहुमूले। ऐं ह्रीं श्रीं खं गजेन्द्रशुभाभ्यां नमः १८ दक्षकूर्परे। ऐं ह्रीं श्रीं गं १९ सूर्यकर्णजयिनीभ्यां नमः दक्षमणिबन्धे। ऐं ह्रीं श्रीं घं त्रिनेत्रसत्याभ्यां नमः २० दक्षांगुलीमूलेषु। ऐं ह्रीं श्रीं ङं लम्बोदरविघ्नेशीभ्यां नमः २१ दक्षांगुल्यग्रेषु। ऐं ह्रीं श्रीं चं महामोदसुरूपिणीभ्यां नमः २२ इति वामबाहुमूले। ऐं ह्रीं श्रीं छं चतुर्मूर्त्तिकामदाभ्यां नमः २३ वामकूर्परे। ऐं ह्रीं श्रीं जं सदाशिवमदविह्वलाभ्यां नमः २४ वाममणिबन्धे। ऐं ह्रीं श्रीं झं आमोदविकटाभ्यां नमः २५ वामांगुलिमूलेषु। ऐं ह्रीं श्रीं ञं दुर्मुखघूर्णाभ्यां नमः २६ वामांगुल्यग्रेषु। ऐं ह्रीं श्रीं टं समुखभूतिनीभ्यां नमः २७ दक्षजङ्घामूले। ऐं ह्रीं श्रीं ठं प्रमोदभूतिभ्यां नमः २८ दक्षजानुनि। ऐं ह्रीं श्रीं डं एकपादमतिभ्यां नमः २९ दक्षगुल्फे। ऐं ह्रीं श्रीं ढं द्विजिह्वरमाभ्यां नमः ३० इति दक्षपादांगुलिमूलेषु। ऐं ह्रीं श्रीं णं ३१ सुरमानुषीभ्यां नमः इति दक्षपादांगुल्यग्रेषु। ऐं ह्रीं श्रीं तं वीरमकरध्वजाभ्यां नमः ३२ वामजङ्घामूले। ऐं ह्रीं श्रीं थं षण्मुखविकर्णाभ्यां नमः ३३ वामजानुनि। ऐं ह्रीं श्रीं दं वरदभ्रुकुटिभ्यां नमः ३४ वामगुल्फे। ऐं ह्रीं श्रीं धं वामदेवलज्जाभ्यां नमः ३५ वामांगुलिमूलेषु। ऐं ह्रीं श्रीं नं वक्रतुण्डदीर्घघोणाभ्यां नमः ३६ इति वामपादांगुल्यग्रेषु। ऐं ह्रीं श्रीं पं द्विरण्डकधनुर्द्धराभ्यां नमः ३७ दक्षपार्श्वे। ऐं ह्रीं श्रीं फं सेनानीयामिनीभ्यां नमः ३८ वामपार्श्वे। ऐं ह्रीं श्रीं बं ग्रामणीरात्रिभ्यां नमः ३९ पृष्ठे। ३ भं मत्तचन्द्रिकाभ्यां नमः ४० नाभौ। ३ मं विमलशशिप्रभाभ्यां नमः ४१ उदरे। ३ यं मत्तवाहनलोलाभ्यां नमः ४२ हृदि। ३ रं ४३ जटिलचपलाक्षीभ्यां नमः दक्षस्कन्धे। ३ लं मुण्डिऋद्धिभ्यां नमः ४४ ककुदि। ३ वं खड्गिदुर्भगाभ्यां नमः ४५

वामस्कन्धे । ३ शं वरेण्यशुभगाभ्यां नमः ४६ हृदादि-दक्षहस्तान्तम् । ३ षं ४७ वृषकेतुशिवाभ्यां नमः हृदादि वामहस्तान्तम् । ३ सं उष्मप्रियदुर्गाभ्यां नमः ४८ हृदादिदक्षपादान्तम् । ३ हं मेघनादकामिनीभ्यां नमः ४९ हृदादिवामपादान्तम् । ३ लं गजेशकान्य-कुब्जाभ्यां नमः ५० हृदयाद्युदरे । ३ क्षं गणेशविघ्न-हारिणीभ्यां नमः ५१ हृदादिमुखे तत्वमुद्रया सर्वत्र न्यसेदिति गणेशन्यासः प्रथमः ॥

अथ ग्रहन्यासः । ऐं ह्रीं श्रीं अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं ॡं एं ऐं ओं औं अं अः आं आदित्य-रुचिभ्यां नमः हृदये । ऐं ह्रीं श्रीं यं रं लं वं सों सोमामराभ्यां नमः भ्रूमध्ये । ऐं ह्रीं श्रीं कं खं गं घं ङं अं अङ्गाररक्ताभ्यां नमः नेत्रे । ऐं ह्रीं श्रीं चं छं जं झं ञं बुं बुधज्ञानरूपाभ्यां नमः हृदयोपरि । ऐं ह्रीं श्रीं टं ठं डं ढं णं बृं बृहस्पतियशस्विनीभ्यां नमः कण्ठे । ऐं ह्रीं श्रीं तं थं दं धं नं शुं शुक्राह्लादिनीभ्यां नमः गले । ऐं ह्रीं श्रीं पं फं बं भं मं शं शनैश्चर-शक्तिभ्यां नमः नाभौ । ऐं ह्रीं श्रीं शं षं सं हं राँ राहु-कृष्णाभ्यां नमः वक्त्रे । ऐं ह्रीं श्रीं लं क्षं कें केतु-वायवीभ्यां नमः इति गुह्ये ॥ । इति ग्रहन्यासो द्वितीयः ॥

अथ नक्षत्रन्यासः । ऐं ह्रीं श्रीं अं आं अश्विन्यै नमः ललाटे । ३ इं ईं भरण्यै नमः दक्षनेत्रे । ३ उं ऊं कृत्तिकायै नमः वामनेत्रे । ३ ऋं ॠं लृं ॡं रोहिण्यै नमः दक्षकर्णे । ३ एं मृगशिरायै नमः वामकर्णे । ३ ऐं आर्द्रायै नमः दक्षनासायाम् । ३ ओं औं पुनर्वसवे नमः वामनासायाम् । ३ कं पुष्यायै नमः कण्ठे । ३ खं गं अश्लेषायै नमः दक्षस्कन्धे । ३ घं ङं मघायै नमः वामस्कन्धे । ३ चं पूर्वफल्गुन्यै नमः दक्षभुजमध्ये । ३ छं जं उत्तरफल्गुन्यै नमः वामभुजमध्ये । ३ झं ञं हस्ताय नमः दक्षमणिबन्धे । ३ टं ठं चित्रायै नमः वाममणिबन्धे । ३ डं स्वात्यै नमः दक्षहस्ततले । ३ ढं णं विशाखायै नमः वाम-हस्ततले । ३ तं थं दं अनुराधायै नमः नाभौ । ३ धं

ज्येष्ठायै नमः दक्षकटिदेशे। ३ नं पं फं मूलायै नमः वामकटिदेशे। ३ वं पूर्वाषाढायै नमः दक्षोरौ। ३ भं उत्तराषाढायै नमः वामोरौ। ३ मं श्रवणायै नमः दक्षजानुनि। ३ यं रं धनिष्ठायै नमः वामजानुनि। ३ लं शतभिषायै नमः दक्षजङ्घायाम्। ३ वं शं पूर्वभाद्रपदायै नमः वामजङ्घायाम्। ३ षं सं हं उत्तरभाद्रपदायै नमः दक्षपादे। ३ लं क्षं अं अः रेवत्यै नमः वामपादे ॥ इति नक्षत्रन्यासस्तृतीयः ॥

अथ योगिनीन्यास। ऐं ह्रीं श्रीं अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं लॄं एं ऐं ओं औं डं डां डीं डूं डमलवरयूं डाकिन्यै मां रक्ष रक्ष त्वगात्मने नमः कण्ठे। ३ कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं रां रीं रूं रमलवरजूं राकिन्यै मां रक्षरक्षासृगात्मने नमः हृदये। ३ डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं नां नीं नूं नवलवरजूं लाकिन्यै मां रक्ष रक्ष मांसात्मने नमः नाभौ। ३ बं भं मं यं रं लं कां कीं कूं मलवकरजूं काकिन्यै मां रक्ष रक्ष मेदात्मने नमः स्वाधिष्ठाने। ३ बं शं षं सं सां सीं सूं समलवरजूं साकिन्यै मां रक्ष रक्ष अस्थ्यात्मने नमः मूलाधारे। ३ हं लं क्षं हां हीं हूं हमलवरजूं हाकिन्यै मां रक्ष रक्ष मज्जात्मने नमः भ्रूमध्ये। इति चतुर्थो योगिनीन्यासः ॥

अथ राशिन्यासः। ऐं ह्रीं श्रीं अं आं इं ईं मेषराशये नमः दक्षगुल्फे। ३ उं ऊं ऋं वृषराशये नमः दक्षजानुनि। ३ ॠं लृं लॄं मिथुनराशये नमः दक्षवृषणे। ३ एं ऐं कर्कटराशये नमः दक्षकुक्षौ। ३ ओं औं सिंहराशये नमः दक्षस्कन्धे। ३ अं अः शं षं सं हं लं क्षं कन्याराशये नमः दक्षमस्तके। कं खं गं घं ङं तुलाराशये नमः वाममस्तके। ३ चं छं जं झं ञं वृश्चिकराशये नमः बामबाहुमूले। ३ टं ठं डं ढं णं धनुराशये नमः वामकुक्षौ। ३ तं थं दं धं नं मकरराशये नमः वामवृषणे। ३ पं फं बं भं मं कुम्भराशये नमः वामगुल्फे। इति पञ्चमो राशिन्यासः ॥

अथ पीठन्यासः। ऐं ह्रीं श्रीं अं कामरूपपीठाय

नमः शिरसि। ३ आं वाराणसीपीठाय नमः मुखवृत्ते। ३ इं नेपालपीठाय नमः दक्षचक्षुषि। ३ ईं पौण्ड्रवर्द्धन-पीठाय नमः वामचक्षुषि। ३ उं काश्मीरपीठाय नमः दक्षकर्णे। ३ ऊं कान्यकुब्जपीठाय नमः वामकर्णे। ३ ऋं पुरस्थितपीठाय नमः दक्षनसि। ३ ॠं चरिस्थरपीठाय नमः वामनसि। ३ लृं पूर्णशैल-पीठाय नमः दक्षगण्डे। ३ लॄं अर्बुदशैलपीठाय नमः वामगण्डे। ३ एं आम्रातकेश्वर पीठाय नमः, ओष्ठे। ३ ऐं एकाम्रपीठाय नमः, अधरे। ३ ओं त्रिस्रोतः पीठाय नमः, ऊर्द्धवदन्ते। ३ औं कामकोटिपीठाय नमः, अधोदन्ते। ३ अं कैलाश-पीठाय नमः, मुखे। ३ अः भृगुनगरपीठाय नमः, ब्रह्मरन्ध्रे। ३ कं चन्द्र-पुर पीठाय नमः, दक्षांसे। ३ खं केदारपीठाय नमः, कूर्परे। ३ गं श्रीपीठाय नमः, मणिबन्धे। ३ घं ओंकार पीठाय नमः, अंगुलिमूलेषु। ३ ङं जालन्धर पीठाय नमः, अंगुलाग्रेषु। ३ चं मानव पीठाय नमः, वामांसे। ३ छं भद्रपीठाय नमः, वामकूर्परे। ३ जं देवीकोटपीठाय नमः वाममणिबन्धे। ३ झं गोकर्ण-पीठाय नमः, वामांगुलिमूलेषु। ३ ञं मारुतेश्वर पीठाय नमः, वामांगुल्यग्रेषु। ३ टं अट्टहास पीठाय नमः, दक्षकट्यधः। ३ ठं विजयपीठाय नमः, दक्ष-जानुनि। डं राजगृह पीठाय नमः दक्षगुल्फे। ३ ढं कोल्लगिरि पीठाय नमः, दक्षपादाङ्गुलिमूलेषु। ३ णं एलापुर पीठाय नमः, दक्षपदांगुल्यग्रेषु। ३ तं कामेश्वर पीठाय नमः, वामकट्यधः। ३ थं जयन्ती पीठाय नमः, वामजानुनि। ३ दं उज्जयिनी पीठाय नमः, वामपादांगुलिमूलेषु। ३ नं हस्तिनापुर पीठाय नमः, वामपादांगुल्यग्रेषु। पं उड्डीश पीठाय नमः, दक्षपार्श्वे। ३ फं प्रयाग पीठाय नमः, वामपार्श्वे। ३ बं विन्ध्य पीठाय नमः, पृष्ठे। ३ भं मायापुर पीठाय नमः, नाभौ। ३ मं जलेश्वर पीठाय नमः, उदरे। ३ यं मलयपीठाय नमः, हृदये। रं शैल पीठाय नमः, दक्षिणांसे। लं मेरुपीठाय नमः, ककुदि। ३ वं गिरि पीठाय नमः, वामांसे। ३ शं माहेन्द्र पीठाय

नमः, हृदादिदक्षिणांसे। ३ षं वामनपीठाय नमः, हृदादिवामांसे। ३ सं हिरण्यपुरपीठाय नमः, हृदादिदक्षिणपादे। ३ हं महालक्ष्मीपुरपीठाय नमः, हृदादिवामपादे। ३ लं उड्डीयानपीठाय नमः, हृदादि-उदरे। ३ क्षं क्षत्रपुरपीठाय नमः, हृदादिमुखे॥ इति षष्ठः पीठन्यासः।

अयं षोढान्यासो मातृकान्यास-काले कर्त्तव्यं इति सांप्रदायिकाः॥

अथ त्रिपुरान्यासः। ऐं ह्रीं श्रीं अं कामिनीत्रिपुरायै नमः। ३ आं मालिनीत्रीत्यादि। ३ इं मदनात्रिपु०। ३ ईं उन्मादिनीत्रिपु०। ३ उं द्राविणीत्रिपु०। ३ ऊं खेचरीत्रिपुरायै नमः। ३ ऋं ऋटिकात्रि०। ३ ॠं कलावतीत्रि०। ३ ऌं क्लेदिनीत्रि०। ३ ॡं शिवदूतीत्रि०। ३ एं सुभगात्रि०। ३ ऐं भगवहात्रि०। ३ ओं विद्येश्वरीत्रीत्यादि। ३ औं महालक्ष्मीत्रि०। ३ अं कौलिनीत्रिपुरायै नमः। ३ अः कालेश्वरीत्रिपुरायै नमः। ३ कं कुलमालिनीत्रि०। ३ खं व्यापिनीत्रिपुरायै नमः। ३ गं भगात्रि०। ३ घं वागीश्वरीत्रि०। ३ ङं कालिकात्रि०। ३ चं पिङ्गलात्रि०। ३ छं भगसर्पिणीत्रिपु०। ३ जं सुन्दरीत्रि०। ३ झं नीलपताकात्रि०। ३ ञं सिद्धेश्वरीत्रि०। ३ टं महासिद्धेश्वरीत्रि०। ३ ठं मोघात्रि०। ३ डं रत्नमालात्रि०। ३ ढं मङ्गलात्रि०। ३ णं भगमालिनीत्रि०। ३ तं रौद्रीत्रिपुरायै नमः। ३ थं योगेश्वरीत्रि०। ३ दं अम्बिकात्रि०। ३ धं अट्टहासात्रि०। ३ नं व्योमरूपिणीत्रि०। ३ पं वज्रेश्वरीत्रिपुरायै०। ३ फं क्षोभिणीत्रि०। ३ बं शाकम्भरीत्रि०। ३ भं अनङ्गात्रि०। ३ मं लोकेश्वरीत्रि०। ३ यं रक्तात्रिपु०। ३ रं सुस्थात्रीत्यादि। ३ लं शुक्रात्रि०। ३ वं अपराजितात्रिपु०। ३ शं संवर्त्तात्रि०। ३ षं विमलात्रिपु०। ३ सं अघोरात्रिपुरायै नमः। ३ हं भैरवीत्रिपु०। ३ क्षं सर्वाकर्षिणीत्रिपुरायै नमः॥ इति पञ्चाशत्त्रिपुराः पञ्चाशन्मातृकास्थानेषु नमोऽन्तेन न्यसेत॥

ततः कामरतिन्यासः। ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं अं काम-

रतिभ्यां नमः। एवं सर्वत्र, ४ आं कामप्रीतिभ्यां। ४ इं कान्तकामिनीभ्याम्। ४ ईं भ्रान्तमोहिनीभ्याम्। ४ उं कामधुक्कमला०। ४ ऊं कामचारविलासिनी०। ४ ऋं कन्दर्पकल्पलता०। ४ ॠं कोमलश्यामलवा०। ४ ऌं कामवर्द्धकशुचिस्मिता०। ४ ॡं कामविजया०। ४ एं रणविशालाक्षी०। ४ ऐं रमणलेलिहा०। ४ ओं रतिनाथदिगम्बरा०। ४ औं रतिप्रियरमाभ्याम्। ४ अं रात्रिनाथकुब्जिका०। ४ अः स्मरकान्ताभ्याम्। ४ कं रमणसत्या०। ४ खं निशाचरकल्याणीभ्याम्। ४ गं नन्दभोगिनी०। ४ घं नन्दीशकामदाभ्याम्। ४ ङं मदनसुलोचना०। ४ चं नन्दयित्रिस्सुलावण्या०। ४ छं निशाचरमर्दिनी०। ४ जं रतिहंसकलहंसप्रिया०। ४ झं पुष्पधनुः काङ्क्षिणी०। ४ ञं महाधनुः सुमुखी०। ४ टं भ्रामणीनलिनी०। ४ ठं भीमजटिनीभ्याम्। ४ डं भ्रामणज्वालिनी०। ४ ढं भ्रमणशिखिनी०। ४ णं श्यामसुग्धा०। ४ तं भ्रामणरमा०। ४ थं भृगुभ्रमा०। ४ दं भ्रान्तकामकला०। ४ धं भ्रमावहासुचञ्चला०। ४ नं मोहनदीर्घजिह्वा०। ४ पं मेषकमहामति०। ४ फं मुग्धलोलाक्षी०। ४ बं मोहवर्द्धनभृङ्गिनी०। ४ भं मोहकचपेटा०। ४ मं मन्मथनाथा०। ४ यं मतङ्गमालिनी०। ४ रं भृङ्गीशकलहंसिनी०। ४ लं गायकत्रिश्वतोमुखी०। ४ वं गीतिगजनन्दिका०। ४ शं नर्त्तकरञ्जिनी०। ४ षं मेषकान्ति०। ४ सं उन्मत्तकलकण्ठा०। ४ हं संवर्त्तकवृकोदरी०। ४ लं मेघश्यामा०। ४ क्षं विमलश्रीमतिभ्याम्। मातृकास्थानेष्वेतान् नमोऽन्तान् न्यसेत् ॥ इति कामरतिन्यासः ॥

ततः षोडशनित्यान्यासः ॥ तत्र मन्त्रा यथा। ऐं ह्रीं श्रीं अं ऐं क्लीं सौः ॐ नमः कामेश्वरि इच्छा कामफलप्रदे सर्वसत्ववशङ्करि सर्वजगत क्षोभणकरि हुं हुं द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः सौः क्लीं ऐं कामेश्वरीनित्याकलायै नमः। ऐं ह्रीं श्रीं आं ऐं भगभगे भगिनि भगोदरि भगाङ्गे भगमाले भगावहे भगगुह्ये भगयोनि भगनिपातिनि सर्वभगवशङ्करि भगरूपे नित्यक्लिन्ने भगस्वरूपे सर्वभगानि मे ह्यानय वरदे रेते सुरेते

भगक्लिन्ने क्लिन्ने द्रवे क्लेदय दारय सर्वसत्वान् भगेश्वरि अमोघे भगविच्छे क्षुभ क्षोभय सर्वसत्वान् भगेश्वरि ऐंब्लुंजं भें ब्लुं मोंब्लुं हेंब्लुं हें ब्लुं क्लीं हें क्लिन्ने सर्वाणि भगानि मे वशमानय स्त्रींहर ब्लें ह्रीं भगमालिनीनित्याकलायै नमः ।२। ऐं ह्रीं श्रीं ईं ह्रीं नित्यक्लिन्ने मदद्रवे स्वाहा नित्यक्लिन्नानित्याकलायै नमः । ३ । ऐं ह्रीं श्रीं ऊं ईं ओं क्रोंद्रोंक्रोंचोंक्ष्रौंत्रोंम्रौं स्वाहा भेरुण्डानित्याकलायै नमः । ४ । ऐं ह्रीं श्रीं उं ह्रीं वह्निवासिन्यै नमः वह्निवासिनीनित्याकलायै नमः । ५ । ऐं ह्रीं श्रीं ऊं ओं ह्रीं क्लेंसः नित्याक्लिन्ने मदद्रवे स्वाहा वज्रेश्वरीनित्याकलायै नमः । ६ । ऐं ह्रीं श्रीं ऋं ह्रीं शिवदूतीनित्याकलायै नमः । ७ । ऐं ह्रीं श्रीं ॠं ओं ह्रीं तुं खेचछेक्षश्रीं तुंचे ह्रीं फट् त्वरितानित्याकलायै नमः ॥ ८ ॥ ऐं ह्रीं श्रीं लृं ऐं क्लीं सौः कुलसुन्दरीनित्याकलायै नमः ॥ ९ ॥ ऐं ह्रीं श्रीं लॄं ऐं क्लीं सौः हसकलर डैं हसकलर डीं हसकलर डौः द्रांद्रीं क्लीं ऐंसः नित्येत्यादि । १० । ऐंह्रीं श्रीं एं- ओंह्रीं फ्रें ऐंओं ह्रीं क्रोंनित्ये मदद्रवे तुं क्रों ह्रीं नीलपताकिनीनित्याकलायै नमः । ११ । ऐं ह्रीं श्रीं ऐंभमरौं विजयानित्याकलायै नमः । १२ अथवा । ऐं ह्रीं श्रीं ऐं भमरयौंविजयेत्यादि । १२ । ऐं ह्रीं श्रीं ओं स्त्रौं सर्वमङ्गलायै नमः । १३ । ऐं ह्रीं श्रीं औं ओं नमो भगवति ज्वालामालिनि देवि ज्वालामालिनि देवि देवि सर्वभूतसंहारिके जातवेदसि ज्वलन्ति ज्वलन्ति ज्वल ज्वल प्रज्वल प्रज्वल तुंतुंतुं रंरंरं तुं फट् स्वाहा ज्वालामालिनि नित्याकलायै नमः । १४ । ऐंह्रीं श्रीं अंचेंकीं विचित्रानित्या कलायै नमः ॥१५॥ ऐं ह्रीं श्रीं अः मूलविद्यामुच्चार्य महात्रिपुरसुन्दरीनित्याकलायै नमः ॥१६॥ ॥ इति षोडशनित्यान्यासः ॥

अथ प्रकटयोगिनीन्यासः । मूलाधारे ऐं ह्रीं श्रीं प्रकटयोगिनीभ्यो नमः । स्वाधिष्ठाने—३ गुप्तयोगिनीभ्यो नमः । नाभौ ३ गुप्तयोगिनीभ्यो नमः । हृदये ३ संप्रदाययोगिनीभ्यो नमः । कण्ठे ३ कुलकौलिनीयोगिनीभ्यो नमः । भ्रूमध्ये ३ निगर्वयोगि-

नीभ्यो नमः। नादे ऐं ह्रीं श्रीं रहस्ययोगिनीभ्यो नमः। नादान्ते ऐं ह्रीं श्रीं अतिरहस्ययोगिनीभ्यो नमः। ब्रह्मरन्ध्रे ऐं ह्रीं श्रीं परमातिरहस्ययोगिनीभ्यो नमः ॥*॥

अथायुधन्यासो गुप्तार्णवे। एवं कामकलारूपं देवतामयमात्मनः। वपुर्विचिन्त्य शिवयोरायुधन्यास-माचरेत् ॥ द्रांद्रींक्लींब्लूंसः यांरांलांवांशांधं सम्मोहनाय कामेश्वरधनुषे नमः। यां ५ द्रां ५ संमोहनाय कामेश्वरीधनुषे नमः। एतद्द्वयं स्ववामाधो हस्ते। द्रां ५ यां ५ जं जम्भलेभ्यः कामेश्वरबाणेभ्यो नमः। यां ५ द्रां ५ जः जम्भलेभ्यः कामेश्वरीबाणेभ्यो नमः। एतद्-द्वयं दक्षिणाधःकरे। द्रां ५ यां ५ आं वशीकरणाय कामेश्वरपाशाय नमः। यां ५ द्रां ५ ह्रीं वशीकरणाय कामेश्वरीपाशाय नमः। एतद्द्वयं वामोर्ध्वहस्ते। द्रां ५ यां ५ क्रों सर्वस्तम्भनाय कामेश्वरांकुशाय नमः। यां ५ द्रां ५ क्रों सर्वस्तम्भनाय कामेश्वर्यंकुशाय नमः। एतद्द्वयं दक्षोर्ध्वे ॥ इति आयुधन्यासः ॥

ततो मूलेन व्यापकं कृत्वा नव ९ मुद्राः प्रदर्शयेत्। तन्मन्त्रा यथा—१ द्रां सर्वसंक्षोभिणी, २ द्रीं सर्व-द्राविणी, ३ क्लीं आकर्षिणी, ४ ऐं सर्वावेशिनी, ५ सः सर्वोन्मादिनी, ६ क्रों महाङ्कुशा, ७ ह्सखफ्रें खेचरी, ८ ह्सौः बीजमुद्रा, ९ ऐं योनिमुद्रा ॥

अथैतासां लक्षणानि निगद्यन्ते क्रमेण हि। वाम-केश्वरतन्त्रे यान्याचचक्षे महेश्वरः ॥ मध्यमे मध्यगे कृत्वा कनिष्ठेऽङ्गुष्ठसेधिते। तर्जन्यौ दण्डवत्कृत्वा मध्य-मोपर्यनामिके ॥ एषा च प्रथमा मुद्रा सर्वसंक्षोभ-कारिणी ॥ अत्र कनिष्ठे द्विवचनान्तम्, अंगुष्ठेन, सन्धिश्छान्दसः ॥१॥ एतस्या एव मुद्राया मध्यमे सरले यदा ॥ क्रियेते परमेशानि सर्वविद्राविणी तदा ॥२॥ मध्यमातर्जनीभ्यां च कनिष्ठानामिके समे। अंकुशा-काररूपाभ्यां मध्यमे परमेश्वरि। अंगुष्ठं तु नियुञ्जीत कनिष्ठानामिकोपरि। इयमाकर्षिणी मुद्रा त्रैलोक्या-कर्षणक्षमा ॥३॥ अंकुशाकाररूपाभ्यां मध्यमातर्ज-नीभ्यां विशिष्टा। मध्यमे तादृश मध्यमातर्जन्योर्मध्य-वर्त्तिन्यौ कनिष्ठानामिके समे पूर्वमुद्रा तुल्ये ॥३॥

पुटाकारौ करौ कृत्वा तर्जन्यावंकुशाकृती। परिवर्त्त-क्रमेणैव मध्यमे तदधोगते॥ क्रमेण देवि तेनैव कनिष्ठानामिकादयः। संयोज्य निविडाः सर्वा अंगुष्ठाव-प्रदेशतः। मुद्रेयं परमेशानि सर्ववश्यकरी मता॥ कनिष्ठानामिकापदं दक्षहस्तकनिष्ठानामिकापरम्। आदिपदेन वामहस्तकनिष्ठानामिकापरिग्रहः। अंगुष्ठा-वप्रदेशत इति। अंकुशाकारयोस्तयोस्तर्जन्योरग्रदेशे अंगुष्ठौ योजयेदिति शेषः ॥४॥ सम्मुखौ तु करौ कृत्वा मध्यमा मध्यमेऽन्त्यगे। अनामिका तु सरले तद्बहिस्तर्जनीद्वयम्॥ दण्डाकारौ ततोऽङ्गुष्ठौ मध्य-मानखदेशगौ। मुद्रैषोन्मादनी नाम क्लेदनी सर्व-योषिताम्॥ अन्त्यजे कनिष्ठे दक्षिण-हस्तकनिष्ठां वामहस्तमध्यमया बध्वा वामहस्तकनिष्ठां दक्षिणहस्त-मध्यमया बद्ध्वा तयोर्नखदेशयोरंगुष्ठौ निःक्षिपे-दित्यर्थः ॥५॥ अस्यास्त्वनामिकायुग्ममधः कृत्वाऽङ्कु-शाकृती। तर्जन्यावपि तेनैव क्रमेण विनियोजयेत्। इयं महांकुशा मुद्रा सर्वकामार्थसाधिनी ॥६॥ सव्यं दक्षिणदेशे तु सव्यदेशे तु दक्षिणम्। बाहुं कृत्वा महादेवि हस्तौ संपरिवर्त्य च॥ कनिष्ठानामिका देवि युक्ता तेन क्रमेण तु। तर्जनीभ्यां समाक्रान्ते सर्वोर्ध्व-मधिमध्यमे। अंगुष्ठौ च महेशानि सरलावतिकार-येत्॥ इयं सा खेचरी मुद्रा पार्थिवस्थानयोजिता॥ पार्थिवस्थानं ललाटं न तु मूलाधारम् असंभवादिति मन्त्रदर्पणे वराहः ॥७॥ परिवर्त्य करौ स्पष्टावर्द्ध-चन्द्राकृती प्रिये। तर्जन्यंगुष्ठयुगलं युगपत्कारयेत्ततः। अधःकनिष्ठावष्टब्धे मध्यमे विनियोजयेत्। तथैव कुटिले योज्ये सर्वाधस्तादनामिके। वीजमुद्रेयम-चिरात् सर्वसिद्धिप्रवर्द्धिनी ॥८॥ मध्यमे कुटिले कृत्वा तर्जन्युपरिसंस्थिते। अनामिके मध्यगते तथैव हि कनिष्ठिके। सर्वा एकत्र संयोज्या अंगुष्ठोपरि पीडिताः। एषा तु प्रथमा मुद्रा योनिमुद्रेति संज्ञिता ॥९॥ एता मुद्रा महेशानि त्रिपुराया मयोदिताः। पूजाकाले प्रयोक्तव्या यथानुक्रमयोगतः॥

अथ प्रसङ्गादन्यासामपि देवतानां पूजोपयोगिन्यो

मुद्रा लिख्यन्ते । तत्राङ्कुशमुद्रा यथा—दक्षमुष्टिं विधाया तर्जन्यङ्कुशरूपिणी । अङ्कुशाख्या महामुद्रा त्रैलोक्याकर्षणोत्तमा । कुम्भमुद्रा यथा दक्षांगुष्ठपरांगुष्ठे क्षिप्त्वा हस्तद्वयेन तु । सावकाशा चैकमुष्टिमुद्रेयं कुम्भसंज्ञका ॥२॥ धेनुमुद्रा यथा अन्योन्याभिमुखा श्लिष्टा कनिष्ठानामिका पुनः । तथा च तर्जनी मध्या धेनुमुद्राऽमृतप्रदा । कालिकापुराणेऽपि । दक्षिणामध्यमाग्रेण सव्यहस्तस्य तर्जनीम् । योजयेत्सव्यमध्या तु तर्जन्या दक्षिणेन वै । तथा दक्षानामिकया वामहस्तकनिष्ठिकाम् । अनामिकान्तरामस्य दक्षिणस्य कनिष्ठया । योजयेद्भक्तिमान्सम्यक् दक्षिणावर्त्तनेन तु । धेनुमुद्रा समाख्याता सर्वदेवस्य तुष्टिदा ॥३॥

अथोपचारमुद्रा लक्षणसंग्रहे । आसने पद्ममुद्रा स्याद्भवस्तद्वयमधोमुखम् ॥४॥ मुद्रैषा कुशलप्रश्ने तदेवोर्द्ध्वमुखन्ततः ॥५॥ मुद्रा स्यात्स्वागते चार्घ्यमुद्रा त्वञ्जलिरुच्यते ॥७॥ अनामांगुष्ठयोर्योगात्सैवोक्ता पाद्यमुद्रिका ॥८॥ उत्तानं दक्षहस्तं तु कृत्वा निम्नतलं सुधीः। कनिष्ठानामिका युक्ताश्चतस्रोंगुल्य उन्नताः। मुद्रैषा च ६ मने प्रोक्ताधोमुखी सा त्वनामया। स्पृष्टांगुष्ठा भवेन्मुद्रा मधुपर्के वरानने ॥१०॥ अधोमुखीं दक्षहस्ते कृत्वा मुष्टिं कनिष्ठया । विमुक्ता स्नानमुद्रैषा गदिता परमेश्वरि ॥११॥ उत्तानं दक्षिणं हस्तं कृत्वा तन्मध्यमान्ततः। अंगुष्ठेन स्पृशेदेषा मुद्रा वस्त्रस्य कीर्त्तिता ॥१२॥ एषैवानामिकास्पर्शान्मुद्रा भूषणसंज्ञका ॥१३॥ ज्येष्ठाग्रेण कनिष्ठाग्रं स्पृशेद् गन्धस्य मुद्रिका ॥१४॥ अधोमुखं करं कृत्वा तर्जन्यग्रे तु योजयेत् । अंगुष्ठाग्रं तु मुद्रेयं पुष्पाख्या परमेश्वरि ॥१५॥ अंगुष्ठाग्रेण तर्जन्याः स्पृशेदग्रं महेश्वरि। धूपमुद्रेयमाख्याता सर्वदेवप्रियङ्करी ॥१६॥ ज्येष्ठाग्रेण स्पृशेदग्रं मध्यमायाः सुरार्चिते । दीपमुद्रेयमुदिता सर्वदेवीप्रिया शुभा ॥१७॥ अनामाग्रं स्पृशेद्देवि ज्येष्ठाग्रेण तु देशिकः । नैवेद्यमुद्रा कथिता देवतातृप्तिकारिणी ॥१८॥ अनामांगुष्ठयोगेन वामहस्तस्य पार्वति । तर्पयेत्कालिकां देवीं सायुधां सपरिच्छदाम् ॥१९॥ अत्र कालि-

कामित्युपलक्षणम्। इयमेव तत्त्वमुद्राऽपि। अथ कूर्ममुद्रा तन्त्रे। वामहस्तस्य तर्जन्यां दक्षस्य च कनिष्ठिकाम्। तथा दक्षिणतर्जन्यां वामांगुष्ठं नियोजयेत्। उन्नतं दक्षिणांगुष्ठं वामस्य मध्यमादिकाः। अंगुलीर्योजयेत्पृष्ठे दक्षिणस्य करस्य च॥ वामस्य पितृतीर्थेन मध्यमानामिका तथा। अधोमुखे ततः कुर्याद्दक्षिणस्य च हस्ततः। कूर्मपृष्ठसमं कुर्याद्दक्षिणस्य च मण्डलम्। एवं विधः सर्वसिद्धिं ददाति करकच्छपः ॥२०॥ अथावाहनादिमुद्रा। हस्ताभ्यामञ्जलिं बद्ध्वाऽनामिकामूलपर्वसु। अंगुष्ठे निःक्षिपेत्सेयं मुद्रा त्वावाहनी मता ॥२१॥ अधोमुखीत्वियं वै स्यात्स्थापनीति निगद्यते ॥२२॥ उच्छ्रितांगुष्ठमुष्ट्योस्तु संय्योगात्सन्निधापिनी ॥२३॥ अन्तःप्रवेशितांगुष्ठा सैव संरोधनी मता ॥२४॥ तर्जनीमध्यमाभ्यां तु दक्षहस्तस्य ताडयेत्। वामं करतलं देवि मुद्रैषा रक्षिणी भवेत ॥२५॥ उत्तानमुष्टियुगला मुद्रा स्यात्संमुखाभिधा ॥ २६ ॥ देवताङ्गे षडङ्गानां न्यासस्तु सकलीकृतिः। अन्योन्यग्रथितांगुष्ठा प्रसारितकरांगुली। महामुद्रेयमुदिवा परमीकरणे प्रिये ॥ २८ ॥ सव्यहस्तकृतामुष्टिर्दीर्घाधोमुखतर्जनी। अवगुण्ठन मुद्रेयमभितो भ्रामिता सती ॥ २९ ॥ वक्त्रं विस्फारितं कृत्वाऽप्यधोजिह्वाञ्च चालयेत्। पार्श्वस्थमुष्टियुगलं लेलिहानेति कीर्तिता ॥३०॥ अन्यथापि—तर्जनीमध्यमानामः समाः कुर्यादधोमुखीः। अनामायां क्षिपेद् बद्धामृजुं कृत्वा कनिष्ठिकाम्॥ लेलिहानामुद्रेयं जीवन्यासे प्रकीर्त्तिता ॥३१॥ योनिमुद्रा तत्रैव। मध्यमे कुटिले कार्ये तर्जन्युपरिसंस्थिते॥ अनामिके मध्यगते तथैव हि कनिष्ठिके। सर्वा एकत्र संयोज्या अंगुष्ठपरिपीडिताः। योनिमुद्रा समाख्याता त्रैलोक्योत्पत्तिमातृका ॥३२॥ मुण्डमालायाम्। तर्जन्यनामिके मध्ये कनिष्ठादिक्रमादपि। करयोर्योजयित्वा च कनिष्ठामूलदेशतः अंगुष्ठाग्रं योजयित्वा परयोनिरितोरिता ॥ ३३ ॥ भैरवतन्त्रे—बद्ध्वा तु योनिमुद्रां वै मध्यमे कुटिले कुरु। अंगुष्ठे तु तदग्रस्थे मुद्रेयं

भूतिनी भवेत् ॥३४॥ परिवृत्य करौ स्पष्टावंगुष्ठतर्जनी युगम् । अर्द्धचन्द्राकृतिन्यायं युगपत्कारयेत्समम् । अधः कनिष्ठां संहृत्य मध्यमे विनियोजयेत् । मुद्रैषा कथिता देवि बीजाख्या ज्ञानरूपिणी ॥३५॥ परिवृत्तौ करौ कृत्वा कनिष्ठाकृष्टमध्यमाम् । अनामयोर्युतिश्चाधस्तर्जनीयुगलं पृथक् । अन्योन्यं निविडं बद्ध्वा अंगुष्ठाग्रे अनामिके । दैत्यानां धूमकेत्वाख्या मुद्रैषा कथिता प्रिये ॥३६॥ वाममुष्टिं विरचय मोचयित्वा तु तर्जनीम् । भुजस्योर्ध्वे दक्षमुष्टिं प्रसार्य तर्जनीं ततः ॥ रचिता वै विविधरूपा मुद्रैषा सुरनाशिनी ॥ ३७ ॥ बध्वा वामकरे मुष्टिं तर्जनीञ्च कनिष्ठिकाम् । उत्थापयेत्तथाङ्गुष्ठं त्रिखण्डेति प्रकीर्त्तिता॥ ३८ ॥ खड्गादिमुद्रा यथा—स्वतन्त्रतन्त्रे । कनिष्ठानामिके बध्वा अंगुष्ठेनैव दक्षगे । शेषांगुल्यौ प्रसृते मुद्रेयं खड्गसंज्ञका ॥३९॥ अन्तरंगुष्ठमुष्टिञ्च कृत्वा वामकरस्य च । मध्यमाभ्यां दक्षिणस्य तथाऽऽलम्ब्य प्रयत्नतः । मध्यमेनाथ तर्जन्यामंगुष्ठाग्रं नियोज्य च । दक्षिणं योजयेत्पाणिं वाममुष्टौ तु साधकः । दर्शयेद्दक्षिणे भागे मुण्डमुद्रेयमुच्यते ॥ ४० ॥ वरदाभयमुद्रे च वरदाभयवत्कुरु ॥४१॥४२॥ पृष्ठलग्नौ करौ कृत्वा चांगुल्योऽन्योन्यमध्यतः । परिवृत्य ततः कुर्यात्तर्जन्यौ सरलाकृती । विसर्जने निगदिता मुद्रा संहारसंज्ञका ॥ ४३ ॥ कनिष्ठांगुष्ठकौ युक्तौ करयोरितरेतरम् । तर्जनीमध्यमानामाः संहता भुग्नवर्जिताः । मुद्रैषा गालिनी प्रोक्ता शङ्खस्योपरिचालिता ॥ ४४ ॥ एषैवाध्र्वमुखी ज्वालिनीमुद्रा । वाममुष्ट्यन्तरेऽङ्गुष्ठं निवेश्य सरलांगुलीः । दक्षिणस्य करस्यैव वामांगुष्ठेन संस्पृशेत् । शङ्खमुद्रेयमाख्याता मन्त्रविद्भिरनुत्तमा ॥ ४६ ॥ विपर्यस्ते तलकृत्वा वामदक्षिणहस्तयोः । अंगुष्ठे ग्रथयेच्चैव कनिष्ठानामिकान्तरे । चक्रमुद्रेयमुदिता सर्वसिद्धिकरी शुभा ॥ ४७ ॥ मत्स्यमुद्रा—दक्षपाणिपृष्ठदेशं वामपाणितलं क्षिपेत् ।

अंगुष्ठौ चालयेन्मध्ये मुद्रैषा मत्स्यरूपिणी ॥ ४८ ॥ विल्वत्सा तु विल्वमुद्रा प्रकीर्तिता ॥ ४९ ॥ इति अंगुष्ठमन्तरं कृत्वा पाण्योर्मुष्टिं विधाय च । संयोज्य मुद्रालक्षणानि ॥

इति श्रीमन्महाराजाधिराज श्रोत्रिय-द्विजराज मिथिलालङ्कार निःशङ्कशङ्कर शतशील श्री रमेश्वरसिंह शर्म बहादुर देवदेवानां कारिते धर्मरत्नाकरे आगमकल्लोले पण्डितवर गिरिधारिमिश्रपुत्रेण महामहोपाध्याय राजनाथमिश्रेण सङ्कलितं संक्षिप्तं तान्त्रिकमाह्निकम् पण्डितप्रवर-श्रीरमादत्तशुक्लपुत्रेण श्रीभद्रशीलशर्मणा पुनः सम्पादितं प्रकाशित च ॥

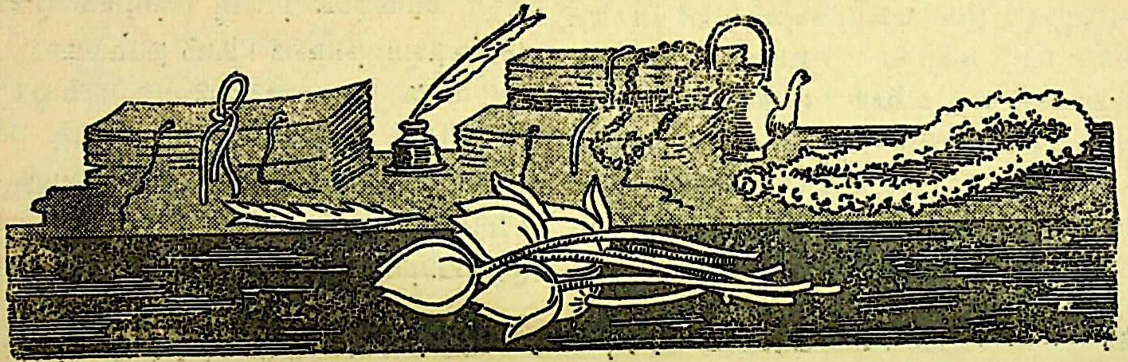

साधकोपयोगी सटीक पूजा-पद्धतियाँ

मूल्य

श्री काली-नित्यार्चन

३) रु०

श्री श्यामा पूजा-पद्धति

३) रु०

श्री तारा-नित्यार्चन

२॥) रु०

श्री श्रीविद्या-नित्यार्चन

३॥) रु०

श्री भुवनेश्वरी-नित्यार्चन

३) रु०

श्री बगला नित्यार्चनं

२) रु०

श्रीबाला-नित्यार्चन ३)

श्रीछिन्नमस्ता-नित्यार्चन २)

वैदिक श्रीबगला पूजा-पद्धति २)

शाक्तोपयोगी प्रकाशन

विशेष सूचना— पुस्तकें वी पी० से नहीं भेजी जातीं । अतः पुस्तकों
ा मूल्य कृपया मनिआर्डर से भेजें । मूल्य में रजिस्ट्री डाकव्यय हेतु
एक रुपया जोड़ दें । म० आ० मिलते ही पुस्तकें रजिस्टर्ड बुकपोस्ट से
भेजी जायँगी । पत्रोत्तर के लिए रुपया सदा जवाबी कार्ड भेजें ।

शाक्तधर्म पर प्रकाश डालनेवाली पुस्तकें

हिन्दी तन्त्रसार ८-००, हिन्दी कौलावली निर्णय ५-००, हिन्दी शाक्तानन्द तरंगिणी ३-५०, हिन्दी कुलार्णव २-५०, वाममार्ग ४-००, मंत्रसिद्धि का उपाय २-००, मातृ-उपासना २-५०, पञ्चमकार तथा भावत्रय ४-००, श्रीभगवती गीता ५-००, श्रीगायत्री तत्व विमर्श २-००, श्रीकाली स्वरूप तत्व २-००, श्रीतारा स्वरूप तत्व २-००, श्री श्यामासपर्या वासना ४-५०, श्रीकल्पद्रुम ५-५०, श्रीत्रिपुरा महोपनिषद् १-५०, मुद्राएँ एवं उपचार २-००, भैरवी चक्र पूजन १-००, मन्त्र पारायण-विधि २-००, श्रीनाथादि गुरुत्रयं ३-५०, साधक का संवाद ४-५०, धर्ममार्ग पर ४-००, मुमुक्षु मार्ग ६-००, धनप्राप्ति के प्रयोग १-५०, सन्तान सुख प्राप्ति के प्रयोग १-००, तान्त्रिक चांग २-०० ।

'श्री दुर्गा सप्तशती' से संबंधित पुस्तकें

सप्तशती रहस्य ३-५०, सप्तशती मीमांसा २-५०, दुर्गा सप्तशती (शब्दशः पद्यानुवाद) १-५०, चण्डी चरितावली ०-७५, शतचण्डी विधान ३-७५, चण्डिका माहात्म्य १-०० ।

ललित पद्यों में साधकों को उद्बोधक साहित्य

उपदेश मुक्तावली (भजन-संग्रह) ६-५०, दोहावली ०-५०, आरतिमाला ०-७५, श्रीभैरवोपदेश २-७५, विनय सुधा १-२५, कौल-कीर्तन १-२५, श्रीउच्छ्व गीतांजलि २-५० ।

पूजा-पद्धतियों की सहायता से ही व्यक्ति साधना कर सकता है, तत्सम्बन्धी उपयोगी पुस्तकें—

काली नित्यार्चन ४-००, श्रीश्यामा पूजापद्धति २-००, श्रीतारा नित्यार्चन ३-००, श्री श्रीविद्या नित्यार्चन ५-५०, श्रीबाला नित्यार्चन ४-००, श्रीभुवनेश्वरी नित्यार्चन ४-००, वैदिक श्रीबगलापूजा पद्धति २-००, श्रीबगला नित्यार्चन २०० ।

स्तोत्र-साहित्य साधना का एक विशेष अङ्ग है, उसकी पूर्ति करानेवाली पुस्तकें

श्रीबगला स्तव मंजरी २-५०, श्रीविद्या स्तव मंजरी ४-५०, श्रीकाली स्तव मंजरी ३-५०, श्रीतारा स्तव मंजरी २-५०, श्रीभुवनेश्वरी स्तव मंजरी ३-००, श्रीकमला स्तव मंजरी २-००, श्रीदुर्गा स्तव मंजरी २-५०, दकारादि श्रीदुर्गानाम साहस्रं ०-५०, सविधि आपदुद्धार वटुक भैरव स्तोत्रं ०-७५, सविधि काली कर्पूर स्तवः १-००, चक्रपूजा के स्तोत्र १-५०, आनन्दलहरी २-२५, सार्थ सौन्दर्यलहरी ५-५० ।

तन्त्र की प्राचीन दुर्लभ पुस्तकें

परातन्त्र २-००, मातृकाभेद तन्त्र २-५०, निरुत्तर तन्त्र ३-००, ज्ञानसंकलिनी तंत्र १-५०, तोडल तन्त्र १-५०, कुलार्णव तन्त्र ३-५०, मन्त्रकोष २-००, काली तन्त्र २-००, श्रीभुवनेश्वरी रहस्य ३-००, कामधेनु तन्त्र २-५०, नील तन्त्र २-००, निर्वाण तन्त्र २००, परशुराम तन्त्र १-००, सांख्यायन तन्त्र ३-००, संक्षिप्तं तान्त्रिकमाह्निकं ४-५०, श्री श्री विद्यार्णव तंत्र, प्रथम खण्ड (पूर्वार्द्ध) १५-०० ।

सभी धार्मिक व्यक्तियों के लिए उपयोगी

हिन्दुओं की पोथी ३-००, अक्षयवट ०-५०, वन्दे मातरम २-०० ।

कल्याण मन्दिर, अलोपीबाग मार्ग, प्रयाग—६